सागर और सरोवर

गुरुदत्त

सागर
और
सरोवर

सागर और सरोवर

प्रथम परिच्छेद

बात उस काल की है, जब अभी बदरीनारायण को जाने के लिए मोटर सड़क नहीं बनी थी। पगडण्डी थी और यात्री को हरिद्वार से चलकर यात्रा के ध्येयस्थान तक पहुचने मे बीस से चालीस दिन लगते थे। उत्तराखण्ड के चारों धामो की यात्रा के लिए तीन मास लग जाते थे।

ऐसी अवस्था मे यात्रा पर वे लोग ही जाते थे और फिर यात्रा को भली भाति समाप्त कर वे ही लौट सकते थे जो श्रद्धा और भक्ति से सराबोर होते थे। अनेकों मार्ग में ही दम तोड देते थे और पुनः घरवालो को देख नही पाते थे।

इसपर भी लोग जाते थे। जानेवालो मे युवा और युवतियों से वृद्धावस्थावाले अधिक होते थे। ऐसे भी अनेक देखे जाते थे जो रामेश्वरम् से बेंत की छड़िया बदरिकाश्रम मे नारायण की मूर्ति पर चढ़ाने के लिए ले जाते हों।

ऐसे ही यात्रियों मे सेठ जुगीमल की माता रामेश्वरी पति, पुत्र, पौते-पोतियों के मना करने पर भी यात्रा पर गई थी और जर्जर शरीर को लिए हुए अपने घर लौटी थी। घर पहुंचने का अन्तिम पडाव तो कहारों के कन्धों पर चढ़कर ही पूरा कर सकी थी।

जुगीमल कलकत्ता मे व्यापार करता था और अपनी पत्नी तथा बच्चों के साथ वहा ही रहता था। उसके माता-पिता अपने गाव खाटू, राजस्थान में रहते थे। रतनगढ से जोधपुर तक रेल की सड़क बन रही थी। रामेश्वरी देवी पचहत्तर वर्ष की आयु मे यात्रा समाप्त कर

ज्यों-त्यों कर रत्नगढ़ तक तो पहुंच गई, परन्तु आगे जाने की हिम्मत नहीं रही। पहले बैलगाड़ी में यात्रा आरम्भ हुई और खुनखुना तक पहुंचते-पहुंचते बैलगाड़ी के हिचकोलों को सहन करने की भी सामर्थ्य नहीं रही। खाटू में सेठ बनवारीलाल के द्वार पर चार कहारों से डोले में उठाई हुई पहुंची तो वह डोले से उतर नहीं सकी। उसका यात्रा का सामान बैलगाड़ी पर पीछे रह गया था। उसके साथ जानेवाला नौकर नन्दू भी बैलगाड़ी के साथ ही था।

रामेश्वरी ने एक कहार से कहा, "द्वार खटखटाओ।"

सेठ बनवारीलाल अपने कमरे में बैठा हिसाब गिन रहा था कि सेठानी को पिछले दिन पहुंच जाना चाहिए था। उसके न आने पर वह चिन्ता व्यक्त कर रहा था।

सेठानी का पत्र हरिद्वार से आया था, "यात्रा समाप्त कर यहां पहुंच गई हूं। सेठ सूरजमल की धर्मशाला में ठहर गई हूं और अमावस का स्नान कर यहां से चलने का विचार है। आशा करती हूं कि मरने से पहले आपके दर्शन कर सकूंगी।"

सेठ आज प्रातः से सेठानी की जन्मकुण्डली निकाल गणना कर रहा था और फिर हरिद्वार से खाटू पहुंचने में दिन लगने की गणना कर रहा था। सेठानी के हरिद्वार से आए पत्र को बार-बार पढ़ विचार कर रहा था। उसकी सब गणनाओं से उसकी पत्नी को उसके पास आ जाना चाहिए था और वह आई नहीं थी। दिन में कई बार घर से निकल वह लाठी की टेक लेता हुआ गांव के किनारे पर जा पूर्व से आ रही सड़क पर दूर तक देख आया था। अब तो सायंकाल हो रहा था।

वह आज भी निराश हो भीतर आकर पुनः अपनी गणना में लगा हुआ था कि द्वार खटखटाने का शब्द हुआ। बनवारीलाल ने नौकर को आवाज दी, "सुदामा! ओ सुदामा! देखना कौन आया है।" वह स्वयं भी उठा। कई बार गांव के किनारे तक जाने से वह थका हुआ था। सुदामा ऊपर की मंजिल पर था। वह भागा-भागा आया, परन्तु बनवारी उससे पहले द्वार तक पहुंच चुका था। कुण्डा सुदामा ने खोला और द्वार खोल सेठजी से पहले वह डोले के पास जा पहुंचा।

"मांजी!" सुदामा के मुख से निकल गया।

रामेश्वरी ने कह दिया, "थोड़ा पीने को जल लाओ।"

इस समय सेठजी भी डोले के पास पहुंच गए थे, "तो आ गई हो ?"

"जी ! आपके चरणों के प्रताप से आ पहुंची हूं।" उसने कहारों से कहा, "मुझे उठाओ।"

कहारों ने बुढ़िया को आश्रय दे उठाकर डोले में ही बैठा दिया। सुदामा जल ले आया। रामेश्वरी ने दो घूंट पिया और फिर कहारों का आश्रय ले उठ डोले से बाहर निकल लड़खड़ाते पगों के साथ मकान के भीतर को चल पड़ी।

इस समय तक आस-पास के लोग—स्त्री, पुरुष, बच्चे सेठानी के तीर्थयात्रा से लौटने का समाचार पा डोले के पास आ गए थे। सेठानी को लगभग उठाए हुए, कहार भीतर ले गए और जब तक वे सेठजी के कमरे में पहुंची, सुदामा ने पलंग लगा दिया था और उस पर बिस्तर बिछा दिया था।

सेठानी लेट गई तो उसने कृतज्ञता-भरी दृष्टि से अपने पति बनवारीलाल की ओर देखा। सेठ भी अपनी पत्नी के क्षीण हुए शरीर और ओजविहीन मुख को देख मन में विचार कर रहा था, "भला क्या लाभ है ऐसी यात्रा से ?"

कहार बाहर गए तो मुहल्ले-टोले की स्त्रियां-पुरुष भी एक-एक, दो-दो कर तीर्थयात्रा से लौटी सेठानीजी के चरण-स्पर्श कर जाने लगे। लोगों को जाने में आधा घण्टा लग गया।

जब सब लोग जा चुके तो बनवारीलाल एक चौकी पर बैठ गया और बोला, "बहुत बीमार रही हो ?"

"हां। दो बार मार्ग में श्वास छूटने ही वाला था। एक बार तो जोशी मठ के समीप विष्णु प्रयाग से जोशी मठ तक तीव्र चढ़ाई के समय दम टूटने लगा था। दूसरी बार रत्नगढ़ में दस्त लग गए थे। यह तो चमत्कार है कि आपको और भगवान को याद करती-करती यहां पहुंच सकी हूं।"

सेठ पलंग के समीप चौकी पर बैठा था, बोला, "अब तुम ठीक हो जाओगी। तुम्हारी जन्मपत्री में लिखा है कि तुम पचासी वर्ष तक इस संसार का सुख भोग करती हुई सोने की सीढ़ी से स्वर्ग में पहुंचोगी। मैं तो तुमसे पहले चल दूंगा।"

"अब कुछ भी अभिलाषा नहीं रही। मैं अमरनाथ की यात्रा पर

भी तो गई थी। तब तो आप भी साथ थे, परन्तु तब इतनी कठिनाई नहीं पड़ी थी।"

"बात भी तो बारह वर्ष पहले की है। तब तुम्हारी आयु बासठ-त्रेसठ वर्ष की थी। अब पचहत्तर की हो गई है।"

इसी समय सुदामा आ गया और बोला, "मांजी! घी में भूनकर खिचड़ी बना दी है।"

"अपनी बहू को बुलाओ। वह मेरे शरीर को गीले तौलिए से पोंछ देगी तो खा सकूंगी। रत्नगढ़ के उपरान्त स्नान नहीं किया।"

सुदामा की पत्नी रेवा आई तो सेठजी और सुदामा बाहर निकल गए। रेवा ने गरम जल में तौलिया भिगो सेठानीजी के शरीर को पोंछ डाला और फिर नये वस्त्र पहना, नया बिस्तर लगा उनको उसपर बैठा दिया।

बदन पोंछने से रामेश्वरी कुछ शक्ति का संचार हुआ समझने लगी थी। वह अब पलंग पर बैठी थी और सुदामा से लाई खिचड़ी को चम्मच से थोड़ा-थोड़ा खा रही थी। सेठ भी अपने लिए खिचड़ी ले वहीं आ गया।

खिचड़ी बाजरे की थी। यह वहां के धनी-मानी लोगों का मन-पसन्द खाना है और रामेश्वरी खाती हुई आभार अनुभव कर रही थी। उसने बहुत कम खिचड़ी खाई। इसपर भी हरिद्वार से चलने के उपरान्त पहली बार उसे समझ आया था कि वह अभी जी सकती है।

गांव में डाकखाना था। वहां से कलकत्ता को तार कर दिया गया कि उनकी माता तीर्थयात्रा से लौट आई है, बीमार है और तुम सबको मिलना चाहती है।

तार गया तो पीछे सेठजी ने अपनी पत्नी को बताया। वह घर की बनी खिचड़ी खाकर अपने में शक्ति का संचार अनुभव कर रही थी। सेठजी ने बताया कि उसने कलकत्ता तार दिया है, तो वह बोली, "इसकी क्या आवश्यकता थी?"

"तो जुग्गी से भी मोह नहीं रहा अब?"

"मोह अब आंखों और कानों का विषय नहीं रहा। न हीं यह समीप और दूर के अन्तर का विषय रह गया है।"

सेठजी ने न समझते हुए पूछ लिया, "क्या मतलब? ज़रा व्याख्या

से बताओ। पहले भी तुम कुछ ऐसी बातें करती रही हो जो मैं समझ नही सका था।"

"बात तो स्पष्ट है। जब जीवन का अन्त समीप दिखाई देने लगता है तो वे सब वस्तुए और बातें, जो शरीर और इन्द्रियों द्वारा पता चलती हैं, छूटने लगती हैं। जब शरीर की क्रियाए छूटती हैं तो फिर किसीका सामने होना अथवा परोक्ष मे होना, समीप होना अथवा दूर होना कुछ भी अर्थ नही रखता।"

"तो तुम्हारा अभिप्राय यह है कि तुम्हारा मोह अपने बच्चो से नही रहा।"

इसका यह मतलब कैसे हो गया ? देखिए, मोह तो मन और आत्मा का विषय है। यह तो है। हा, अब इन्द्रियो के द्वारा अनुभव न होकर मन और आत्मा के द्वारा अनुभव हो रहा है। इसमें किसी के यहा आने की आवश्यकता नहीं।"

"तो मेरे समीप आने की लालसा किसलिए रही है ?"

"यह मैं स्वयं नही समझ सकी। कुछ अन्तर तो दिखाई दिया है आपमें और जुग्गी मे।"

"अन्तर तो है। वह तुम्हारे शरीर का अग है और मैं कोई बाहरी व्यक्ति हूं।"

इसने रामेश्वरी को चुप करा दिया। कुछ देर तक वह अपने मन का विश्लेषण करती रही और जब अपने पति से मोह की विशेषता, विचित्रता और शरीर के अग पुत्रादि से अधिक सुदृढता का कारण नही समझ सकी तो बोली, "मैं बूढी हो गई हू और कदाचित् मेरा मस्तिष्क भी शरीर की भाति शिथिल पड रहा है। मैं आपके प्रश्न का उत्तर नही दे सकती।"

"तो जुग्गी और उसके बच्चों को आने दो।"

२

कलकत्ता मे जीवन इतना शान्त नही था जितना खाटू मे था। गाव के लोगो को शायद ही कोई काम दिन-भर मे रहता हो। लोग आराम से उठते थे। धीरे-धीरे स्नान-ध्यान से निवृत्त होते थे और

फिर खाना बनाने और खाने में लग जाते थे। मध्याह्न तक खा-पीकर कुछ आराम करने का विचार करने लगते थे। किसीको किसीसे मिलना हो अथवा दुकान पर जाना हो तो कुछ शीघ्रता कर लेता था।

यहां काम करने वाले दो प्रकार के व्यक्ति थे। पत्थर भूमि से निकलता था। मज़दूर निकालते थे और मज़दूरी पाते थे। वे आठ घण्टे नित्य काम करते थे। दूसरे लोग थे जो इस पत्थर का व्यापार करते थे। पत्थर के बड़े-बड़े टुकड़े भूमि के नीचे चट्टानों से फोड़-फोड़कर निकाले जाते थे और फिर उनको छील-छूलकर सम रूप देकर बैलगाड़ियों में लदवाकर दूर नगरों में भेज दिया जाता था। एक तीसरे प्रकार के लोग थे। वे काम करने वाले नहीं थे। उनके सगे-सम्बन्धी दूर नगरों में जा व्यापार करते थे और उनके भेजे रुपए पर वे जीवन व्यतीत करते थे। ये लोग थे जो निर्धनों को ऋण भी देते थे।

खेत यहां बहुत कम थे। कहीं-कहीं कोई टुकड़ा उपजाऊ होता था। परन्तु वह भी जल के अभाव से केवल वर्षा ऋतु में बरसे जल पर ही उपज दे सकता था। भूमि में कुआं नहीं खुद सकता था। कुछ फुट रेता की तह के नीचे पत्थर की चट्टान थी और भूमि के भीतर कितनी दूर तक गई थी कोई कह नहीं सकता था। इस कारण कुआं खोदने का प्रश्न नहीं था। रहने वालों के लिए पीने का जल भी वर्षा ऋतु में बड़े-बड़े हौदों में एकत्रित कर लिया जाता और वर्ष-भर पिया जाता था। प्रत्येक घर में ऐसे हौद बने हुए थे।

ऐसे कठोर स्थान पर रहने वाले नगरों में प्रायः सफल होते थे। ये लोग कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, रंगून में जाते और बाजरे की खिचड़ी खाते-खाते लाखों पैदा कर लेते थे।

इन लोगों में व्यापारिक प्रतिभा रहती होगी अथवा नहीं, कहना कठिन है। इतना तो निश्चय है ही कि काम भले ही अति छोटा हो अथवा कम आयवाला हो, इनकी आय सदा खर्च से अधिक रहती थी और ये अपनी बचत की आय को पूंजी का रूप देने में संलग्न रहते थे। इनके नगरों में जा धनवान हो जाने का एकमात्र रहस्य यह ही होता था—व्यय आय से सदा कम और बचत का प्रयोग पूंजी में करने की प्रवृत्ति।

यही बात जुग्गी, रामेश्वरी के एकमात्र पुत्र, की थी। जुग्गी अभी

चौदह वर्ष का था कि गांव से बाहर जा धनवान होने की लालसा करने लगा था। एक दिन वह मा से लड पड़ा था। वह बोला, "मा! माना कि तुम्हारा मुझसे बहुत अधिक प्रेम है, परन्तु इस प्रेम को क्या करूं जो इस गाव मे रेता फाकने के लिए बाध्य रही हो। बहुत अच्छी मा हो तुम, जो अपने पुत्र को बौना बना रखने में हठ कर रही हो!... मा! सुन लो! मैं आगामी त्रयोदशी को यहा से चल दूंगा।"

"कहा जाओगे?"

"मक्खनलाल के लडके के साथ जा रहा हू। वह दस वर्ष कलकत्ता में रह लखपति बन गया है। अब उसका बीकानेर के सेठ किशोरचन्द की लडकी से विवाह हुआ है। वह उसी दिन अपनी पत्नी के साथ कलकत्ता जा रहा है। उसने मुझे साथ ले चलने का वचन दिया है।"

मा का हठ टूटा और उसने कह दिया, "अच्छी बात है। मैं आज मक्खन की पत्नी से मिलकर बात करूंगी।"

"मां, पूछ लो। तुम्हारे दिल को तसल्ली हो जाएगी। मेरी तो तसल्ली है और मैं जा रहा हू।"

मा को एक बात ने जुग्गी को घर से बाहर भेजने पर राज़ी कर दिया। मक्खनलाल की पत्नी सीतारानी ने जब यह बताया, "नरेश घर से बीस रुपये लेकर गया था। वह कहता था कि यहा से तो वह रिवाडी तक पैदल ही गया था। वहा तक घर से दिए बाजरे के परमलों पर ही निर्वाह होता रहा। रिवाडी से दिल्ली तक रेलगाडी मे। दिल्ली मे एक आढत की दुकान पर माल ढोने का काम करते हुए एक महीने मे बीस रुपये इकट्ठे किए तो कलकत्ता जा पहुचा। कलकत्ता पहुचने पर उसकी जेब में तेईस रुपये पाच आने थे। वहा कुली के काम से प्रारम्भ कर अब बर्मा से चावल मगवाने और बेचने का काम करता है। इस वर्ष नरेश ने कलकत्ता की क्लाइव स्ट्रीट मे एक पुराना मकान मोल ले लिया है और अब उस स्थान पर एक पाच मंजिली हवेली बना ली है। हवेली में दस घरों के रहने के लिए चालीस कमरे, दस टट्टी-गुसलखाने हैं।

"पर बहिन रामेश्वरी! सबसे बड़ी बात यह है कि नरेश ने इस वर्ष पांच हज़ार धर्मादा निकाला है और उससे दस स्थान पर तो प्याऊ लगा दी है। ये सब प्याऊं रिवाड़ी से यहां तक के मार्ग पर हैं।"

यह अन्तिम बात थी, जिसने रामेश्वरी के मन मे उत्साह भर दिया

था। दान-दक्षिणा तो वह भी करती थी, परन्तु वह दान-दक्षिणा बीस-तीस रुपये वार्षिक से कभी अधिक नहीं हुई थी। वह मन में कल्पना करने लगी थी कि उसका जुग्गी भी क्या इतना धन धर्म के लिए व्यय कर सकेगा ? यत्न तो करना चाहिए। ऐसा विचार कर रामेश्वरी ने सीता से कहा, "जुग्गी नरेश के साथ जाने की बात कह रहा है।"

"मुझे पता नहीं। ठहरो, नरेश को बुलाती हूं और पूछती हूं।" सीता ने आवाज़ दे दी। "नरेश ! ओ नरेश !"

"हां, मां।" नरेश ने अपने कमरे में से मां के पुकारने का उत्तर दे दिया।

"ज़रा आना तो।"

"आया, मां।"

मां मुस्कराई और बोली, "अभी रात ही तो वहू घर आई है। अभी इसका वहू की संगत से मन-भरा नहीं मालूम होता।"

"तो पति का पत्नी से मन कभी भरता भी है ?" रामेश्वरी ने विस्मय में पूछ लिया।

"पतियों की बात तो अनुमान से ही कह रही हूं, परन्तु स्त्रियों की बात जानती हूं। नरेश के होने के बाद से तो मेरा मन भर गया प्रतीत होता है। कभी नरेश के पिता बहुत पीछे पड़ जाते हैं तो इन्कार नहीं कर सकती। वैसे मन सन्तुष्ट हो गया है।"

"ओह !" रामेश्वरी ने समझते हुए कहा, "तो तुम भोग की बात कर रही हो ? मैं तो संगत की बात समझ रही थी। संगत तो इसके अतिरिक्त भी रहती है।"

"रामेश्वरी बहिन, मतलब एक ही है। अन्त वहां ही होता है।"

रामेश्वरी को यह जीवन-मीमांसा ठीक प्रतीत नहीं हुई थी। परन्तु इस समय नरेश आ गया था और बात आगे नहीं चल सकी थी। सीता ने पुत्र से पूछा, "तुमने सेठ बनवारीलालजी के लड़के को साथ ले चलने की बात कही है क्या ?"

"हां, मां ! वह कहता था कि उसका चित्त इस वीरान स्थान पर रहते-रहते ऊब गया है। मैंने उसे साथ ले चलने की बात कही है।"

इस पर रामेश्वरी ने पूछ लिया, "बेटा ! उसे कितना खर्चा साथ ले जाने को कहते हो ?"

"मौसी, यहां से कलकत्ता तक का 'थर्ड क्लास' में जाने का सफर का खर्चा बीस रुपये है। यहां से रिवाड़ी तक बैलइक्का अर्थात् पैदल का खर्चा पृथक् है। खाने-पीने के लिए घर से बाजरे तथा चावल के परमल, नमक, लाल मिर्च और गुड़। शेष जितना व्यापार के लिए दोगी उतना ही शीघ्र वह उन्नति करेगा। अन्यथा दो-तीन वर्ष तक छोटे दर्जे का काम कर पूंजी एकत्रित करनी होगी। मैंने उसे सब समझा दिया है।"

"देखो बेटा नरेश! तुम्हारे भरोसे ही उसे भेज रही हूं।"

"भरोसा तो मौसी! परमात्मा का और अपनी हिम्मत का करना चाहिए। मैंने उससे कह दिया है कि मैं एक पैसे की भी सहायता नहीं दूंगा। अपने बल-बूते पर ही चलना होगा।"

इसपर भी रामेश्वरी ने मन में जुग्गी को नरेश के साथ भेजने का निश्चय कर लिया। वह उसके द्वारा धर्म-कर्म के लिए धन व्यय करवाने का विचार करती थी।

घर पहुंच उसने जुग्गी को तैयारी करने की स्वीकृति दे दी। सेठ इससे प्रसन्न नहीं था, परन्तु सेठानी धर्म-कर्म के लोभ का संवरण नहीं कर सकी। जुग्गी को जाते समय मां ने पैसा-पैसा कर एकत्रित किया अढ़ाई सौ रुपया दे दिया। जाते समय उसने लड़के से कह दिया, "देखो जुग्गी! यह रुपया मैंने पिछले पन्द्रह वर्ष में एकत्रित किया है और जब से विवाह कर इस घर में आई हूं, तुम्हारे पिता एक पैसा नित्य देते रहे हैं और वह मैंने सब यहां एकत्रित कर रखा है। यह जमा किया था वहीं धर्म-कर्म करने के लिए। अब इस आशा से कि इस रुपये से लाखों पैदा कर धर्म-कर्म में लगाओगे, तुमको सब दे रही हूं। जाओ, भगवान तुम्हारी सहायता करेगा।"

भगवान ने सहायता की थी। जुग्गी चौदह वर्ष की आयु में कलकत्ता गया था। उसका ठीक नाम तो जगन्नाथ बागड़िया था, परन्तु घर में और कलकत्ता में भी वह सेठ जुग्गीमल के नाम से ही विख्यात था।

अब जुग्गीमल ६० वर्ष की आयु का था। उसके घर तीन लड़के, दो लड़कियां और उनके घर में भी लड़के-लड़कियां हो गई थीं। बड़े लड़के माधवप्रसाद के बड़े लड़के सुभाष की पत्नी भी मां बनने वाली थी। इस सब विस्तार को देख रामेश्वरी सन्तुष्ट थी। वैसे लड़कियों

की ओर से तो उसकी चौथी पीढ़ी चल रही थी, परन्तु उनको रामेश्वरी दूसरों के घर का कल्याण करनेवालियां मान अपना नहीं समझती थी। लड़के-लड़कियां सब मिलाकर जुग्गी के परिवार में इस समय चालीस के लगभग प्राणी थे और बहुओं तथा दामादों को मिलाकर तो संख्या सत्तर से ऊपर हो जाती थी।

परिवार का व्यापार अब पटना, ढाका, जबलपुर, रंगून, मद्रास और बम्बई तक फैल गया था। जुग्गी विचार कर रहा था कि लन्दन में भी एक कोठी खोल दे।

करोड़ों रुपये वर्ष का व्यापार होने लगा था। लाखों की आय होने लगी थी। इस पर भी वह संयुक्त परिवार था और सबको, जो काम करते थे, वेतन मिलता था। आय सबकी सांझी थी। कोष एक था। सम्पत्ति सबकी सांझी थी।

जुग्गीमल सेठ नरेश से कहीं आगे निकल गया था। नरेश सट्टे-बाज़ी में फंस गया था और यह कार्य धूप-छांव के समान चलता था। जुग्गी ने सट्टा बाज़ार का मुख नहीं देखा था। उसकी उन्नति नियमित और एकान्त स्थिर उपायों से चलती रही थी।

पूर्ण परिवार का मुख्य कार्यालय कलकत्ता में था और वह जुग्गीमल के अधीन था।

सेठ जुग्गीमल कार्यालय में बैठा मद्रास से चावल बर्मा भेजने के लिए प्रबन्ध कर रहा था। मद्रास में परिवार के एक सदस्य सन्तराम को पत्र लिख रहा था कि तारवाला तार दे गया। जुग्गी ने पत्र लिखना छोड़ तार खोलकर पढ़ा। तार खाटू से आया था। जगन्नाथ को यह समझ आया कि मां का देहान्त होने वाला है। इसी कारण उसने देखने की इच्छा प्रकट की है। अतः उसने सब पुत्रों को, जो जहां था, तार भेज दिया। तार में लिखा था, "परिवार सहित खाटू पहुंचो, मां सख्त बीमार है।" ऐसे 'अर्जेण्ट' तार दे दिए गए और वह स्वयं मुन्शी को काम समझाकर घर जा पहुंचा। सुभाष सेठ का पोता और उसकी पत्नी गौरी अपने सास-श्वसुर तथा उनके माता-पिता जुग्गी और किशोरी के साथ रहते थे। नगर में लड़की मोहिनी और उसका परिवार भी था। कलकत्ता में यही लोग थे। शेष परिवार के लोग हिन्दुस्तान के

भिन्न-भिन्न नगरों में फैले हुए थे।

"किशोरी" जुग्गी ने अपनी पत्नी से कहा, "बाबा का तार आया है कि मा सख्त बीमार है और सबको देखना चाहती है।"

"तो ?"

"सब चलो। साय की गाड़ी में सीटें बुक कराने भेज दिया है।"

"कितनी सीटें बुक होंगी ?"

"गौरी और सुभाष नहीं जाएंगे। शेष सब जाएंगे। सूर्य, माधव, निर्मला, तुम और मैं। मद्रास, बम्बई, पूना, जबलपुर, पटना और रंगून तार दे दिए है।"

"गगा, इन्द्रा, मोहिनी इत्यादि को ?"

"मोहिनी तो यहीं है। टेलीफोन कर दिया है। इन्द्रा पटना में है। उसे तार दे दिया है। विष्णु विलायत में है। उसे सायकाल जाने से पूर्व 'केबल' कर दूंगा।"

इसके उपरान्त किशोरी तैयारी में लग गई।

३

यह सन् १९१३ का आषाढ़ मास था, जब रामेश्वरी उत्तराखण्ड की तीर्थयात्रा से लौटी थी और उसके घर पहुंचने के पांचवें दिन सेठ जुग्गीमल खाटू में आ पहुंचा था। मार्ग-भर वह विचार करता आ रहा था कि मा के दर्शन वह कर सकेगा अथवा नहीं।

जब उसका बैलतांगा खाटू में हवेली के बाहर खड़ा हुआ तो सेठ बनवारीलाल और सेठानी रामेश्वरी द्वार पर आ खड़े हुए। कलकत्ता से आठ प्राणी आए थे। इन्होंने तीन बैलतांगे किए हुए थे। सबसे पहले तांगे में जुग्गीमल, किशोरी और गगा का बच्चा, राम, बैठे थे। गंगा स्वयं नहीं आई थी। उसके बच्चा हुआ था और वह अभी प्रसूति-गृह में थी।

जब जुग्गीमल ने मा को द्वार पर खड़े देखा तो उसके मुह से अनायास ही निकल गया, "तो मां! तुम हो ?"

रामेश्वरी हंस पड़ी और बोली, "तुम मेरी अस्थिया चुनने आए हो ?"

इस समय जुग्गीमल ने मां के चरणों को छूकर पिता के चरणों को छुआ फिर किशोरी ने जब सास के चरण स्पर्श कर लिए, तो सास ने पतोहू की पीठ पर हाथ फेर प्यार देते हुए कहा, "तो मैंने तुमको निराश किया है न ?"

"नहीं मां !" उत्तर जुग्गी ने दिया, "हम अति प्रसन्न हुए हैं।" इस समय सब हवेली में जा पहुंचे थे। जुग्गी ने स्वीकार किया, "पिताजी के तार से तो जी डर गया था और मार्ग में भगवान से प्रार्थना करता आया हूं कि वे मां को हमारे पहुंचने तक तो जीवन-दान दे दें।"

"तो परमात्मा ने तुम्हारी सुन ली मालूम होता है ?"

"क्यों किशोरी, तुम क्या समझी थीं ?"

"मांजी ! कुछ समझने को समय ही कहां था। तार पहुंचा और हम जैसे थे, चल पड़े। हां, गाड़ी के हिचकोलों में अवश्य कुछ विचार करती रही हूं।"

सब कमरे में बैठ गए थे। रामेश्वरी ने किशोरी को अपने बगल में बैठा लिया था, "हां ! क्या विचार करती रही हो ?"

"यही कि मांजी को कलकत्ते में ले चलें।"

"अर्थात् यदि अब के बच गई तो फिर दोबारा हिचकोले न खाने पड़ें। यही न ?"

"हां मां जी ! बात तो कुछ यही थी। तुम तो स्वर्ग जाओगी और हमको डेढ़ हज़ार मील की रेल की खट-खट और बैलगाड़ियों की चक-चक नसीब होगी।"

"पर मैं स्वर्ग जाऊंगी ही, क्या ?"

"सब कहते हैं, मांजी। आपके घर में पर-परपोता तो हो गया है। यह राम", उसने अपने समीप बैठे तीन वर्ष के एक लड़के की ओर संकेत कर कह दिया, "गंगा का लड़का है।"

"और गंगा किसकी लड़की है ?"

"गंगा माधव की। वह अपनी पत्नी के साथ दूसरी बैलगाड़ी में आ रहा है। गंगा कहती थी मांजी के दर्शन करने को बहुत जी करता है। पर उसके पांच दिन का लड़का था। इस कारण नहीं आ सकी।"

"माधव तुम्हारा लड़का है और निर्मला जुग्गी की पतोहू है। यही न ? भला इसका स्वर्गप्राप्ति से क्या सम्बन्ध है ?"

उत्तर जुग्गी ने दिया, "मा ! इन बिल्ली-बलूगड़ों का स्वर्ग से सम्बन्ध है अथवा नही, कहा नही जा सकता। पर इतने सम्बन्धी रखना तो सौभाग्य की बात है और यदि सौभाग्यवान स्वर्ग नही जाएंगे तो क्या भाग्यहीन वहां जाएंगे ?"

"कितने सम्बन्धी हैं मेरे ?"

"माजी, आपके मायके की ओर से कितने हैं, वह तो आप ही बता सकती हैं। हा, अपनी ओर का हिसाब मेरे पास है। हम परिवार मे स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकायें, पतोहुएं और दामाद सब मिलाकर बहत्तर प्राणी हैं। सबके सब संयुक्त परिवार के सदस्य हैं। हमारी एक फर्म है और सब उसके सदस्य हैं। कुछ हैं जो काम नही करते। अन्य सब भागीदार होने के साथ-साथ उसमे काम भी करते हैं और वेतन भी पाते हैं। इस कारण सबके नाम दर्ज हैं।"

"तो पैदा होते ही वेतन देते हो ?"

"हा मा। पर उसे वेतन नही कहा जा सकता। उसका नाम भत्ता रखा है।"

"यह तो बहुत अच्छा किया है।"

"परन्तु माजी, सज्ञान होने पर यदि वह कम्पनी का काम न करे तो उसे कम्पनी का भागीदार तो मान लेते हैं पर कर्मचारी नही मानते।"

"यह तो ठीक ही है।"

इस समय दूसरी बैलगाडी हवेली के द्वार पर पहुंच गई थी। इसमें माधवप्रसाद, उसकी पत्नी निर्मला और उनके साथ एक बच्चा था। यह लड़की थी इन्द्रा की। नाम था सुग्गी। इसकी अवस्था इस समय दस वर्ष की थी।

"यह कौन है ?" रामेश्वरी ने लड़की की ओर संकेत कर पूछ लिया।

"यह मेरी लड़की इन्द्रा की लड़की है, सुग्गी," जुग्गीमल ने बता दिया।

"ठीक है, यह भी इन्द्रा की भाति ही लम्बी-पतली है।"

ये आकर अभी बैठे ही थे कि तीसरी बैलगाड़ी आ पहुंची। इसमें मोहिनी और उसका घर वाला रामस्वरूप तथा उन दोनों की लड़की सुभद्रा थी। सुभद्रा का विवाह भी हो चुका था पर उसका पति नहीं आया था।

इनका परिचय भी हुआ। रामेश्वरी ने मोहिनी से पूछ लिया, "क्यों मोहिनी, तुम क्या समझती थीं कि मैं अब तक मर चुकी हूंगी ?"

"भापा का टेलीफोन आया तो कुछ ऐसा प्रतीत हुआ था कि हमको यहां से हरिद्वार जाना पड़ेगा।"

रामेश्वरी ने अपने पति की ओर देखकर कहा, "देखो जी। मैंने कहा नहीं था कि तार देकर अच्छा नहीं किया। इन सबको अपना काम-काज छोड़कर सहस्रों मील की यात्रा करनी पड़ी है और बेचारों को बैलगाड़ी के हिचकोले अलग खाने पड़े हैं।"

मोहिनी ने कहा, "मैं तो समझती हूं कि बाबाजी ने बहुत ही अच्छा किया है। कलकत्ता की गंदगी से निकलने का और थोड़ी शुद्ध-पवित्र हवा में सांस लेने का अवसर मिला है।

"सुभद्रा के पिता तो कभी कलकत्ता से निकलते ही नहीं थे। जब से विवाह हुआ है, इनके कमरों में कैद पड़ी रहती हूं। पड़ोसी सब बंगाली हैं और उनके घरों में मछली की दुर्गन्ध के अतिरिक्त और कुछ मिलता ही नहीं।"

"अच्छी बात है, मोहिनी। तुम यहां रहो, जब तक तुम्हारा मन करे।"

यह परिवारवालों का आना इन तीन बैलगाड़ियों के उपरान्त भी रुका नहीं। उस दिन सायंकाल तक दो बैलगाड़ियों में और लोग आए। अगले दिन पटना, मद्रास से कुछ लोग आए और फिर बम्बई से और दिल्ली और लखनऊ से भी परिवार के सदस्य आ पहुंचे। रंगून से जुग्गीमल का दूसरा लड़का, श्यामसुन्दर, अपनी पत्नी नन्दिनी और पुत्र-पौत्रों को साथ लेकर आ गया।

यह आनेवालों का क्रम सात दिन तक चलता रहा। एक दिन बनवारी ने कहा भी, "जुग्गी, अब शेष परिवार के लोगों को किसलिए कष्ट देते हो ? तार भेजकर बता दो, 'मां जी ठीक हैं और सबको अपना आशीर्वाद देती हैं।"

पर जुग्गीमल के मन में एक बात आते-आते पैदा हुई थी। वह समझ रहा था कि मां के तेरहवें के दिन घर की कम्पनी के सब सदस्यों की बैठक कर लेगा। अब मां के जीवित ही उसके सम्मुख कम्पनी की बैठक करने का विचार बना हुआ था। इस कारण उसने यहां की सूचना का

कोई तार अथवा पत्र नहीं भेजा।

कलकत्ता और अन्य स्थानों पर रह गए परिवार के सदस्य किसी प्रकार की सूचना न आने पर यह समझे थे कि माजी बहुत कष्ट में हैं और सब लोग वहां उनके प्राण छूट जाने की प्रतीक्षा में ठहरे हैं और किसी प्रकार का समाचार नहीं भेज रहे।

परिणाम यह हुआ कि वे लोग भी अपने-अपने बाल-बच्चों के साथ राजस्थान की दुष्कर यात्रा पर चल पड़े।

बनवारीलाल के तार भेजने के तेरहवें दिन तक तो परिवार के सभी सदस्य वहां आ पहुंचे। यहां तक कि गंगा भी अपने छोटे बच्चे लक्ष्मण को गोदी में लिए हुए अपने पति परशुराम के साथ वहां आ पहुंची।

जब गंगा लक्ष्मण के साथ पहुंची तो जुग्गी ने कह दिया, "लो मा, अब तो तुम्हारी सन्तान में से कोई भी बाहर नहीं रहा। केवल विष्णु रह गया है और उसका लन्दन से 'केबल' आ गया है।"

"कल से मैं यह विचार कर रही हूं कि इतना कष्ट दिया है इन सबको और यदि अब भी नहीं मरी तो बहुत ही लज्जा की बात है।"

"राम ! राम ! मां, यह क्या कह रही हो ? मैंने तो जान-बूझकर इन सबको यहां एकत्रित होने के लिए मौन साधा हुआ था। बाबा ने तो कहा था कि तुम्हारा आशीर्वाद और स्वस्थ हो जाने का समाचार सबको भेज दूं, परन्तु मैंने विचार किया कि किसी बहाने से एकत्रित हो रहे हैं तो होने दूं, जिससे माजी समझ जाएं कि उनके अढ़ाई सौ रुपये का कितना प्रताप है।"

"सब व्यर्थ है," रामेश्वरी ने अपने पति की ज़रा-सी भूल से इतने लोगों को आषाढ़ की गरमी में खाटू में इकट्ठे होने का कष्ट करने पर कह दिया। उसे भारी लज्जा लग रही थी।

रामेश्वरी ने जुग्गी को बताया भी, "कल तुम्हारे बाबा को मैंने कुछ ताड़ना भी की थी कि कितना रुपया और परिश्रम व्यर्थ गंवाया है!"

"पर मां, आनेवाले तो सब प्रसन्न हैं। कोई भी तो नहीं कह रहा कि उसका समय अथवा धन व्यर्थ गया है।"

"हां, मोहिनी तो कह रही है कि उसने अपने घरवाले से कह दिया है कि वह अब कम से कम छः मास यहां रहेगी।"

जुग्गीमल हंस पड़ा। वह बोला, "मां, कल मैं गांव में एक बहुत बड़ा ब्रह्मभोज करनेवाला हूं।"

"पर वह तो मेरे मरने के उपरान्त होनेवाला था।"

"नहीं मां, यह मरने के पीछेवाला भोज नहीं। यह तो तुम्हारी सफल तीर्थयात्रा करने का भोज होगा। मैंने यहां से बीस-बीस मील के ब्राह्मणों को भोज पर आमन्त्रित किया है और सब गांववालों को बुलाया है। बाल, वृद्ध, युवा सब मिलाकर दो सहस्र के लगभग खाने पर आएंगे।

"कल दस बजे तक हवन समाप्त होगा, फिर भोजन होगा। पहले हवन करनेवाले ब्राह्मण ऋत्विक् भोजन करेंगे। तदुपरान्त उनके परिवारवाले और बारह बजे से चार पंक्तियों में ठाकुर, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज भोजन करेंगे।"

मां इस प्रकार के आयोजन पर प्रसन्न हो गई। वह बोली, "तब तो मैं अभी कल तक नहीं मरूंगी।"

"पर मां, तुम मरोगी ही क्यों ?"

"मुझे तुम सबको यह कष्ट करते देख लज्जा और आत्मग्लानि हो रही थी।"

"इस शुभ कार्य पर तो तुमको आत्मसन्तोष होना चाहिए।"

"हां, पर तुमने मुझे यह बात पहले क्यों नहीं बताई ?"

"मैं ज़रा अपनी सन्तान की परीक्षा ले रहा था। मैं देखना चाहता था कि इनमें परस्पर स्नेह कितना है ?"

"तो अब परीक्षा हो गई है क्या ?"

"हां, मां। मेरे परिवार के सब लोग, पन्द्रह दिन के बच्चे तक, आ गए हैं, तो मेरा चित्त गद्‌गद हो गया है। मैंने अपने मन की बात बाबा को कल बताई थी और उनकी स्वीकृति होने पर प्रबन्ध आरम्भ कर दिया है।"

"अब तो मुझे जीने में रस प्रतीत होने लगा है।"

"हां, मां, जब तुम सौ वर्ष की हो जाओगी तो फिर इससे भी बड़ा यज्ञ और भोज करूंगा।"

"जुग्गी, अब और प्रलोभनों में मत डालो। इतना ही पर्याप्त है।"

इस सब जमघट में कुछ नई मिट्टी के जीव भी थे। इस भीड़-भाड़ में बनवारीलाल की हवेली परिवार के सदस्यों से खचाखच भर गई थी। वहां रात को सब छत पर सोते थे, परन्तु आधी रात के उपरान्त बहुत सर्दी हो जाती थी और फिर जिसके जहां सींग समाते नीचे कमरों मे चले जाते थे।

श्यामसुन्दर के लड़के गजाधर ने रंगून कालिज में पढ़ते हुए एक बर्मी लड़की से विवाह का निश्चय किया और फिर अपने पिता पर दबाव डाल उससे विवाह कर लिया था। इस संयोग का फल एक लड़की और एक लड़का थे। लड़की का नाम ललिता और लड़के का सिद्धेश्वर था। लड़की तीन वर्ष की थी और लड़का अभी एक ही वर्ष का था।

अभी लोग आ ही रहे थे कि एक रात गजाधर की पत्नी सर्दी अनुभव कर उठी और नीचे अपनी सास नन्दिनी के कमरे मे चली गई। कमरे में अन्धेरा था। वह बच्चे को लेकर फर्श पर ही एक कोने मे लेट गई। उसे सोये अभी दस मिनट भी नहीं हुए थे कि कोई आया और उससे चिपट कर सो गया। लक्ष्मी, यह गजाधर की पत्नी का नाम था, समझी कि उसका पति सर्दी निकालने के लिए उसके साथ चिपट रहा है। उसने उसकी सर्दी मिटाने के लिए उसे अपने समीप खिसका लिया।

प्रातःकाल जब ऊषा का प्रकाश कमरे में आने लगा था तो बच्चे ने हिलना-डोलना आरम्भ किया। लक्ष्मी ने समझा कि बच्चे को पेशाब करना है। अतः वह अपने स्थान से उठी और बच्चे को कमरे के बाहर नाबदान पर पेशाब कराने ले गई। उसे पेशाब करा वह बच्चे को लेकर पुनः कमरे में आ लेटने लगी तो उसने अपने समीप लेटे पुरुष को देखा। वह उस अर्ध प्रकाश में भी देख सकी थी कि वह उसका पति नहीं। यह जान वह स्तब्ध रह गई। उसने रात न केवल उससे आलिंगन ही किया था, वरन् कुछ और दूर तक भी वह चली गई थी।

वह वहां से उठ किसी अन्य कमरे में भाग जाना चाहती थी कि बच्चे ने रोना आरम्भ कर दिया। वह अब कुछ खाने को मांगने लगा था। साथवाला व्यक्ति भी बच्चे के रोने का शब्द सुन जाग पड़ा और

कर बैठ गया। उसने जब उस बर्मी लड़की लक्ष्मी को वहां से ब…
लेकर भागते देखा तो खिलखिलाकर हंस पड़ा।

लक्ष्मी कितनी ही देर तक मकान की छत पर बैठी बच्चे को चुप कराने का यत्न करती रही। रामेश्वरी तो बहुत प्रातः उठ पड़ती थी। वह बच्चे के रोने का शब्द सुन छत पर बरसाती में से उठ बाहर आ गई और बच्चे की मां के पास आकर बोली, "इसे सर्दी से भीतर ले चलो न।"

"पर मांजी, यह भूखा है।"

"अरे! तो इसे दूध दो। अच्छा ठहरो।" रामेश्वरी ज़ीने के पास जा नन्दू को आवाज़ देने लगी। नन्दू ने पूछा, "मांजी, क्या है?"

"एक बच्चे के लिए थोड़ा दूध गरम कर ले आओ।"

दूध आया तो लक्ष्मी का बच्चा चुप होकर फिर सोने लगा। अब वह अपने घरवाले को ढूंढ़ने लगी। वह रामेश्वरी के कमरे में ही सोया हुआ था। वहां जा वह बच्चे को सुलाने लगी।

उस दिन मध्याह्न का भोजन कर वह अपने पति के पास बैठी वापस जाने की बात पर विचार कर रही थी कि वही रातवाला व्यक्ति गजाधर के पास आ बैठा और पूछने लगा, "गजाधर, सुना है रंगून एक अति सुहावना नगर है।"

"हां, बहुत सुन्दर भी है और बहुत गन्दा भी है। सुन्दर तो नगर का धनी भाग है। नदी के तट पर मीलों लम्बा घाट है और सैर करने वाले उस घाट पर से नदी का मनोरम दृश्य देख-देख पुलकित होते रहते हैं।"

"और सुना है कि वहां की स्त्रियां भी बहुत सुन्दर हैं?"

"उसका एक नमूना तो मैं अपने परिवार में भी ले आया हूं। दादा, यह लक्ष्मी है। इसका विवाह से पहला नाम ली-नू था। भापा ने कहा, 'यह लक्ष्मी होगी।' मैंने इससे पूछा तो यह बोली, 'जो मन करे बुला लो। यह व्यर्थ का मोह है।'"

"बहुत खूब, भाभी।" उसने लक्ष्मी को सम्बोधन कर कहा, "तो यथार्थ मोह किससे होता है?"

लक्ष्मी मन ही मन लज्जा अनुभव करती हुई गोदी में सिद्धू की ओर देख रही थी। उसके मुख पर लाली दौड़ रही थी। उत्तर गजाधर ने दिया, "यह मुझसे बहुत प्रेम करती है। इसने मुझको दो अति सुन्द

बच्चे दिए हैं।"

"हां, अपने जैसे ही तो बच्चे दे सकती थी। देखो भाभी, मेरे तो पिता ने मुझे एक असुन्दर बीवी ले दी है। यदि भाभी, तुम अपने जितनी सुन्दर पत्नी वहा दिलवा दो तो समुद्र पार कर मैं वहा भी आ सकता हूं।"

लक्ष्मी चाहती थी कि उसे कहे कि वह वहा आएगा तो उसकी जूतियों से मरम्मत की जाएगी, परन्तु वह चुप थी। उसे भय लग रहा था कि यह कहीं रातवाली सब बात उसके पति के सम्मुख बक न दे।

इसी समय रामेश्वरी ऊपर बरसाती में आई और बोली, "तुम लोग इतनी गर्मी मे यहां बैठे क्या कर रहे हो? नीचे चलो न।"

"मांजी," वही युवक बोला जो लक्ष्मी को बुला सकने में असफल हुआ था, "अभी तो रात की सर्दी भी अंगों में से नही निकली। मांजी, मैं भाभी से कह रहा हूं कि यदि अपने जितनी सुन्दर पत्नी वहा ले देने का वचन दें तो मैं रगून आऊगा।"

"और तुम्हारी बहू को क्या हुआ है, सुमेर?" यह उस युवक का नाम था।

"मांजी, वह खाती बहुत है।"

"और तुम्हारा दिवाला पिट रहा है!"

"दिवाले की बात नही। वह अधिक खा-खाकर मोटी होती जा रही है।"

"कितने वर्ष हुए हैं तुम्हारा विवाह हुए?"

"मांजी, अभी तो छः महीने भी नहीं हुए।"

"और अभी से उससे ऊब गए हो?"

"ऊब तो नही गया, पर वह है भाभी से कम सुन्दर।"

"तो भाभी तुमको पसन्द आ गई है?" रामेश्वरी को क्रोध आने लगा था।

"पसन्द तो है, मांजी। परन्तु भाभी है न! जरा हंसी भी तो करनी चाहिए?"

"अच्छा, अपनी बीवी को बुलाओ। देखो, तुम्हारे अभी कान खिचवाती हूं।"

"वह तो यहा है नहीं। वह अपने मायके गई हुई थी, इसलिए

आ नहीं सकी। परन्तु मांजी के यहां आने से तो सत्य ही यहां गर्मी लगने लगी है। गजाधर, चलो नीचे। मांजी शायद तुम्हारी बहू से कुछ बात करना चाहती है।"

"सच मांजी ?" गजाधर ने रामेश्वरी से पूछ लिया।

"हां, पर तुम और तुम्हारी पत्नी दोनों से ही बात करनी है।"

"तो मैं जाऊं ?" सुमेर ने पूछ लिया।

"सुमेर, तुम्हारे पिता तुमको नीचे बुला रहे हैं।"

सुमेर उठकर मुख लटकाए हुए नीचे चला गया।

वह जब सीढ़ियां उतर गया तो मांजी ने कह दिया, "गजाधर, सुमेर लक्ष्मी से हंसी-मज़ाक कर रहा था और यह बेचारी लाल-पीली होती जाती थी और तुम बुद्धुओं की भांति हंसते चले जा रहे थे।"

गजाधर को अब समझ आया कि सुमेर उसकी पत्नी से प्रेम प्रकट कर रहा था। उसके माथे पर त्योरी चढ़ गई। फिर एकाएक उसने अपनी पत्नी से पूछा, "तो तुम लाल-पीली क्यों हो रही थीं ? तुम......"

बात रामेश्वरी ने बीच में ही काटकर कहा, "तुम्हारी माता कह रही है कि रात भी वह इस बेचारी को तंग करता रहा है।"

"तो तुम्हें उसकी जूतों से मरम्मत करनी थी।"

लक्ष्मी चुप रही। वह नहीं जानती थी कि उसकी सास को कितना मालूम है और कितना उन्होंने बड़ी मां को बताया है।

बात रामेश्वरी ही चला रही थी। उसने लक्ष्मी के स्थान पर कह दिया, "देखो गजाधर, सुना है इसके देश में स्त्रियां पुरुषों से ज़बरदस्त होती हैं। वे सब काम करती हैं और पुरुष बैठे हुक्का पीते हैं। इसपर भी मैं बता दूं कि स्त्री कुछ बातों में पुरुष से सदा दुर्बल होती है। इस कारण यह पुरुष का कर्तव्य है कि वह उसकी रक्षा करता रहे।

"पर रक्षा का मतलब यह नहीं कि चलते-फिरतों से मुक्का-मुक्की होती रहे। मेरा मतलब यह है कि हमारे यहां जब कोई पुरुष किसीकी पत्नी के सौन्दर्य की प्रशंसा करने लगे तो उस औरत के पति का कर्तव्य हो जाता है कि वह प्रशंसा करनेवाले को रोक दे।

"रोकने के कई तरीके हैं। यह तो उसे अपनी बुद्धि से विचार करना चाहिए कि किस परिस्थिति में कौन-सा उपाय ठीक है।"

एकाएक रामेश्वरी ने बात बदल दी। उसने कहा, "मैं लक्ष्मी को

नीचे लिए जा रही हूं। तुम पुरुषों में जाकर बैठो। मैं अपनी युवा बहुओं से बातचीत कर अपने बुढ़ापे में रस भरना चाहती हूं।"

इस प्रकार बात समाप्त होती देख लक्ष्मी ने सुम्र का नाम लिया और गजाधर समझ गया कि उसकी परदादी अपने परपोते की बहू से अलग बात करना चाहती है। वह उठा और सुमेर के पीछे-पीछे चला गया।

रामेश्वरी ने लक्ष्मी से कहा, "देखो, नीचे जाने से पहले मैं तुमको एक बात समझा देना चाहती हूं। कभी कोई मनुष्य अन्धेरे में ठीक मार्ग पर चलता-चलता सड़क के किनारे की नाली में पांव पड़ जाने से गन्दगी में भर जाता है। बुद्धिमान मनुष्य न तो वह गन्दगी आने-जाने वालों को दिखाते फिरते हैं, न ही वे उस गंदगी को अपने शरीर का अंग समझने लगते हैं। बुद्धिमान लोग नाली से निकल किसी कुएं पर जाकर अपने पांव और शरीर को धो डालते हैं और पुनः कभी फिर अन्धेरे में चलना हो तो हाथ में लालटेन लेकर चलते हैं।"

लक्ष्मी समझ रही थी कि माजी सब बात जान गई हैं और वे भूल का कारण भी जान गई हैं। वह उन्हें इस प्रकार एक उपमा से बात समझाते सुन मन में कृतज्ञता से भर गई। उसने उनके चरण स्पर्श कर कह दिया, "मांजी, अब लालटेन से मार्ग देख-देखकर चलूंगी। मुझे पता नहीं था कि यहां की सड़क के किनारे गन्दी नालियां भी हैं।"

रामेश्वरी ने लक्ष्मी की पीठ पर हाथ फेर प्यार दिया और कहा, "चलो, मेरी सब बहुएं और लड़कियां, पोतियां, दोहतियां एक दूसरे देश की बहू से बातें करने की इच्छा कर रही हैं।"

नीचे घर की सब स्त्रियां इस बर्मी लड़की से बातचीत करने के लिये एकत्रित हो रही थीं। गजाधर नीचे गया तो अपने बाबा जुग्गीमल के पास जा बैठा। जुग्गीमल के मन में ब्रह्मभोज का विचार उत्पन्न हो चुका था और वह उसके विषय में योजना बना रहा था। गजाधर को आया देख वह बोला, "इधर आओ, गजाधर। यह ले कलम-दवात। जरा लिखो। मैं लिखाता हूं।"

"ग्यारह पुरोहित यज्ञ करने वाले—इक्यावन रुपये प्रत्येक के कुल पांच सौ इकसठ रुपये।

"आगे लिखो। पचास ब्राह्मण—ग्यारह रुपये

पांच सौ पचास रुपये ।

"ब्राह्मणों के परिवार के अढ़ाई सौ प्राणी—दो रुपये प्रत्येक। कुल पांच सौ रुपये ।

"गांव की छोटी जाति के सब बाल, वृद्ध, युवा, पुरुष, स्त्री एक सहस्र प्राणी—एक रुपया प्रत्येक को। कुल एक सहस्र रुपये ।

"और लिखो। तुम्हारे बाबा और दादी—एक सौ एक रुपये। कुल दो सौ दो रुपये ।

"तुम्हारे पिता तथा उसके भाइयों और उनकी घरवालियों को—प्रत्येक को इक्यावन रुपये। सब छः प्राणी। कुल रकम तीन सौ छः रुपये ।

"तुम्हारे पिता की बहिनें और उनके घरवाले। चार प्राणी—एक सौ एक रुपये प्रत्येक के लिए। कुल चार सौ चार रुपये ।

"शेष घर के सब प्राणियों के तीन भाग। विवाहित, अविवाहित और विवाहितों में लड़कियां और दामाद। उनमें अविवाहित लड़के-लड़कियां हैं तीस—सबको ग्यारह-ग्यारह रुपये। कुल तीन सौ तीस रुपये ।

"शेष में दस लड़कियां और दस दामाद—सबको इक्कीस-इक्कीस रुपये। चार सौ बीस रुपये। विवाहितों में सोलह लड़के और सोलह उनकी बहुएं—सबको पन्द्रह-पन्द्रह रुपये। सब चार सौ अस्सी रुपये।

"अच्छा अब इनका जोड़ करो तो।"

गजाधर ने जोड़कर बताया, "बाबा चार हज़ार सात सौ त्रेपन रुपये।"

"लिखो। पांच हज़ार रुपया दान-दक्षिणा ।

"भोज में दो सहस्र खाने वाले—आठ आना प्रति व्यक्ति। कुल एक सहस्र ।

"दरी, शामियाने, हलवाई, नौकरों को पारिश्रमिक इत्यादि पांच सौ रुपये ।

"फुटकर दो सौ।

"सब जोड़ करो।"

गजाधर ने जोड़ किया। छः सहस्र सात सौ रुपये ।

"अच्छा यह सब बड़ी मांजी को बता दो।"

"पर बाबा, वे तो अपनी बहुओं से बात कर अपने जीवन में रंग भर रही हैं ।"

"तो जरा ठहर जाओ । यह उनको बताकर कहना कि मैं कहता हूं कि इतना तोशाखाने से निकलवा दें ।"

"तो मांजी के पास इतना रुपया है ?"

"अरे इससे भी बहुत अधिक है । जाओ ।"

५

जुग्गीमल ने परिवार के अन्य युवकों को काम पर लगा दिया । ब्रह्मभोज के दिन प्रातः चार बजे तक सब सामान तैयार था । हवेली के पिछवाड़े खुला मैदान था । मैदान साफकर उसपर शामियाने लगवा, दरियां बिछवा खाने के लिए कई स्थान बनवा दिए थे । एक स्थान पर यज्ञमण्डप था, वहां हवन का प्रबन्ध पूरा हो गया था ।

जुग्गीमल ने नन्दू को बुलाया और गांव के मन्दिर का घड़ियाल मंगवाकर चार बजे बजवाना आरम्भ कर दिया । जब तक सब छोटे-बड़े जाग नहीं पड़े, घड़ियाल बजता रहा ।

इसके उपरान्त सब शौचादि से निवृत्त हो शिशुओं को दूध पिला यज्ञवेदी में जा बैठे । सेठ बनवारीलाल और रामेश्वरी यजमान की गद्दी पर बैठ गए और अन्य परिवार के सदस्य उनके पीछे बैठ गए । पश्चिमाभिमुख ऋत्विक् और सबसे बड़ा पण्डित ब्रह्मा की गद्दी पर उत्तराभिमुख बैठ गया ।

गांव के लोग भी घड़ियाल का शब्द सुन उठे और जल्दी-जल्दी स्नानादि से निवृत्त हो यज्ञ में वेदी के चारों ओर आकर बैठ गए । ठीक छः बजे वेदपाठ आरम्भ हुआ और साढ़े नौ बजे यज्ञ की पूर्णाहुति हुई ।

ब्रह्मा ने सेठानीजी के लिए भगवान से प्रार्थना की, "भगवान, सेठानीजी को सौ वर्ष तक सौभाग्यवती रख संसार में पुण्य संचय करने का अवसर दें । इनके परिवार में वृद्धि हो । इनके धन-धान्य में वृद्धि हो और इनके तथा परिवार के सब प्राणियों की धर्म-कर्म में प्रवृत्ति हो ।"

यज्ञ की समाप्ति पर सबने सेठ तथा सेठानीजी को बधाई दी ।

पांच सौ पचास रुपये।

"ब्राह्मणों के परिवार के अढ़ाई सौ प्राणी—दो रुपये प्रत्येक। कुल पांच सौ रुपये।

"गांव की छोटी जाति के सब बाल, वृद्ध, युवा, पुरुष, स्त्री एक सहस्र प्राणी—एक रुपया प्रत्येक को। कुल एक सहस्र रुपये।

"और लिखो। तुम्हारे बाबा और दादी—एक सौ एक रुपये। कुल दो सौ दो रुपये।

"तुम्हारे पिता तथा उसके भाइयों और उनकी घरवालियों को—प्रत्येक को इक्यावन रुपये। सब छः प्राणी। कुल रकम तीन सौ छः रुपये।

"तुम्हारे पिता की बहिनें और उनके घरवाले। चार प्राणी—एक सौ एक रुपये प्रत्येक के लिए। कुल चार सौ चार रुपये।

"शेष घर के सब प्राणियों के तीन भाग। विवाहित, अविवाहित और विवाहितों में लड़कियां और दामाद। उनमें अविवाहित लड़के-लड़कियां हैं तीस—सबको ग्यारह-ग्यारह रुपये। कुल तीन सौ तीस रुपये।

"*शेष में दस लड़कियां और दस दामाद—सबको इक्कीस-इक्कीस* रुपये। चार सौ बीस रुपये। विवाहितों में सोलह लड़के और सोलह उनकी बहुएं—सबको पन्द्रह-पन्द्रह रुपये। सब चार सौ अस्सी रुपये।

"अच्छा अब इनका जोड़ करो तो।"

गजाधर ने जोड़कर बताया, "बाबा चार हज़ार सात सौ त्रेपन रुपये।"

"लिखो। पांच हज़ार रुपया दान-दक्षिणा।

"भोज में दो सहस्र खाने वाले—आठ आना प्रति व्यक्ति। कुल एक सहस्र।

"दरी, शामियाने, हलवाई, नौकरों को पारिश्रमिक इत्यादि पांच सौ रुपये।

"फुटकर दो सौ।

"सब जोड़ करो।"

गजाधर ने जोड़ किया। छः सहस्र सात सौ रुपये।

"अच्छा यह सब बड़ी मांजी को बता दो।"

"पर बाबा, वे तो अपनी बहुओं से बात कर अपने जीवन मे रस भर रही हैं।"

"तो जरा ठहर जाओ। यह उनको बताकर कहना कि मैं कहता हूं कि इतना तोशाखाने से निकलवा दें।"

"तो माजी के पास इतना रुपया है?"

"अरे इससे भी बहुत अधिक है। जाओ।"

५

जुग्गीमल ने परिवार के अन्य युवकों को काम पर लगा दिया। ब्रह्मभोज के दिन प्रात चार बजे तक सब सामान तैयार था। हवेली के पिछवाड़े खुला मैदान था। मैदान साफकर उसपर शामियाने लगवा, दरियां बिछवा खाने के लिए कई स्थान बनवा दिए थे। एक स्थान पर यज्ञमण्डप था, वहां हवन का प्रबन्ध पूरा हो गया था।

जुग्गीमल ने नन्दू को बुलाया और गाव के मन्दिर का घड़ियाल मंगवाकर चार बजे बजवाना आरम्भ कर दिया। जब तक सब छोटे-बड़े जाग नहीं पड़े, घड़ियाल बजता रहा।

इसके उपरान्त सब शौचादि से निवृत्त हो शिशुओं को दूध पिला यज्ञवेदी में जा बैठे। सेठ बनवारीलाल और रामेश्वरी यजमान की गद्दी पर बैठ गए और अन्य परिवार के सदस्य उनके पीछे बैठ गए। पश्चिमाभिमुख ऋत्विक् और सबसे बड़ा पण्डित ब्रह्मा की गद्दी पर उत्तराभिमुख बैठ गया।

गांव के लोग भी घड़ियाल का शब्द सुन उठे और जल्दी-जल्दी स्नानादि से निवृत्त हो यज्ञ मे वेदी के चारों ओर आकर बैठ गए। ठीक छ बजे वेदपाठ आरम्भ हुआ और साढे नौ बजे यज्ञ की पूर्णाहुति हुई।

ब्रह्मा ने सेठानीजी के लिए भगवान से प्रार्थना की, "भगवान, सेठानीजी को सौ वर्ष तक सौभाग्यवती रख संसार में पुण्य संचय करने का अवसर दे। इनके परिवार में वृद्धि हो। इनके धन-धान्य मे वृद्धि हो और इनके तथा परिवार के सब प्राणियों की धर्म-कर्म मे प्रवृत्ति हो।

यज्ञ की समाप्ति पर सबने सेठ तथा सेठानीजी को

यज्ञ समाप्त हुआ तो सबसे पहले यज्ञ करानेवाले ब्राह्मणों को भोजन कराया गया और उनको दक्षिणा दी गई। तत्पश्चात् अपने गांव तथा आसपास के गांवों के आए ब्राह्मणों को भोजन कराया गया। उनको भी दक्षिणा दी गई।

अब चार भिन्न-भिन्न स्थानों पर क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यजों को भोजन खिलाया गया। परिवार के सब सज्ञान लोग खिलाने-पिलाने में लगे थे, पुरुष पुरुषों को और स्त्रियां स्त्रियों को। छोटी जातिवालों को भी सेठानीजी के हाथ से बाल-बच्चों तक सबको एक-एक रुपया दान दिलवाया गया।

यह कार्यक्रम मध्याह्नोत्तर दो बजे तक चलता रहा। सबके अन्त में परिवार के सेवाकार्य में संलग्न सदस्यों ने भोजन किया और अन्त में सेठ तथा सेठानीजी ने किया।

जब सब खा-पीकर आराम करने लगे तो मां ने जुग्गी को बुला लिया और पूछा, "जुग्गी।"

"हां मां।"

"कितना रुपया व्यय हो गया है?"

"मां, अभी तो अपने घरवालों को देना रहता है।"

"उनको तो विदा करते समय दूंगी। तुम वह भी गिनकर इसमें सम्मिलित कर लो और फिर बताओ।"

"मांजी आपने साढ़े छः हज़ार तोशेखाने से निकलवाया था। मैं समझता हूं कि छः हज़ार के लगभग व्यय हो जाएगा।"

"बहुत थोड़े में ही सब काम कर दिया है।"

"क्यों? कोई असन्तुष्ट गया प्रतीत होता है?"

"यह तो तुम बताओ।"

"मुझे तो सब तुमको आशीर्वाद देते ही दिखाई दिए हैं।"

"पर बेटा, मैं अभी सन्तुष्ट नहीं।"

"तो मां, बताओ, और क्या करना चाहती हो।"

"यह तुमने प्याऊ लगाई थी और इसका प्रभाव तो आज़ अथवा कल समाप्त हो जाएगा। मैं चाहती हूं कि एक कुआं खुदवा दो जिससे अनन्त काल तक प्यासे तृप्ति प्राप्त करते रहें।"

"कुआं? मां, वह तो खाटू में खुद नहीं सकता। यहां की भूमि के

नीचे पत्थर हैं और सब पत्थर खुश्क हैं।"

"तो बेटा, कुछ ऐसा प्रबन्ध करो कि किसी जलीय भूमि में कुआं बनवा दो और उस कुएं पर रहट लगवा दो जिससे पानी निरन्तर निकलता रहे और फिर भूमि के ऊपर से यहां तक पहुंचता रहे।"

जुग्गीमल मां की योजना सुन मुस्कराया और मां के मन की भावना पर विचार करता रहा।

जुग्गी को चुप देख मां ने आगे कहा, "देखो बेटा। यह तो व्यय हो गया। सब खा-पीकर तृप्त हुए। परन्तु यह तृप्ति कितने दिन तक रहेगी? दो दिन। जिनको कुछ नकद मिला है, उनको कुछ और अधिक दिन तक तृप्ति और प्रसन्नता रह सकेगी।

"मैं इसे प्याऊ मानती हूं। थका-प्यासा यात्री प्याऊ पर जल लेता है तो प्याऊ लगानेवाले को आशीर्वाद देता ही है, परन्तु प्याऊ उठ जाने पर तो खेल समाप्त हुआ समझो।

"मैं चाहती हूं कि कोई ऐसा उपाय विचार करो कि इस प्याऊ के स्थान पर कुआं खुद जाए। यहां नहीं तो किसी अन्य स्थान पर और वहां से उसका जल यहां धाराप्रवाह आता रहे।"

जुग्गीमल को बात कुछ समझ आने लगी थी। उसने कहा, "मां, यह तो एक बहुत बड़ी योजना होगी। बहुत रुपया व्यय होगा। किसी बड़े इन्जीनियर से योजना और अनुमान लगवाना पड़ेगा।"

"तो ठीक है, लगवाओ। इतने हाथ-पांव बना डाले हैं तो [illegible] इस योजना पर लगवा दो न।"

"मां, कल हमारा यहां इस गांव में इस प्रवास का [illegible] होगा। कल अपनी फर्म के सदस्यों की बैठक होगी। [illegible] योजना रखूंगा और फिर मां! तुम्हारे आशीर्वाद से [illegible] लगवा दूंगा।"

उन बहत्तर के लगभग प्राणियों में तीस ही [illegible] फर्म के भागीदार थे। वे सब अगले दिन प्रातः [illegible] केवल एक सदस्य था जो वहां नहीं था। वह [illegible] मोहिनी, जुग्गीमल की दूसरी लड़की का [illegible] काम को विस्तार देने के लिए लन्दन [illegible] एण्ड इम्पोर्ट' का काम चलाने में लगा [illegible]

गया था। उसके उत्तर में 'केवल' आया था, "मांजी के स्वास्थ्य की सूचना की प्रतीक्षा चिंतित होकर कर रहा हूं।"

अन्य सब सदस्य उपस्थित थे। फर्म का सामान्य विवरण बताकर जुग्गीमल ने बताया, "ठीक-ठीक आंकड़े तो कार्यालय से ही भेजे जाएंगे। इस समय इतना बताया जा सकता है कि फर्म की पूंजी दस करोड़ रुपये के लगभग है। पिछले वर्ष नकद आय की दर पन्द्रह प्रतिशत रही थी और इस वर्ष भी लगभग इतनी ही रहेगी। इस हिसाब से बचत एक करोड़ पचास रुपया है। इसमें से पचास प्रतिशत पूंजी बढ़ाने में लगा दिया जाएगा। पचीस प्रतिशत हिस्सों में बांट दिया जाएगा। दस प्रतिशत रिज़र्व फण्ड। तेरह प्रतिशत दान-दक्षिणा और दो प्रतिशत अल्पायु बच्चों को भत्ता।

"इस हिसाब से प्रत्येक भागीदार को एक लाख अस्सी हज़ार मिलेगा और प्रत्येक अल्पायु बच्चे को सात-सात हज़ार भत्ता मिलेगा।

"यहां के ब्रह्मभोज का जितना भी खर्च हुआ है वह धर्मादा कोष में से हुआ है। इस कोष की रकम मेरे पास अस्सी लाख रुपया जमा है। आज मांजी ने कहा है कि छोटे-मोटे अस्थायी दान से चलाए जानेवाले काम प्याऊ है और इससे प्यासों की तृप्ति तो होती है, परन्तु वह तृप्ति अस्थायी होती है। हमको प्याऊ के स्थान पर कोई कुआं खोदना चाहिए जिससे धाराप्रवाह जल निकलता रहे और सदा के लिए प्यासों की प्यास बुझती रहे।

"मांजी का अभिप्राय यह है कि कोई ऐसी संस्था चालू करनी चाहिए जिससे भूखों को अन्न मिलता रहे, प्यासों को जल मिलता रहे, नंगों को कपड़ा मिलता रहे और अनपढ़ों को विद्या का दान होता रहे।

"इसके लिए मैं तीन सदस्यों की एक समिति बनाने का प्रस्ताव करता हूं। उन तीन सदस्यों में एक मांजी दूसरे श्यामसुन्दरजी और तीसरी मोहिनी।"

इस संबंध में सब परस्पर राय करने लगे। कुछ देरी तक विचार के उपरान्त जुग्गीमल के सबसे छोटे पुत्र संतराम ने कहा, "मुझको यह प्रस्ताव तो स्वीकार है कि दान-दक्षिणा कोष से कोई संस्था चलाई जाए, परन्तु उसकी कमेटी में मैं माताजी का नाम पसन्द नहीं करता। उनको भला संसार का क्या ज्ञान है और ज़माने की क्या आवश्यकता है?

व क्या जानें कि किस काम में धन का ठीक उपयोग होगा।"

इसपर एक अन्य सदस्य सूर्यकुमार बोल उठा, "मैं माताजी का नाम इसमें रखना चाहता हूं। यह योजना उनके मस्तिष्क की उपज है। अतः उनको इस योजना को रूप देने के लिए अवसर मिलना चाहिए। परन्तु मोहिनी को इस कार्य में रखने के स्थान पर मैं गजाधर का नाम उपस्थित करता हूं। गजाधर पढ़ा-लिखा और योग्य लड़का है। वह परिवार में सबसे चतुर है।"

इसपर सुमेर उठ खड़ा हुआ, "मैं इस पूर्ण योजना का विरोध करता हूं। मेरी योजना है कि अस्सी लाख रुपया सदस्यों में बांट दिया जाए और सबको अपने-अपने ढंग से दान-दक्षिणा में व्यय करने का अधिकार हो।"

इसपर तो उग्र वाद-विवाद चल पड़ा। जुग्गीमल ने कहा, "भाई एक बात समझ लो कि माजी दानकोष की निर्माता हैं। जब मैं अकेला काम के लिए इस गांव से जाने लगा था तो माजी ने मुझे काम करने के लिए अढ़ाई सौ रुपया, अपना पूर्ण दान के लिए जमा कोष, दिया था। वह मेरे काम की पूंजी थी। पांच वर्ष बाद जब मैं गांव में आया और मैंने मां को बताया कि अढ़ाई सौ रुपये का पचीस हजार अर्थात् सौ गुणा हो गया है तो वे बोल उठीं कि इसमें से तेरह प्रतिशत दान कर दो। शेष से व्यापार में वृद्धि करो।

"तब से तेरह प्रतिशत पृथक् होता रहा है। इसमें हम दान देते रहे हैं। इसपर भी हमारे पास अस्सी लाख इस खाते में बचा है। ग्यारह लाख से ऊपर इसमें और जमा होनेवाला है।

"अतः मैं तो यह सब रुपया मांजी का ही समझता हूं और उनको इस कमेटी में रखने का आग्रह करता हूं।"

एक घण्टे के वाद-विवाद के उपरान्त सुमेर ने खड़े होकर कहा, "यदि आप हमारे गाढ़े पसीने की कमाई को बूढ़े और अनपढ़ लोगों की राय पर व्यर्थ गंवाना चाहते हैं तो मैं यह कहूंगा कि मुझे अपने कारोबार से पृथक् कर दिया जाए।

"मैं तो कल, जो सात हजार रुपया ब्रह्मभोज पर व्यय किया गया है उसे भी व्यर्थ का खर्च मानता हूं।"

इसपर तो जुग्गीमल ने हंसते हुए कहा, "मैं इस विवाद को समाप्त

करना चाहता हूं। आप सबने विषय को भली भांति समझ लिया है। अतः अब इस विषय पर सम्मति ले रहा हूं।

"मैंने इस विषय को दो भागों में बांट दिया है। एक भाग है कि इस दान-दक्षिणा के रुपये को किसी फर्म-कार्य के लिए व्यय किया जाए अथवा नहीं?

"दूसरा भाग है कि यदि कोई फर्म-कार्य करना है तो कमेटी तो बनानी पड़ेगी। उस कमेटी में कितने सदस्य हों और कौन-कौन हों?"

इसपर सुमेर ने कहा, "मैं इस फर्म-कार्य का विरोधी हूं।"

जुग्गीमल ने इस बात पर राय ले ली। केवल सन्तराम और सुमेर के अतिरिक्त अन्य कोई विरोधी नहीं निकला।

अब दूसरा प्रश्न यह था कि इस काम के लिए कितने सदस्यों की कमेटी हो?

अभी तक तीन और पांच सदस्यों के लिए विचार आए थे। अब सुमेर ने उठकर प्रस्ताव कर दिया, "इस कमेटी में ग्यारह सदस्य हों।"

इसपर वाद-विवाद होना था, परन्तु जुग्गीमल ने विवाद की स्वीकृति नहीं दी और राय ली। तीन के लिए, पांच के लिए और ग्यारह के लिए। सबसे अधिक मत पांच सदस्यों की कमेटी के लिए आए।

अन्तिम बात थी कि सदस्य कौन-कौन हो? सन्तराम और सुमेर दोनों यह राय करते रहे कि इसमें कोई स्त्री सदस्य न बनाई जाए। परन्तु पांच नाम निश्चित हुए।

रामेश्वरीदेवी, जुग्गीमल, सूर्यकुमार, मोहिनी और विष्णुसहाय। यदि वह स्वीकार न करे तो गजाधर।

जब यह निश्चय हो गया तो जुग्गीमल ने यह प्रश्न उपस्थित कर दिया, "यदि कोई सदस्य फर्म को छोड़ना चाहे तो किन शर्तों पर उसे छोड़ने की स्वीकृति दी जाए।" इस बात के विचार और निर्णय करने में अधिक देरी नहीं लगी। जुग्गीमल का यह प्रस्ताव स्वीकार हो गया "छोड़ने के समय सदस्यों की कुल संख्या से पूर्ण आदेय (assest) को विभक्त कर निकलनेवाला धन छोड़नेवाले सदस्य को दे दिया जाए और उससे उचित फ़ारख़ती लिखा ली जाए। इस आदेय में सब कुछ सम्मिलित है केवल धर्मादा का धन सम्मलित नहीं है।"

इसपर सुमेर ने पुनः आपत्ति की, परन्तु इस बार सन्तराम

भी उसका साथ नहीं दिया। परन्तु पृथक् होनेवालों में पिता-पुत्र, सन्तराम और सुमेर, दोनों थे। सन्तराम का बड़ा लड़का माणिक था। वह भी फर्म में भागीदार था। उसने पिता और भाई का साथ नहीं दिया।

जुग्गीमल ने सन्तराम से कहा, "मैं अभी दो दिन के उपरान्त यहां से जा रहा हूं। इस कारण तुम पिता-पुत्र यहां ठहरो। मैं तुमको अपने साथ कलकत्ता ले चलूंगा और सब हिसाब-किताब कर लेंगे।"

सुमेरचन्द ने कहा, "यहां से हम अपने काम पर जाना चाहते हैं। आप वहां सब बात लिखत-पढ़त से निश्चय कर सकते हैं।"

"सुमेर! नहीं। तुम्हारे और तुम्हारे काम को देखने के लिए मैं गजाधर को भेज रहा हूं। तुम अब वहां पर नहीं जा सकोगे।"

"मैं चाहूंगा कि मद्रास का ही काम, जहां हम पिछले पांच वर्ष से काम कर रहे हैं, हमको दे दिया जाए।"

"यह मैं नहीं कर सकता। यह निश्चय हमारी व्यावसायिक कमेटी ही करेगी कि मद्रास का काम किसको दिया जाए?"

"तो हम दावा कर देंगे।"

"तब तो और भी आवश्यक है कि तुमको वहां जाने से मना कर दिया जाए। मैं अभी वहां तार भेज रहा हूं कि दुकान का मुन्शी तुमको वहां घुसने न दे और इस काम में पुलिस की सहायता ले।"

सुमेर विस्मय में अपने पिता का मुख देखता रह गया। सन्तराम ने समझाया, "तुमने अपनी सब योजना यहां बता दी है। यह ठीक नहीं किया।"

सुमेर ने अपने पिता से कहा, "मुझे क्या मालूम था कि बाबा इतनी तेजी से विचार करता है।"

"तुम मूर्ख हो।" सन्तराम उसे और अधिक कुछ नहीं कह सका। जुग्गीमल ने गजाधर को समीप बुलाकर कहा, "एक तार वेंकट अय्यर को मेरे नाम से अभी दे दो। उसमें लिख दो कि सन्तराम और सुमेरचन्द फर्म की मद्रास ब्रांच से हटा दिए गए हैं। मैं उनके स्थान पर दूसरा व्यक्ति अधिकार-पत्र के साथ भेज रहा हूं। सन्तराम और सुमेर को फर्म में न घुसने दिया जाए और न ही रुपया बैंकों से वसूल करने दिया जाए।"

केवल मोहिनी ने पूछा, "बाबा ! इतनी कठोरता का क्या कारण है ?"

"अपनी दादी मां से पूछ लेना ।"

वह चुप हो गई। रामेश्वरी की घर में बहुत प्रतिष्ठा थी और परिवार के सब सदस्य समझते थे कि जुग्गीमल उसकी ही आज्ञा से यह कठोर व्यवहार कर रहा है। इसपर भी व्यापारिक बुद्धि रखने वाले जुग्गीमल के व्यवहार को उचित मान ही स्वीकार कर रहे थे।

अभी इस सभा के निर्णयों पर चर्चा हो ही रही थी कि गजाधर गांव के डाकखाने में जा तार दे आया।

६

"मांजी, भापा ने आज परिवार के एक सदस्य से बहुत कठोर व्यवहार किया है।" उक्त सभा के उपरान्त ही मोहिनी अपनी दादी से कह रही थी।

रामेश्वरी फर्म में एक भागीदार तो थी, परन्तु वह फर्म के काम में रुचि नहीं लेती थी और इसके कारोबार में कभी हस्तक्षेप नहीं करती थी। परन्तु परिवार के सब लोग फर्म में बरकत उसीके आशीर्वाद का परिणाम मानते थे। अतः आज से पहले तक किसीने उसके भागीदार होने के अधिकार पर आपत्ति नहीं की थी। आज भी आपत्ति उसके भागीदार होने पर नहीं हुई थी, वरंच उसकी बुद्धि पर सन्देह हुआ था। सन्तराम का कहना था कि वह अनपढ़, वर्तमान युग की बात को न समझनेवाली स्त्री भला क्या जानती है कि कौन दान पाने का अधिकारी है।

सन्तराम की इस बात को किसीने स्वीकार नहीं किया। इसपर भी स्त्रीवर्ग जुग्गीमल के सन्तराम और सुमेर के प्रति कठोर व्यवहार को अनुचित मानता था। मोहिनी दादी के पास यही विचार लेकर आई थी। मोहिनी का विचार था कि दादी भी इसे इसी प्रकार समझेगी। साथ ही जुग्गीमल ने कहा था कि मोहिनी दादी से इस कठोर व्यवहार का कारण पूछ सकती है।

रामेश्वरी सदा की भांति फर्म के सदस्यों की सभा में नहीं गई थी। मोहिनी सभा से उठ सीधे उसके पास आई थी। वह चाहती

थी कि अभी मद्रास तार न भेजा जाए।

जब मोहिनी ने उक्त सूचना दी तो दादी ने पूछा "सुमेर और उसके पिता की बात कह रही हो मोहिनी ?"

"हां, माजी।"

"क्या किया है जुग्गी ने उनके साथ ?"

"उनको काम से तथा फर्म से निकाल दिया है और एकदम बिना नोटिस के काम से पृथक् कर दिया है।"

"बस ? मैं कुछ और समझी थी ?"

"तो और क्या होना चाहिए था ?"

"उनकी सब सम्पत्ति जब्त कर उनको वैसे ही बिना कुछ दिए घर से निकाल देते, जैसे पांव में गड़े कांटे को निकाल फेंक दिया जाता है।"

"तो वे स्वस्थ शरीर में कांटा हैं ?"

"देखो बेटा, मोहिनी ! सुमेर तो एक सुन्दर स्वच्छ वाटिका के किनारे एक गन्दी नाली के समान है। अभी दो दिन हुए, उस गन्दी नाली में परिवार का एक सदस्य गिरकर गन्दगी में लथपथ हो गया था। उसे बांह से पकड़ मैंने नाली से बाहर निकाला है और उसे स्नान इत्यादि करा साफ-सुथरा बना दिया है।

"रही सन्तराम की बात। वह उस गन्दी नाली में गन्दे पानी को और अधिक संचय कर रहा है। मेरी सम्मति तो यह थी कि इस गन्दे पानी के स्रोत और नाली को अपनी वाटिका से दूर कर दिया जाए जिससे पुनः कोई सदस्य उसमें न गिर पड़े।"

मोहिनी इस उपमा पर विचार कर रही थी। उसके विचार का विषय यह नहीं था कि कौन इस नाली में गिरा था, वरंच यह था कि कहीं माजी ने भूल से तो इसे गन्दा नहीं समझ लिया। वह विचार-मग्न बैठी रह गई। इसी समय सुमेर और सन्तराम माजी के पास आ पहुंचे।

रामेश्वरी ने उनको देखा तो समीप बैठने का संकेत कर पूछ लिया, "हां, कब जा रहे हो सुमेर ?"

"माजी," सन्तराम ने कह दिया, "आपके सुपुत्र सदा मेरे विपरीत रहे हैं। मैंने भापा के पिछले बीस वर्ष के व्यवहार से तंग आकर परिवार से पृथक् होने की बात की तो हमको अपने कारोबार पर जाने से ही

मना कर दिया है।"

"तो तुमने स्वयं पृथक् होने की बात की है ? मोहिनी तो अभी कह रही थी कि जुग्गी ने तुमको कारोबार से पृथक् कर दिया है ?"

"मांजी, मैंने तो इच्छा प्रकट की थी, परन्तु हमारा मद्रास में लेन-देन, मेल-मुलाकात है और हम चाहते थे कि वहां का कारोबार ही हमको हमारे भाग में दे दिया जाता।"

"देखो, सन्तराम ! यह व्यापार की बात तो व्यापार के कर्ता की उपस्थिति में ही हो सकती है। कहो तो जुग्गी को यहां बुला लूं। हां, परिवार की बात हो तो मुझसे कहो।"

"परिवार में से किसी एक भी सदस्य ने हमारी बात का समर्थन नहीं किया।"

"क्या बात थी तुम्हारी ? उसका परिवार की भलाई से सम्बन्ध था क्या ?"

"हां। सुमेर ने यह कहा था कि धर्मादा का धन सबमें बांट दिया जाए और सबको अपने-अपने भाग का धन अपने विचार से व्यय करने दिया जाए।"

"पर तुम इसे धर्मकार्य पर व्यय करोगे क्या ?"

"यह हम पीछे विचार करेंगे। संसार में सबसे बड़ा धर्म जीना है।"

"तो तुम मरे जा रहे हो क्या ? क्या रोटी-कपड़ा घर में चुक गया है जो इस दान-दक्षिणा पर दृष्टि गई ?"

"पर मांजी ! सुमेर ने वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'यह हमारी कमाई का हिस्सा है और इसे व्यय करने का अधिकार हमको मिलना चाहिए।'"

रामेश्वरी ने एक क्षण तक विचार किया और पूछ लिया, "कितना है इस कोष में ?"

"अस्सी लाख से ऊपर है।"

"और तुम्हारे भाग में कितना आता है ?"

"पिता-पुत्र के भाग का छः लाख बनता है।"

"अच्छा। जुग्गी को बुलाओ।"

"मांजी ! बाबा हमारे कहने से नहीं आएंगे।" सुमेरचन्द ने कहा।

"ठीक है। तुम मेरे चपरासी भी तो नहीं।" रामेश्वरी ने व्यंग्य के

भाव में कह दिया। वह स्वयं उठी और कमरे के द्वार पर जाकर नन्दू को आवाज देने लगी।

मोहिनी उठकर माजी के समीप जा बोली, "मैं भापा को बुला लाती हूं, माजी। आप बैठिए।"

वह गई और अपने पिता को बुला लाई। जुग्गीमल सुमेर और सन्तराम को माजी के पास बैठा देख मुस्कराकर पूछने लगा, "तो मुकदमा 'प्रिवी कौन्सिल' में आ गया है?"

सुमेर इत्यादि तो इसका अर्थ नहीं समझे। मोहिनी समझ गई और बोली, "भापा, यह 'प्रिवी कौन्सिल' नहीं। यह तो सम्राट के पास दया की प्रार्थना मालूम होती है।"

जुग्गी हंस पड़ा और मां की ओर देख कहने लगा, "माजी, मोहिनी कह रही है कि तुम हमारे साम्राज्य की सम्राज्ञी हो और ये आपकी दया की याचना के लिए आए हैं।"

"क्यों सुमेर? मोहिनी ठीक कह रही है क्या?"

सुमेरचन्द तो परदादी को सम्राज्ञी मानने और स्वयं को उसके सम्मुख याचक मानने से इन्कार करनेवाला था, परन्तु सन्तराम पुत्र के घुटने पर हाथ रख उसे चुप रहने के लिए कह, स्वयं बोला, "मैं तो न्याय के लिए आया था। इसपर भी माजी दयाभाव से भी हमारी बात मान लेंगी तो हमको कोई आपत्ति नहीं हो सकती।"

जुग्गीमल उनको रूखा उत्तर देने वाला था कि उनका निर्णय फर्म के भागीदारों की साधारण बैठक में हो गया है। वही 'प्रिवी-कौन्सिल' है, परन्तु मां के सामने वह चुप रहा।

रामेश्वरी ने कहा, "देखो, सन्तराम! तुमने अपने भाग के दान-दक्षिणा के धन को स्वयं व्यय करने का अधिकार मांगा है। इसलिए मेरा जुग्गी से यही आग्रह है कि उस कोष का इनके भाग का रुपया इनको स्वयं धर्मार्थ व्यय करने के लिए दे दिया जाए।"

"परन्तु माजी, ये उसे धर्मार्थ व्यय करेंगे क्या?" जुग्गी का प्रश्न था।

"वह धर्मार्थ धन है। यदि उसका ये अपव्यय करेंगे तो धर्म की हत्या करनेवाले बन, ये अपनी भी हत्या कर लेंगे। जुग्गी, इनका भाग इनको दे दो।"

"पर अब फिर सभा में पास करना पड़ेगा।"

"अभी मेरे सुरक्षित भाग में से दे दो। पीछे जैसा उचित समझो कर लेना।"

इससे उत्साहित सन्तराम ने कहा, "हमारे मद्रास के कारोबार के विषय में ?"

"उसमें मैं हस्तक्षेप नहीं करूंगी। मेरी तो तुमको घर और व्यापार से बाहर कर देने की राय तब ही थी जब तुमने अपने चौका-बासन करने वाले की लड़की से विवाह कर लिया था। परन्तु तुम्हारी मां किशोरी ने तुमको बचा लिया था। अब तो यह बात तुमने स्वयं मांगी है।"

जुग्गी ने कह दिया, "मांजी! फर्म के कारोबार को चलाने वाली एक व्यावसायिक समिति है। इस विषय में वे ही निर्णय करेंगी। मैंने अभी इनसे कहा है कि मेरे साथ कलकत्ता चलें और हम वहीं व्यापार-सम्बन्धी बातों का निर्णय कर लेंगे। अभी तो इनको मद्रास नहीं जाना चाहिए। वहां मैंने तार कर दिया है कि इनको काम से पृथक् किया जा रहा है।"

"यही तो अन्याय है।" मोहिनी ने अपने छोटे भाई की सहायता में कह दिया।

"देखो मोहिनी! तुम लोगों ने मुझे फर्म की सम्पत्ति का संरक्षक बनाया है और मैं उसकी रक्षा के लिए ही यह कर रहा हूं। तुम इनकी ज़ामिन बन जाओ तो मैं इनको वहां जाने की स्वीकृति दे सकता हूं।"

"इनसे किस बात का भय है वहां ?" मोहिनी का प्रश्न था।

"इस समय मद्रास में हमारा एक करोड़ रुपये के लगभग पूंजी में लगा हुआ है। इसके अतिरिक्त बैंकों से दो करोड़ के 'ओवरड्राफ्ट' की स्वीकृति है। इस पूंजी के अतिरिक्त चालू धन चार-पांच करोड़ तक जाता रहता है। बताओ, इतने धन की ज़ामिन बन सकती हो ?"

"तो तुम इनको इतना पतित समझते हो कि घर के प्राणियों को ही लूटने लगेंगे ?"

"मैं इनके विषय में कुछ नहीं कह रहा। मैं अपने उत्तरदायित्व को निभा रहा हूं। तुम अथवा कोई दो-तीन सदस्य मिलकर भी पांच करोड़ रुपये के ज़ामिन बन जाएं तो मैं इनको वहां जाने दूंगा।"

"मैं तो समझती हूं कि इतने धन के ज़ामिन मिल जाएंगे।" मोहिनी ने कहा।

"तो ठीक है। यह इतने का ज़ामिन दे दें, मैं इनको वहां जाने दूंगा। इसपर भी ये भविष्य में हमारी आय के मालिक बनकर रह सकेंगे, इसका निश्चय तो व्यावसायिक कमेटी ही करेगी।"

मोहिनी गम्भीर विचार में डूब गई। फिर वह एकाएक उठी और कमरे से बाहर चल दी।

जुग्गीमल ने कहा, "मोहिनी अपने भाई सन्तराम के ज़ामिन ढूंढने गई है।"

"कौन हमारी ज़मानत देगा? हम तो माजी से अपनी सिफारिश के लिए आए थे।"

"देखो सन्तराम, जो कुछ परिवार के साथ सम्बन्ध रखता था उसके विषय में मैंने अपने धन में से ज़मानत के रूप में दे दिया है। परन्तु जिस बात का घर से सम्बन्ध नहीं, उसको मैं कैसे कर सकती हूं।"

इसका उत्तर सन्तराम ने नहीं दिया और चुपचाप बैठा रहा। दस-पन्द्रह मिनट के उपरान्त मोहिनी अकेली ही लौटी। वह पीत मुख थी। चुपचाप माजी के समीप बैठ उसने कह दिया, "सन्तराम के लिए कोई ज़ामिन बनने को तैयार नहीं। घनश्याम ने तो यह कह दिया है कि गन्दे जल में स्नान से गन्दगी का ही लाभ होता है।"

"तो सन्तराम का कोई ज़ामिन नहीं मिला?" मां ने पूछ लिया।

"मोहिनी! है हिम्मत, पांच करोड़ की ज़ामिन बनने की?" जुग्गीमल ने पूछा।

"नहीं भापा! मैंने विष्णु के पिता से पूछा तो उन्होंने मुझे भी ज़ामिन बनने से इन्कार कर दिया है।"

"तुमने कारण पूछा है?" जुग्गीमल ने पूछा।

"पूछा तो नहीं, परन्तु वे इतना कह रहे थे कि दुकान का नाम और स्थान का दाम बहुत अधिक है। वह हम फोकट में ही देना नहीं चाहते।"

मोहिनी विस्मय कर रही थी कि सन्तराम और उसके पुत्र ने कौन-सी इतनी बड़ी खराबी की है कि कोई भी उसके लिए ज़ामिन बनना नहीं चाहता। इसपर भी वह चुप थी।

७

जब सन्तराम ने देखा कि कुछ भी बात नहीं बन रही तो वे पिता-
उठकर मांजी के कमरे से चले गए। उनके कमरे से निकल जाने
बाद मोहिनी ने पूछा, "भापा, क्या खराबी की है इन्होंने ?"

"देखो मोहिनी, परिवार के दूसरे लोगों ने क्या समझा है, मैं नहीं
नता। मेरे मन में तो एक ही बात है। इन्होंने मांजी को मूर्ख,
नपढ़, काल की गति से अनभिज्ञ बताया है। मेरे मन में यह बात
ठ चुकी है कि यह जो कुछ प्रताप तुम देख रही हो वह माताजी के
पुण्यकर्मों का ही फल है। जैसे एक विशाल वटवृक्ष की छाया में बैठ
सैकड़ों लोग सुख-शान्ति को प्राप्त करते हैं, वैसे ही मैं मांजी के पुण्य-
कर्मों की छाया में बैठे अपने परिवार के सदस्यों को देख रहा हूं। हममें
से जो भी इनके गुणों को अवगुण मानने लगता है, मैं उसे भगवान
कृष्ण के कहने के अनुसार तामसी बुद्धि का व्यक्ति मानता हूं। ये लोग
धर्म को अधर्म और कर्तव्य को अकर्तव्य मानने लगते हैं।

"ऐसे लोग किसीका और अपना भी कल्याण नहीं कर सकते।
यह तो तुम जानती हो कि इसने किस प्रकार अपने विवाह का प्रबन्ध
किया था। यह लखनऊ में था। वहां अपनी फर्म का काम करता था।
इसका चौका-बासन करने के लिए एक मां और बेटी आती थी। लड़की
के बच्चा होने लगा तो उसकी मां ने इसे विवाह करने पर विवश किया।
विवाह के लिए यह माना तो उस औरत ने इसे अपने सब सम्बन्धियों
को विवाह की सूचना भेजने पर विवश किया। इसपर भी उस औरत
ने इससे दस सहस्र रुपया ऐंठ लिया।

"मांजी ने तो तब ही कहा था कि इसे कारोबार से पृथक् कर देना
चाहिए। उस समय मैंने मांजी से कहा था कि सन्तराम के चरित्र का
व्यापार से सम्बन्ध नहीं मानना चाहिए।

"मांजी का कहना था कि मनुष्य के संस्कार और बुद्धि खानों में
बांटकर नहीं रखे जा सकते। मूल बुद्धि और मन तो एक ही है। उस-
पर भिन्न-भिन्न अनुभवों के संस्कार पड़ते हैं, परन्तु बुद्धि जो कार्य की
प्रेरणा देती है वह एक ही है। यदि वह कुण्ठित अथवा मलिन हो
तो प्रत्येक संस्कार और ज्ञान की बात को उलटा ही समझने लगती है।

उसके सब क्षेत्रों के कार्य विकृत ही होते चले जाते हैं। उस समय तुम्हारी मां ने इसको बचा लिया था।

"और देखो। इसके विवाह को हुए बीस वर्ष हो गए हैं। तब से ही इसकी बुद्धि इसकी पत्नी और सास की बुद्धि से प्रेरणा पाती है। यह लड़का सुमेर मां का प्रिय पुत्र है।

"विवाह के समय सन्तराम माधो के साथ काम करता था। सबसे पहली बात विवाह के उपरान्त इसने यह की कि अपने बड़े भाई-भावज को तंग कर वहा से निकाल दिया। माधव ने स्वयं कहा कि वह लखनऊ मे काम नही करेगा। विवश होकर उसके स्थान पर अपने एक विश्वस्त मुशी को भेजना पडा। वह भी वहा से भगाया गया तो फिर मैं स्वयं कुछ मास के लिए इसके पास जाकर रहने लगा। तब तक एक बात जरूर थी कि इसने व्यापार में किसी प्रकार की अनुचित बात नही की थी। अतः मैंने इसे स्वतन्त्र रूप मे बम्बई की ब्राच का मैनेजर बना भेज दिया। वहा ब्राच के काम के साथ यह अपना पृथक् व्यापार भी करता रहा है। वहां यह केवल 'स्पैक्युलेशन' करता था। हमारी फर्म यह काम नही करती। इस कारण मैं सहन करता रहा। परन्तु अब मद्रास में इसने वह काम करना आरम्भ कर दिया है जो फर्म करती है और इस प्रकार फर्म के काम को बाट लिया है। इसके दूसरे लडके ने ही मुझको यह सब बात बताई है और वह बाप को छोड अब कलकत्ता में फर्म का काम कर रहा है।

"मोहिनी, यह तो निकाला ही जाने वाला था। हा, मेरी जाच में कुछ समय जरूर लगता। जब इसने स्वय छोड़ने की इच्छा की है तो मैंने इसकी इच्छा को सहर्ष स्वीकार कर लिया है।"

"परन्तु भापा, यह सब बातें क्या दूसरो को भी पता हैं?"

"मैं नही जानता कि कौन क्या और कितनी बात जानता है। यह सब बात हमारी व्यावसायिक कमेटी जानती है। उसमें पाच सदस्य हैं। उन्होंने कुछ किसीसे कहा हो तो मैं कह नही सकता।"

"पर मोहिनी," रामेश्वरी ने पूछ लिया, "तुम इसमें इतनी रुचि क्यों ले रही हो?"

"मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ था कि आप सब इसकी पत्नी के एक छोटी जाति से होने के कारण इससे घृणा कर रहे हैं। मैं तो यह सम

रही थी कि परिवार रूढ़िवादी होने से ऐसा कर रहा है। मां जी, आपके पास आने के समय तो मैं आपकी फर्म के इस अन्यायाचरण से विक्षुब्ध हो स्वयं इसे छोड़ने का विचार करने लगी थी। अब मेरे मन में प्रकाश हो रहा है।"

रामेश्वरी ने कहा, "मोहिनी बेटा, छोड़ो इस बात को। तुम यह बताओ कि अब यहां रहने के विषय में क्या विचार है? जिस दिन तुम आई थीं तब यहां रहने को कह रही थीं।"

"मैंने विष्णु के पिताजी से बात की है। वे स्वेच्छा से तो मुझे यहां रहने की स्वीकृति नहीं देते; इसपर भी कहते हैं कि मेरा आग्रह वे टाल नहीं सकेंगे।"

"तो फिर तुमने क्या निश्चय किया है?"

"मैं जा रही हूं।"

"कब?"

"कल बहुत प्रातः यहां से चलेंगे। बैलगाड़ी का प्रबन्ध हो गया है। रत्नगढ़ तक ही कष्ट है। आगे तो रेल मिल जाएगी।"

अब जैसे आने के समय परिवार के सदस्य रामेश्वरी के चरण स्पर्श करते थे, वैसे ही जाने के समय भी वे चरण स्पर्श करते हुए जा रहे थे। रामेश्वरी सब सदस्यों को समान रूप में जाते समय विदाई दे रही थी। आने-जाने का भाड़ा और मार्ग में खाने-पीने का खर्चा फर्म दे रही थी।

सबसे पहले जुग्गीमल पहुंचा था और सबसे पीछे ही जुग्गीमल गया। सन्तराम और सुमेरचन्द तो फर्म के सदस्यों की सभा के दिन ही चल दिए थे। संतराम का दूसरा लड़का माणिक अपने बाबा जुग्गीमल के साथ ही गया था।

सबसे विचित्र बात यह हुई थी कि गजाधर की पत्नी लक्ष्मी और उसके बच्चे खाटू में ही रह गए थे। इसमें कारण विशेष यह हुआ था कि गजाधर को सदस्यों की बैठक के उपरान्त तुरन्त ही मद्रास भेज दिया गया था। जुग्गीमल को सन्देह था कि सन्तराम और उसका लड़का सुमेरचन्द उसकी आज्ञा के विपरीत मद्रास जाएंगे और वह गड़-बड़ मचाना चाहेंगे। अतः जुग्गीमल ने गजाधर से कहा, "यदि तुम तुरन्त मद्रास जा सको तो फर्म का विशेष कल्याण होगा।"

"भापा, आज्ञा दें। मैं तैयार हू।"

"तुम अपनी पत्नी और बच्चों को यहा छोड़ जाओ। मैं उनको कलकत्ता ले जाऊगा। वहा से तुम्हारे कार्य के विषय में लिखूंगा और फिर जहां तुमको रहना होगा वहां तुम्हारे बच्चों को भेज दूंगा।"

"ठीक है, भापा। अधिकार-पत्र तैयार करो और सवारी का प्रबन्ध करा दो। मैं पाच मिनट मे तैयार होता हूं।"

जब वह लक्ष्मी से मिलने गया तो उसने पूछ लिया, "क्या मैं यहां माजी के पास नही रह सकती?"

"यहां? यहा क्या है?"

"यहा मांजी हैं। कुछ उनकी सेवा करूंगी तो वैसा ही सौभाग्य पाने की आशा कर सकती हू।"

गजाधर हस पड़ा। पूछने लगा, "परन्तु मुझे मेरी पत्नी कब मिलेगी?"

"जब और जहा आप बुलाएगे मैं पहुच जाऊंगी। अभी तो आप कलकत्ता जाने की बात कह रहे हैं न! मैं वहा आपके बिना जाना नही चाहती।"

यह पृष्ठभूमि थी लक्ष्मी के खाटू में रह जाने की। परन्तु इसमें भी एक कारण था। जिस दिन सुमेर के साथ उसकी दुर्घटना हुई थी और रामेश्वरी उसके समीप से सुमेर को भगाने के लिए आई थी, उस दिन प्रातःकाल ही श्यामसुन्दर की पत्नी नन्दिनी ने बड़ी मांजी से अपनी पतोहू लक्ष्मी के साथ हुई दुर्घटना सुना दी थी। वह दादी के पास आई और बोली, "भाजी! आज एक दुर्घटना हो गई है। मैं न तो इसका अर्थ समझ सकी हूं और न ही इसका परिणाम।"

"क्या हुआ है?"

"गजाधर के पिता तो इस रेगिस्तान में रात के समय होने वाली सर्दी से बचने के लिए सदा कमरे के भीतर ही सोते थे। आज रात भी वे भीतर ही सोए हुए थे। लगभग दो बजे मैं छत पर से नीचे कमरे मे आ गई। लक्ष्मी और गजाधर भी लगभग प्रायः रात को उसी कमरे मे आकर सो जाया करते थे। आज रात मैं अभी आई ही थी कि लक्ष्मी आई और अपने बच्चे को लिटा सो गई। कुछ देर बाद एक पुरुष आया। लम्बाई से वह गजाधर प्रतीत नहीं होता था, परन्तु"

अंधेरा होने के कारण मैं उसे पहचान नहीं सकी। मैंने समझा कि मुझे भ्रम हो गया है और पहचान नहीं रही। वह अन्धेरे में लक्ष्मी के साथ लेट गया और फिर मुझे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि दोनों पति-पत्नीकर्म में लीन हो गए। यद्यपि मैं चाहती नहीं थी कि वे इस प्रकार खुले कमरे में इस कर्म में लीन हों, परन्तु पति-पत्नी के व्यवहार में मैंने हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा। इसके कुछ काल उपरान्त मैं सो गई। मेरी जाग तब खुली जब लक्ष्मी का छोटा बच्चा रो पड़ा। मैं उठी तो लक्ष्मी के समीप सो रहा व्यक्ति भी जागकर उठ बैठा। लक्ष्मी तो मुझे जागते देख बच्चे को ले भाग खड़ी हुई। इसके उपरान्त मेरा ध्यान उसपर गया, जिसे मैं गजाधर समझती थी। परन्तु वह तो सुमेरचन्द था। खिड़की में से आने वाले घुसमुसे प्रकाश में मैं उसे पहचान गई। सुमेर भी मुझे विस्मय से देख रहा था। वह उठा और कमरे से भाग गया।

"मांजी, लक्ष्मी और सुमेर में क्या बात है, मैं समझ नहीं सकी। अभी मैं स्नान कर कपड़े पहन आपकी ओर आ रही थी कि सुमेर दिखाई दिया। वह मुझे देख मुस्कराता हुआ उस बड़े कमरे में चला गया है, जहां पुरुष अल्पाहार ले रहे हैं।"

"इस घटना को गजाधर के पिता जानते हैं क

सुमेर से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ?"

लक्ष्मी रो पडी और पूर्ण घटना का वृत्तान्त सुना दिया। उसने कहा, "ललिता के पिता ही वहा आकर सोया करते थे। इस कारण मुझे उसपर कोई सन्देह ही नही हुआ। नित्य से विपरीत जब वे मेरा भोग करने की इच्छा करने लगे तो मैंने कहा भी कि माता-पिताजी भी कमरे मे हैं। वह कान में धीरे से बोला, 'वे सो रहे हैं।' मैं भी मोहित हो रही थी। इस कारण मान गई।

"प्रात. बच्चे को पेशाब करा मैं भीतर गई तो एक अपरिचित व्यक्ति को वहां लेटे देख स्तब्ध रह गई। मैं भाग जाना चाहती थी, परन्तु यह सिद्धू रो पडा और वह जाग गया। तब मैं भाग आई।"

"तो यह बात तुमने अपने पति से बताई है ?"

"अभी नहीं। परन्तु बताने का उचित अवसर देख रही हूं।"

"तुम मत बताना। मैं बता दूगी। और देखो, सुमेर से सावधान रहना। वह अच्छा लडका नही है।"

लक्ष्मी को सान्त्वना मिली और वह आमू पोछ भूमि की ओर देखने लगी। रामेश्वरी ने कहा, "देखो बेटा, तुम चलते-चलते पाव फिसल जाने से गन्दी नाली मे गिर पडी थी। अब अपने शरीर को धो लो और फिर सावधानी से जीवन-पथ पर चलो। जिससे पुन: पाव न फिसल सके।"

"पर शरीर को कैसे धोऊ ?"

"यह मैं तुमको बताऊगी। कल प्रात काल स्नान के उपरान्त मेरे कमरे मे आ जाना। शरीर धोने की बात समझाऊगी।"

उस दिन के उपरान्त वह नित्य रामेश्वरी से पूजा और जप का ढंग सीख रही थी। जब उसके सम्मुख अपने दादा श्वसुर के साथ कलकत्ता जाने का प्रश्न उपस्थित हुआ तो उसने कलकत्ता के स्थान पर खाटू में ही रह जाना उचित समझा। उसने रामेश्वरी से कहा, "माजी, मैंने कुछ दिन और आपकी सेवा मे रहने की स्वीकृति ले ली है।"

"किससे ले ली है ?"

"ललिता के पिता से।"

"और वह भी यहां रहेगा ?"

"नही। उनको भापा ने कहीं भेज दिया है। वे मुझ

मैं उनके पास चली जाऊंगी। वे तो मुझे कलकत्ता में अपनी प्रतीक्षा करने के लिए कह रहे थे। मैंने आपके यहां रहने का प्रस्ताव किया तो वे मान गए हैं।"

"बात तो बहुत ठीक है, परन्तु तुमको यहां से ले कौन जाएगा?"

"जिसको मेरी आवश्यकता होगी।"

रामेश्वरी हंस पड़ी। कहने लगी, "तुम जैसी चांद के समान सुन्दर और गौर वर्णीय लड़की की आवश्यकता तो सुमेर को भी हो सकती है।"

"मांजी, उस समय भूल हो गई थी। अब वह नहीं हो सकती।"

"मैंने तुम्हारे घरवाले को बात बता दी है और उसे समझा दिया है कि तुम निर्दोष हो। यदि किसीकी भूल है तो यह उसकी अपनी ही है।"

"और उस दुष्ट की नहीं?"

"देखो लक्ष्मी, उसकी तो दुष्टता है ही। वह दण्डनीय है। वह क्षमा के योग्य नहीं। परन्तु भूल तुम्हारी और तुम्हारे पति की थी।"

"तो वे क्या कहते थे?"

"कहता था, कि तुम बहुत चतुर बनती थी। हो मूर्ख ही।"

"उनकी भूल तो केवल यह है कि जहां वे नित्य रात को जाकर सोते थे, उस दिन वहां नहीं गए।"

"हां, इसपर भी वह ठीक कहता था कि तुम मूर्ख हो।"

"यह कैसे?"

"तुम खुले कमरे में और माता-पिता के भी वहां होने पर उसको दृढ़ता से इन्कार कर सकती थीं। यदि गजाधर भी होता तो उसको भी इन्कार करना चाहिए था।"

लक्ष्मी उस समय की अपने मन की अवस्था का विश्लेषण कर रही थी। उसको समझ आ गया था कि उसने अपने पति को बेसब्र समझ और फिर स्वयं भी बेसब्र हो मूर्खता की थी।

उसके वहां रहने पर रामेश्वरी अपने परपोते की बहू की संगत में रहती हुई अनेकों ही नई-नई बातों के विषय में सुनती थी। एक दिन लक्ष्मी ने बताया, "हमारे यहां पुरुष सिगरेट-सिगार पीते रहते हैं और स्त्रियां सब प्रकार का काम करती हैं।"

"नौकरी और दुकानदारी भी ?"

"हां, माजी। दफ्तरों में लड़कियां पुरुषों से अधिक संख्या में काम करती हैं।"

"यह तो अन्याय है।"

"यही तो बात थी जिससे आकर्षित हो मैंने आपके पोते से विवाह की इच्छा की थी और वे मान गए थे।"

"और यदि यह बात न होती तो फिर तुम गजाधर से विवाह न करती क्या ?"

"कह नहीं सकती। एक बात कह सकती हूं। बहुत-सी बातों में यह एक बात थी। उदाहरण के रूप में एक बात यह भी थी कि आपके पौत्र मुझे भेंट में कीमती वस्तुएं देते रहते थे। वे सभ्यतापूर्ण बात करते थे। इसके साथ एक बात और भी थी।"

"वह भी बता दो। गजाधर में और कौन-सी विशेषता तुमने देखी थी।"

"वह विशेषता हिन्दू समाज में है। इसमें विवाह टूट नहीं सकता।"

८

जब जुग्गीमल कलकत्ता पहुंचा तो गजाधर का पत्र वहां आया हुआ था। गजाधर ने लिखा था, "भापा, मैं सुमेर और उनके पिता से पूरे चौबीस घण्टे पहले मद्रास और फिर कार्यालय में पहुंच गया था। मिस्टर अय्यर ने सब बैंकों को पत्र लिख रखा था कि सन्तरामजी मैनेजर नहीं रहे और उनके हस्ताक्षर मान्य नहीं होंगे। मैंने आते ही बैंक के 'ऑपरेटर' बनाने के फार्म मंगवाए और अब आपको उचित कार्यवाही करने के लिए भेज रहा हूं। हिसाब-किताब देखने पर बहुत गड़बड़ निकली है। बहुत-से चैक बैंक से रुपया निकालने के लिए काटे गए हैं, परन्तु उनका रुपया खाते में दर्ज नहीं। मैंने पुलिस और मजिस्ट्रेट के सामने अर्ज़ी कर उनके वारंट निकलवा लिए हैं। अगले दिन सन्तरामजी और सुमेरचन्द आए थे और मुझे कार्यालय में बैठे पा विस्मय में मुख देखते रहे। मैंने उनसे कहा भी कि उनको कलकत्ता जाना चाहिए था। वे कहने लगे, 'आपने चार्ज कैसे लिया है ?'

"मैंने जवाब दिया, 'लेजर पर अपने और मिस्टर अय्यर के हस्ताक्षर करा लिए हैं। जो कुछ चालू काम है वह मेरी आज्ञा से हो रहा है। भापाजी से प्राप्त अधिकार-पत्र मैंने मिस्टर अय्यर को दे दिया है।'

"'यह सब अनियमित तथा कानून विरुद्ध है,' सन्तरामजी का कहना था।

"इसपर मैंने उनसे कह दिया कि वे कानूनी चाराजोई कर सकते हैं। सन्तराम तो मिस्टर अय्यर से बात करने चले गए, परन्तु सुमेर वहां बैठा रहा और अपने काम करने की स्वीकृति के लिए कहता रहा। उसका कहना था कि उसका पिता उससे लड़ पड़ा है और वह अपने पिता के साथ काम नहीं कर सकेगा। उसे स्वयं अभी इतना अनुभव नहीं कि वह स्वतंत्र रूप से किसी अच्छे कारोबार को चला सके।

"मैंने उसे कहा है कि बिना आपकी स्वीकृति के उसे नौकरी नहीं मिल सकती तो उसने मुझे आपको लिखने के लिए कहा है। साथ ही उसने कहा है कि उसकी यह अर्ज़ी उसके पिता को न बताई जाए।

"अय्यर के साथ सन्तराम की क्या बात हुई है, मैं नहीं जानता। परन्तु मिस्टर अय्यर कह रहे हैं कि सन्तराम को ही चार्ज देने का अधिकार था। मिस्टर अय्यर चार्ज नहीं दे सकते थे। अतः वे भय अनुभव कर रहे हैं। परन्तु वारण्ट की बात से मैंने उसे आश्वस्त कर कल उनको घर पर ही पकड़वाने का विचार किया है।

"वैसे कार्य आरम्भ हो गया है। जो कुछ चैकों से प्राप्त हो रहा है, वह बैंक में जमा कराया जा रहा है। बैंकों से कुछ निकाला नहीं जा सकता और फर्म से अदायगी रुकी हुई है।"

जुगीमल ने कलकत्ता से एक योग्य वकील भेज दिया और गजाधर से पूछा, वह मद्रास में रहना पसन्द करेगा अथवा नहीं? यदि पसन्द करे तो उसके बाल-बच्चों को वहां भेजने का प्रबन्ध किया जा सकता है। अन्यथा उसका स्थानापन्न किसी अन्य को भेजा जा सकता है।

यदि वह वहां रहने के लिए तैयार है तो वह बताए कि सुमेर को रखना चाहेगा अथवा नहीं? स्थानीय अधिकारी की सम्मति से ही हम उस स्थान के कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकते हैं। यदि किसी

सहायक की ग्रावश्यकता हो और सुमेर को रखने का विचार न हो तो लिखें।"

यह भी लिखा था कि वकील वैंकों के लिए उचित ग्राज्ञापत्र ला रहा है। जब तक वकील को मद्रास मे रहना पड़े तब तक किसी अच्छे होटल मे उसके रहने का प्रबन्ध कर दिया जाए।

जुग्गीमल ने अपनी माताजी की योजना पर विचार आरम्भ कर दिया था। किसी सफल व्यापारी मे ये गुण अनिवार्य हैं कि वह निर्णयात्मक और निर्मल बुद्धि रखता हो। यह बुद्धि जुग्गीमल में थी।

जब वह अपने गाव के नरेशचन्द्र के साथ कलकत्ता मे पहली बार ही पहुचा था तो उसकी जेब मे मा के दिए रुपयों मे से केवल दो सौ रुपये थे। वह मट्टे के विषय मे सुन चुका था और अपने मन मे निश्चय कर चुका था कि वह यह काम नही करेगा। अत. वह नरेश की सिफारिशी चिट्ठी लेकर कपड़े के थोक व्यापारियो से मिलने चला गया। उनके माल की दलाली की स्वीकृति लेकर वह बाज़ार मे घूमने लगा। काम एक सप्ताह मे चलने लगा। छुट-पुट आर्डर दुकानदारो से मिलने लगे। एक महीने के उपरान्त उसने अपना हिसाब गिना तो उसके लगभग दो सौ रुपये कमीशन के बने। वह परचून दुकानदारो से आर्डर लाता था और थोक दुकानदारों से माल सप्लाई करवाता था। जब बिके माल का रुपया वसूल हो जाता तो दुकानदार उसकी कमीशन खाते मे लिख लेते थे। एक पैसा रुपया उसकी कमीशन होती थी। इससे ही दो सौ रुपया उसका दुकानदारो के पास कमीशन का हो गया था। वह नरेश के मकान की ड्योढी के समीप एक कोठरी मे रहता था। ढाबे पर खाना खाता था और ट्राम की सवारी कर काम के लिए घूमता था। उसके पास सब प्रकार के खर्चे निकालकर एक सौ रुपया बच गया। इसको उसने डाकखाने मे जमा कर दिया। एक वर्ष मे उसके पास दो सहस्र रुपया जमा हो गया। इस पूजी से उसने माल स्टाक करने का प्रबन्ध कर लिया। दो सहस्र से दस सहस्र का माल मन्दी के दिनो मे खरीद लिया जो दुर्गापूजा के दिनों मे तेरह सहस्र रुपये का बिक गया। अब वह थोक दुकानदारो से अपने नाम पर माल क्रय करने लगा और परचून के दुकानदारों के पास बेचने लगा। अब उसे एक गोदाम लेना पड़ा।

कार कपड़े में लाभ की मात्रा एक पैसे से ए
गई । परिणाम यह हुआ कि दूसरे वर्ष में उसने दो लाख
व्यापार किया और बारह हज़ार रुपया लाभ हुआ । भोजन
का खर्चा निकालकर दस हज़ार नकद बच गया ।
सरे वर्ष में वह बीस लाख का व्यापार कर सका और इसी काल
कलकत्ता की तीन मिलों की सोल एजेन्सी मिल गई । अब उसे
लय बनाना पड़ा । नरेश के मकान में ही एक फ्लैट लेकर एक
नौकर रखकर काम आरम्भ हो गया । वह स्वयं पूर्वी बंगा
र उत्तरी बंगाल, तथा आसाम का, जिस क्षेत्र की उसे एजेन्सी मि
, दौरा करता था । उसने दो सफरी एजेन्ट भी रख लिए थे और
क्टरियों के खर्चे पर विज्ञापन भी देता था ।

परिणाम यह था कि पांच वर्ष के अनथक पुरुषार्थ, व्यापारी परिवार की नैसर्गिक बुद्धि के बल, अपनी मां के आशीर्वाद तथा परमात्मा की सहायता से पांच लाख रुपये बैंक में जमा हो जाने पर उसने मां को लिखा, "मां ! अब तुम तीन बातें करो । एक तो बताओ इस पांच में तुम्हारे दानधर्म के खाते में कितने देने बनते हैं ? दूसरे, तुम ना। दान-दक्षिणा में देने के लिए कहती हो ? तीसरे, मेरे । प्रबन्ध कर दो ।"

छले वर्ष वह बीस हज़ार रुपया खाटू में नया मकान बनाने के भेज चुका था । रामेश्वरी पुत्र की सफलता और उसकी सद्बुद्धि र प्रसन्न थी । उसने लिखा था, "मुझसे तुम भगवान के खाते के अढ़ाई सौ रुपये लेकर गए थे । रुपया सैकड़ा ब्याज दर ब्याज से उसक हिसाब गिनकर भगवान के नाम का खाता खोल उसमें जमा क दो । शेष जितना तुम्हारे पास बचे उसमें से तेरह प्रतिशत रुपया अ काम का धर्मादा निकालकर वह भी उसी खाते में जमा करा द और कार्तिक सुदि पंचमी को यहां पहुंच जाओ । त्रयोदशी को तुम् विवाह होगा तथा पूर्णिमा को तुम सोलह वर्ष की पत्नी को लेकर कल के लिए जा सकोगे ।"

जैसी कार्यकुशल बुद्धि पुत्र की थी, वैसी ही मां की भी थी ने विवाह की इच्छा प्रकट की तो मां ने प्रबन्ध कर दिया । प स्वरूप जुग्गीमल ने मां के दो सौ पचास रुपये के चार सौ

सागर औ

रुपये धर्मादा में जमा करा दिए और स्वयं अपने लाभ में से तेरह प्रतिशत के हिसाब से पैंसठ हजार रुपया उसी खाते में जमा करा दिया।

फिर वह विवाह के लिए गाव में जा पहुंचा। बनवारीलाल गांव में रुपया ब्याज पर देकर काम चलाता था। इससे वह पचास-साठ रुपये मासिक आय कर सकता था। व्यापार में पुत्र की सफलता का वृत्तान्त सुन वह चकित रह गया था और चाहता था कि अब वह भी अपने पुत्र के विवाह पर दहेज मागे। परन्तु रामेश्वरी के विचार की दिशा दूसरी थी। उसने अपने पति से कह दिया था कि यह दौलत लडके ने स्वयं पैदा की है, उसके माता-पिता ने उसे उत्तराधिकार में नही दी। इस कारण वे लड़की के माता-पिता से यह नही कह सकते कि वे अपनी लड़की को उत्तराधिकार मे कुछ दें।

लड़का सुन्दर पत्नी की अधिक लालसा करेगा और उसके परिश्रम से धन सचय करने का ठीक पुरस्कार उसे सुन्दर और सुशील पत्नी लाकर देना है, न कि बडे दहेज वाली पत्नी। अतः रामेश्वरी ने यत्न से एक सुन्दर, सभ्य, सुशील और निर्मल बुद्धि की पत्नी ढूंढ रखी थी। पिता ने भी एक सम्बन्ध ढूढ रखा था, जहा से उसको पचास हज़ार की कीमत का दहेज मिलने की आशा थी। दोनों सम्बन्ध जुग्गी के निर्णय के लिए रखे हुए थे। माता ने पुत्र को लिख दिया था कि वह कार्तिक सुदि पंचमी को गाव मे पहुच जाए, उसके विवाह का प्रबन्ध त्रयोदशी तक हो जाएगा।

जुग्गीमल गाव पहुंचा तो उसके सामने दोनों प्रस्ताव रख दिए गए। पिता ने बताया, "जोधपुर के सेठ करोड़ीमल की लडकी है। आयु पन्द्रह वर्ष की है। दहेज मे पचास हज़ार के आभूषण, वस्त्र और नकद होगा।" मां ने प्रस्ताव रखा, "गांव के हेतराम, अनाज के दुकानदार, की लड़की किशोरी है। लड़की लम्बी, ऊंची, गौर वर्ण और सुन्दर रूपरेखा की है। दहेज की कुछ आशा नही। विवाह पर भी कुछ अधिक खर्च नही कर सकेंगे। लड़की सोलह वर्ष की है।"

रामेश्वरी ने कह दिया, "बेटा, अब तुम बताओ तो शकुन दो दिन में मिल जाएगा। बताओ किनका शकुन लें? जोधपुरवालों का पुरोहित शकुन लेकर गाव में आया हुआ है।"

"मां, तुम क्या कहती हो?"

“देखो जुग्गी, मैं तुम्हारे पिता की वात का उल्लघन नहीं कर
सकती। इस कारण मैं यह नहीं कहूंगी कि तुम यह अथवा वह स्वीकार
करो। हम दोनों ने परस्पर यह निश्चय किया है कि जो तुम कहोगे
वही होगा।”

“पिताजी, आप क्या कहते हैं?” जुग्गीमल ने अपने पिता से पूछा।

“मैं उससे अधिक कुछ नहीं कहूंगा, जो मैं कह चुका हूं। कारण यह
कि हमने यह परस्पर निश्चय किया है कि दोनों सम्वन्धों के गुण वर्णन
करने हैं, अवगुण नहीं।”

जुग्गीमल ने अगला प्रश्न कर दिया, “पिताजी! लड़की देखने में
कैसी है?”

“जैसी प्राय: वैश्य समाज में होती है। मैंने उसे देखा नहीं।”

“तो पिताजी मैंने किशोरी को देखा है। मैं उसके पक्ष में अपनी
राय देता हूं।”

इस प्रकार किशोरी से जुग्गी का विवाह हो गया। गांव के दस-
ीस वराती हेतराम के द्वार पर पहुंचे तो उसने विवाह कर लड़की को
ाल वस्त्रों में लपेटकर दे दिया।

घर पहुंच वनवारीलाल ने पत्नी और पुत्र को सामने वैठाकर कहा,
“मेरी गांव में और विरादरी में वहुत हेठी हुई है।”

“इस हेठी से क्या होगा, पिताजी?” जुग्गी ने पूछ लिया।

“आगे विवाह होने कठिन हो जाएंगे।”

“और किसका विवाह करना है आपको?”

“तुम्हारे वाल-वच्चे तो होंगे ही।”

“पिताजी, उनकी चिन्ता आपको नहीं करनी चाहिए। मैं निपट
लूंगा।”

“मेरे सम्वन्धियों का तो मुख भी मीठा नहीं कराया गया।”

“पिताजी, वह मैं करा देता हूं।”

अतः जुग्गीमल ने अगले दिन अपने घर में विरादरी के लोगों का
एक वहुत वड़ा भोज करा दिया। इसपर भी वनवारीलाल प्रसन्न नहीं
हुआ, परन्तु रामेश्वरी अति प्रसन्न थी। उसने अपने सव भूपण लड़की
को पहना दिए और उसे भोज के दिन विरादरी की स्त्रियों में सजधज
कर वैठा दिया।

बिरादरी की स्त्रियां हेतराम और उसकी स्त्री पर विस्मय करती थीं कि वे व्यर्थ में ही इनको इतना निर्धन मानती थीं। वे तो अन्दर ही अन्दर अच्छी सुदृढ़ स्थिति रखते हैं।

जब लोग बनवारीलाल को पूछते, "सेठजी, यह भोज लड़की के पिता ने दिया है अथवा आप दे रहे हैं, तो बनवारीलाल मुस्कराकर चुप रहता और इस प्रकार अपनी हेठी, कि उसे लड़के के सुसराल से कुछ नहीं मिला, छुपा लेता था।

किशोरी पिता के घर में जब बारह वर्ष की आयु से ऊपर हुई थी, तभी से उसकी मां उसके विवाह के लिए यत्न करने लगी थी। परन्तु लड़केवाले यह सुन मौन साध जाते कि बस लड़की ही लड़की है और शकुन के अतिरिक्त मौली सूत्र ही मिल सकेगा। यत्न करते-करते किशोरी की मां हताश हो चुकी थी।

किशोरी भी माता-पिता में इस प्रकार की बातें होती सुनती रहती थी। उसका एक भाई था। वह उससे तीन वर्ष छोटा था। इनके अतिरिक्त घर में कोई अन्य बच्चा नहीं था। हेतराम का यह लड़का दीनानाथ घर की निर्धनता देख एक दिन घर से भाग गया था। दीनानाथ उस समय बारह वर्ष का था और किशोरी पन्द्रह वर्ष की। पिता की इतनी सामर्थ्य भी नहीं थी कि लड़के को ढूंढने का यत्न कर सके। अतः वह सन्तोष कर बैठा रहा।

अब पद्मा, किशोरी की मां, लड़की के लिए वर ढूंढने का प्रयत्न छोड़ चुकी थी और रूखी-सूखी खाकर रात को घुटने पेट में देकर सो रहने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं था।

किशोरी सोलह वर्ष की हो गई थी और एक दिन मां-बेटी अपने घर के आंगन में बैठ बाजरा छटक रही थीं कि बाहर रामेश्वरी ने आ द्वार खटखटाया। पद्मा समझ नहीं सकी कि उसके घर में कौन आया है। वह उठी और आंगन का द्वार खोल रामेश्वरी को खड़ी देख पांय लागूं कर मुख देखती रह गई।

पिछले वर्ष जग्गी के भेजे रुपये से टूटे-फूटे मकान को गिराकर रामेश्वरी ने नई हवेली बनवाई थी। गांव में सबसे अच्छी हवेली उसकी ही थी। अतः पद्मा तो स्वप्न में भी आशा नहीं कर सकती थी कि रामेश्वरी लड़की मांगने आएगी।

रामेश्वरी हेतराम के घर में घुस आई। पद्मा विस्मय करती उसके पीछे-पीछे आंगन में जाकर खड़ी हो गई। रामेश्वरी काम कर रही किशोरी को देख रही थी। एकाएक वह बोली, "किशोरी बेटा, ज़रा वह खाट इधर लाकर रख दो।"

किशोरी ने सामने दीवार के साथ खड़ी की हुई खाट एक तरफ डाल दी। रामेश्वरी ने पद्मा से कहा, "पद्मा, इधर आओ। ज़रा बैठ जाओ। तुमसे एक बात करनी है।"

पद्मा आदर के भाव में खड़ी ही रही और रामेश्वरी को बैठने के लिए संकेत कर पूछने लगी, "बहनजी, आप बैठिए और आज्ञा करिए।"

"पद्मा, तुम भी बैठो न! मुझे तुमसे एक आवश्यक बात कहनी है।"

पद्मा संकोच अनुभव करती हुई पायन्ते की ओर खाट के डण्डे पर बैठकर कहने लगी, "घर में कोई ठीक बैठने योग्य चौकी न होने से संकोच कर रही थी। हां, आज्ञा करिए।"

"किशोरी" रामेश्वरी ने सामने खड़ी लड़की को कहा, "तुम भी बैठो, बेटा।" उसने अपने पास खाट पर बैठने के लिए संकेत कर दिया।

किशोरी नहीं बैठी। वह कमरे में गई और भीतर से एक चटाई उठा लाई और सेठानीजी के पांव के पास बिछा पूछने लगी, "मौसी, जल लाऊं?"

"नहीं, तुम बैठो।"

रामेश्वरी ने बात पद्मा से उसी समय आरम्भ कर दी थी, जब किशोरी चटाई लेने कमरे में गई हुई थी। रामेश्वरी ने कहा, "पद्मा बहिन, मैं किशोरी को अपने घर ले जाने के लिए मांगने आई हूं।"

पद्मा इस बात का अर्थ समझ अपनी कठिनाई का वर्णन करने में संकोच अनुभव कर रही थी कि किशोरी जो चटाई ले आई थी रामेश्वरी के कहने पर उसपर बैठ गई। रामेश्वरी ने एक क्षण तक पद्मा के उत्तर की प्रतीक्षा कर स्वयं ही आगे कह दिया, "तो ठीक है न? देखो, जुग्गी कलकत्ता से आया है और मैंने इस बात का विश्वास कर कि तुम मेरी बात में न नहीं करोगी उसे कलकत्ता से इसी प्रयोजन से बुलाया है।"

"पर सेठानीजी, हम बहुत ही निर्धन लोग हैं।"

"उसका इस बात से सम्बन्ध नहीं। ईश्वर की कृपा है। जुग्गी का

कारोबार कलकत्ता में चल रहा है। भगवान की दया है।"

अब पद्मा ने साहस से कहा, "किशोरी आपकी ही लड़की है। इसे आपकी सेवा करते देख मेरा चित्त प्रसन्न ही होगा। परन्तु—"

वह आगे नहीं कह सकी और तरल नेत्रों से रामेश्वरी के चरणों में देखने लगी।

रामेश्वरी ने देखा और समीप बैठी किशोरी की पीठ पर हाथ रखकर कहा, "तो यह मेरी लड़की हो गई। क्यों किशोरी, बनोगी मेरी लड़की?"

पद्मा ने कह दिया, "किशोरी, मौसी के चरण स्पर्श करो। ये बहुत अच्छी हैं।"

पद्मा की आखों से प्रसन्नता के अतिरेक से आंसू बहने लगे थे। किशोरी समझ रही थी। वह रामेश्वरी के पावों की तरफ देखते हुए बैठी रही। रामेश्वरी किशोरी की पीठ पर हाथ फेरकर प्यार देती रही। फिर एकाएक वह उठी और बोली, "देखो, तुम किशोरी के पिताजी के हाथ नारियल, छुहारे, केसर आज ही भेज देना। आज शुभ दिन है और जुग्गी विवाह कर तुरन्त लौट जाना चाहता है।

"अच्छा, अब मैं जा रही हू। अपने पति को एक घण्टे में भेज देना। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ लाने की आवश्यकता नहीं।"

रामेश्वरी चली गई। पद्मा इसको इतना बडा सौभाग्य मानती थी कि वह इसपर विश्वास नहीं कर सकी।

कितनी ही देर तक वह मूर्तिवत् किंकर्तव्यविमूढ की भांति खड़ी रही। किशोरी चटाई पर बैठी अपने नये जीवन मे प्रवेश पाने के विषय में विचार करने लगी थी। उसने जुग्गी को देखा था। वह गाव का लड़का था और वह उसे घूमते-फिरते देखती रही थी। यह उस समय से छः-सात वर्ष पहले की बात थी। वह तब की बात का चिन्तन करते हुए जुग्गी की रूपरेखा स्मरण कर रही थी।

एकाएक मां ने लड़की से कहा, "किशोरी, अपने बाबा को बुलाओ।" हेतराम की दुकान मकान के आगे सड़क की ओर थी। मकान में से भी दुकान को मार्ग था। पद्मा का कहना था कि भीतर के मार्ग से जाकर किशोरी अपने पिता को बुला लाए।

किशोरी ने भीतर का द्वार खोल दुकान मे झांककर देखा तो

दुकान पर जुग्गी के पिता बनवारीलाल को बैठा देख भागकर वापस आ गई। मां ने प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखा तो उसने कह दिया, "बाबा के पास कोई बैठा है।"

"तो फिर क्या हुआ? आवाज़ दे देती।"

किशोरी ने उत्तर नहीं दिया, परन्तु उसके गालों पर लाली दौड़ गई। पद्मा को सन्देह होने लगा कि कहीं जुग्गी स्वयं दुकान पर न आया हो। अतः वह स्वयं जाकर देखने लगी। जब उसने खुले द्वार में से झांका तो बनवारीलाल उठकर जा रहा था और हेतराम खड़ा हो सेठजी को हाथ जोड़ नमस्कार कर रहा था। बनवारीलाल गया तो पद्मा ने दरवाज़े पर थाप देकर पति का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर बुला लिया।

६

"ये सेठजी क्या कह रहे थे?" पद्मा ने अपने पति को मकान के एक कमरे में बुला, बैठाकर पूछ लिया।

"वही जिसकी मैं आशा नहीं करता था। जुग्गी के लिए किशोरी को मांग रहा है।"

"तो आपने क्या कहा है?"

"यही कि वे गांव के मालिक हैं। भला उनको मैं किसी भी बात के लिए इन्कार कैसे कर सकता हूं। वे एक घण्टे में अपने घर आने के लिए कह गए हैं।"

"कुछ और भी कह गए हैं?"

"और तो कुछ नहीं। दो मिनट तक ही तो बात हुई है। आए और चल दिए।"

"अच्छा, ऐसा करिए। एक नारियल, चौदह छुहारे और केसर, चावल, मौली का तार लेकर उनके घर चले आइए।"

"यह सब कुछ तो उन्होंने कहा नहीं।"

"यह सब कुछ उनकी पत्नी मुझे कह गई है। किशोरी की पीठ पर हाथ फेर उसपर अपना हक जमा गई है।"

हेतराम भी कुछ देर तक भौचक्का हो बैठा रहा। फिर कह उठा,

"भगवान अपने कार्य को विचित्र ढंग से करता है।"

वह नारियल इत्यादि और अपनी पत्नी को साथ ले बनवारीलाल की हवेली के द्वार पर जा पहुचा। बनवारीलाल ने अपने आसपास के दो-चार पडोसियो को बुला रखा था। शकुन हुआ और फिर त्रयोदशी को विवाह हो गया। पूर्णिमा के दिन जुग्गी किशोरी को लेकर कलकत्ता चला गया।

अपने पुत्र और पुत्रवधू के साथ रामेश्वरी और बनवारीलाल भी कलकत्ता गए। जुग्गी ने विवाह के लिए गाव आने मे पूर्व नरेश की हवेली मे ही एक फ्लैट रहने के लिए ले लिया था और वह अपनी पत्नी और माता-पिता को उसी मकान में ले गया। अभी तक किशोरी ने अपने पति के सम्मुख भी घूघट नही उठाया था। वह अपनी सास के लाड़-प्यार को ही पाती रही थी। रामेश्वरी का विचार था कि दोनों अपने घर मे पहुचकर ही परस्पर परिचय पाएगे तो ठीक रहेगा। गाव में तो विवाह के उपरान्त एक ही रात रहना हुआ था और उस रात रामेश्वरी की बहिनें-भतीजिया आई हुई थी और उन्होंने नई बहू को अपने अधिकार मे कर रखा था। त्रयोदशी को विवाह हुआ। उसी रात डोली आ गई। चौदस की रात को घर की औरतें किशोरी की सगत मे रही और फिर पूर्णिमा को यात्रा पर चल पड़े। दस दिन की लम्बी यात्रा के उपरान्त कलकत्तावाले मकान मे जा पहुचे। बाजार से पूरी मंगवा, खा सो गए। मा ने दिन-भर सोकर सायकाल उठ भोजन का प्रबन्ध करना आरम्भ किया तो किशोरी भी जागकर सास का हाथ बटाने उसके पास आई। सास ने कहा, "किशोरी बेटा, वह कमरा तुम्हारा और तुम्हारे पति का है। जरा उसमे देखो तो क्या सामान चाहिए ?"

"मांजी, यह भोजन की व्यवस्था हो जाए तो···"

"नही बहू। अभी कुछ दिन ठहरो, जब मैं चली जाऊगी तब तुम अपना साम्राज्य यहा भी जमा लेना। अभी तो तुम्हारा राज्य उस स्थान पर ही है।"

किशोरी समझी नहीं। रामेश्वरी ने कह दिया, "उस कमरे को ठीक-ठाक करो।"

विवश किशोरी उठकर उस कमरे मे पहुची। कमरा तो पहले

ही ठीक किया हुआ था। जुग्गीमल यह न जानता हुआ भी कि कौन उस कमरे के सुख-आराम का भोग करने आ रहा है, कमरे को सब प्रकार से सुसज्जित और सुख-सुविधायुक्त बना गया था। कमरे की खिड़कियां बन्द थीं। किशोरी ने खोल दीं तो दूर हुगली का दृश्य दिखाई दिया। उसमें छोटी-बड़ी नावें, बजरे और जहाज़ खड़े और चलते दिखाई देने लगे। राजस्थान के एक गांव में पैदा हुई और पली लड़की के लिए यह दृश्य नवीन और रोचक था। वह देखने खड़ी हुई तो खड़ी ही रह गई। उसे पता ही नहीं चला कि उसके पीछे-पीछे कमरे में कोई आया है। वह नदी का दृश्य देखने में सर्वथा लीन थी।

पीछे आनेवाला जुग्गी ही था। मां ने पतोहू को भेज जुग्गी को जगा दिया और उससे कहा, "जुग्गी, सात घण्टे सोए हुए हो गए। कब तक सोओगे ?"

"मां, दस दिन और रात की निरन्तर यात्रा ने तो सारा अंजर-पंजर ढीला कर रखा है।"

ये यात्रा से आकर बन्द किया हुआ फ्लैट खोल, बाहर के गोल कमरे में ही सामान रख सुस्ताने बैठे और सो गए थे। सबसे पहले मां जागी और रसोईघर देखने गई तो वहां बर्तन, लकड़ी, अंगीठी सब तैयार रखा देख समझ गई कि जुग्गी बीबी लेकर ही लौटने का विश्वास करके गया प्रतीत होता है। वह अपने लड़के के दूरदर्शी होने पर प्रसन्न थी। वह अभी वस्तुओं का निरीक्षण कर विचार ही कर रही थी कि किशोरी आ गई। किशोरी अंगीठी पकड़ आग सुलगाने के विषय में विचार कर रही थी कि मां ने उसे अपने सोने के कमरे को ठीक करने के लिए भेज दिया।

मां ने जुग्गी को जगाकर बीबी के पीछे सोने के कमरे में भेज दिया। उसने कहा, "जुग्गी, जाओ। किशोरी उस कमरे में तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है।"

"क्यों ? किसलिए ?"

मां मुस्कराई और बोली, "तुम्हारे अंजर-पंजर को ठीक-ठाक करने के लिए।"

जुग्गी को कुछ समझ आई तो उठा और बिना एक भी शब्द बोले कमरे में चला गया। वह कमरे में गया और अभी किशोरी के पीछे

खड़ा हो देख ही रहा था कि वह खिड़की में से क्या देख रही है, मां ने कमरे का द्वार बन्द कर बाहर से कुण्डा चढा दिया।

कुण्डा चढ़ने का शब्द कमरे में दोनों प्राणियों ने सुना। दोनों ने घूमकर देखा तो किशोरी ने अपने पति को द्वार की ओर देखते हुए धीरे से पूछ लिया, "क्या था ?"

जुग्गी हंसकर बोला, "मा थी।"

"क्या कहती थी ?"

"यही कि तुम मेरी प्रतीक्षा कर रही हो।"

"प्रतीक्षा ?"

"हा। कह रही थी कि बारह दिन से तुम मेरी प्रतीक्षा कर रही हो।"

किशोरी समझ रही थी और पत्नी की प्रतीक्षा का अर्थ जान, कुछ विचारकर बोली, "जी नही। माजी को गिनने में भूल हुई है। मैं पिछले सोलह वर्ष से प्रतीक्षा कर रही हू।"

इतना कहते-कहते वह झुककर जुग्गी के चरण स्पर्श कर बोली, "इसका पुण्य लाभ करने की प्रतीक्षा कर रही थी।"

"तो तुम मेरी तब से प्रतीक्षा कर रही थी ?" जुग्गी ने उसे उठाकर गले लगाया और पलंग पर बैठा उसकी कमर में हाथ डाल स्वय भी उसके समीप बैठ बोला, "पर यह तो केवल बीस दिन पहले ही निश्चय हुआ था कि तुम मेरे घर आओगी, अथवा एक जोधपुर के लखपती सेठ की लड़की ?"

"हां। पर मैं तो भगवान की प्रतीक्षा कर रही थी। और वे आए हैं।"

"भगवान आए हैं ? कहां आए हैं ?"

"उन्हीके तो चरण छुए थे और उन्होंने ही अपने समीप बैठा रखा है।"

"ओह ! समझा। तो तुम मुझको भगवान समझ रही हो। देखो, किशोरी। मैं भगवान हूं या क्या हू, इसका निर्णय तो पीछे होगा। अभी तो जुग्गी हूं।" उसने उसको पुनः अपने समीप खींचते हुए उसका मुख चूमकर कहा, "डरो नही। मैं काट नही रहा हूं। मैं तुमको बताने लगा हू कि आज से एक मास पूर्व मां का पत्र पा मैं यहां से चलने लगा तो इस मकान का यह भाग खाली देख इसे किराये पर लेकर ठीव

गांव को चल पड़ा। मां ने लिखा था कि मेरा विवाह होगा। सो यह कमरा सुहागरात के लिए सजाया था।

"गांव पहुंचा तो मां और बाबा में विवाद हो रहा था कि इस कमरे की शोभा किशोरी होगी या वह जोधपुर वाली। विवाद में मेरी राय मांगी गई। मैंने किशोरी को देखा हुआ था, मिट्टी में लथपथ अपने बाबा की दुकान के बाहर कंकरों से खेलते हुए। बस तुरन्त बोल उठा, 'मैं तो किशोरी को पत्नी बनाऊंगा।' बस मां की जीत हो गई और वे फिर तुमको ले आईं। दस दिन की भाग-दौड़ के उपरान्त मुझे मां ने बताया है कि तुम मेरी प्रतीक्षा कर रही हो।"

"मैं तो भगवान की प्रतीक्षा कर रही थी। एक दिन, जब मैं अभी पांच वर्ष की रही हूंगी, हमारे पड़ोस में एक लड़की का विवाह हुआ तो वह सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों से लदी-फदी विदा हुई। मैंने मां से पूछा था, 'मां। मेरा विवाह कब होगा ?'

"'जब भगवान करेगा।'

"'वे कैसे करेंगे ?'

"'वे तुमको लेने आएंगे।'

"'अभी क्यों नहीं आते ?'

"मां ने हंसते हुए कहा था, 'तुमको अभी भगवान की प्रतीक्षा करनी है। अभी तो पांच वर्ष ही हुए हैं। इतनी प्रतीक्षा पर्याप्त नहीं।' सो मैं भगवान के आने की प्रतीक्षा करने लगी। अब आप आए और मुझको भूषण, वस्त्र पहना डोली में बैठा ले आए हैं। मैं तो भगवान समझ ही यहां आई हूं।"

"तो भगवान का कहा मानो।"

"बताइए क्या करूं ?"

एक घण्टे-भर के बाद जुग्गी ने कमरे का द्वार खटखटाया। मां ने बाहर से कुण्डा खोल पूछा, "क्या है जुग्गी ?"

"मां, भूख लगी है।"

"तुमको अथवा किशोरी को ?"

"दोनों को।"

"तो आ जाओ। भोजन तैयार है।"

जुग्गी कमरे से निकला तो किशोरी भी घूघट काढे हुए बाहर आ बैठ गई ।

इस एक घण्टे मे जीवन-भर का परिचय प्राप्त कर दोनों हाथ में हाथ दिए जीवन-पथ पर चल पडे ।

इस बात को हुए आज इक्यावन वर्ष से ऊपर हो चुके थे और किशोरी ने पति को भगवान मान ही उसकी पूजा और सेवा की थी । भगवान ने भी जुग्गी के रूप में उसपर सुख-सुहाग की वर्षा की थी ।

इस समय किशोरी की सन्तानो में बहत्तर प्राणी थे । लडके थे, लडकिया थी, पतोहुए थी, दामाद थे, पौत्र, पौत्रिया थी, उनकी भी बहुए और दामाद थे और उनके घर में भी बच्चे हो रहे थे ।

इस परिवार-वृक्ष की शाखाए देश के बडे-बडे नगरों और अब विदेशों मे भी जाने लगी थी । परिवार के सब सदस्यों मे प्रेम तथा सहानुभूति थी और रामेश्वरी के सबके प्रति अपने व्यवहार से सब उसको घर की पूज्या मानते थे । सेठ बनवारीलाल भी मान और आदर से देखे जाते थे, परन्तु इस कारण कि वे रामेश्वरी देवी के पति हैं । वैसे घर के सदस्यों को न तो सेठजी का परिचय था, न ही उनसे किसी प्रकार का लगाव ।

रामेश्वरी जब उत्तराखण्ड की चारो धामो की यात्रा पर जाने लगी थी तो जुग्गी कलकत्ता में था और उसने मा को लिखा था, "मा, देख लो । तुम पचहत्तर वर्ष से ऊपर हो रही हो । कर सकोगी यह कठोर यात्रा ? कही ऐसा न हो कि हमारी मा हमसे छिन जाए ?"

मा ने जुग्गी को पत्र लिख दिया, "भगवान जब चाहेगा तो न मैं जाने से इन्कार कर सकूगी और न ही तुम सबका रोना-गाना उसे ले जाने से मना कर सकेगा और यदि वह ले जाना न चाहे तो फिर कहां और कैसे जा सकूगी ?

"मैं कल यहा से चल रही हूं । तुम्हारे बाबा नही जा रहे । उनके मन में भगवान पर कभी भी विश्वास नही रहा । आज भी नही है । वे समझते हैं कि खाटू मे भगवान पकड़ने नही आएगा । सो वे नही जा रहे । नन्दू मेरे साथ जा रहा है ।

"वहां से लौटकर लिखूगी ।"

उसके लौटने पर तो जुग्गी को तार गया और उसने परिवार के सब सदस्यों को तार और टेलीफोन से सूचित कर [illegible]

आरम्भ कर दी।

यह रामेश्वरी के प्रति परिवार के सदस्यों का प्रेम और आदर-भाव ही था जो सबको खाटू में खींच लाया था। जुग्गी ने सबको एकत्र देखा तो ब्रह्मभोज और फर्म के सदस्यों की बैठक का आयोजन कर दिया।

खाटू की हवेली बहुत बड़ी थी, परन्तु सदस्यों की संख्या उसमें भी समा नहीं सकी और विवाह के बरातियों की भांति सब कमरों में ठसा-ठस भरे पड़े रहे थे। इसी भीड़-भाड़ में सुमेरचन्द और लक्ष्मी की दुर्घटना हो गई और उसने सुमेर तथा उसके पिता के विरुद्ध पक रही खिचड़ी में उबाल ला दिया।

इसपर भी जुग्गी अभी कोई कार्यवाही न करता यदि सन्तराम मांजी को अनपढ़, अनभिज्ञ और मूर्ख न कहता। बात बढ़ गई तो फिर जुग्गी ने उसे काम से पृथक् और फर्म से बाहर करने का निश्चय कर लिया। जब अन्य सदस्यों को भी उसी विचार का देखा तो उसने निःसंकोच हो गजाधर को उसके स्थान पर कार्य करने के लिए भेज दिया।

अब गजाधर का पत्र आया था कि सन्तराम मुकदमा करने की धमकी दे रहा है और रुपये का ग़बन भी पकड़ा गया है तो जुग्गीमल ने फर्म के वकील को बुलाकर उसे सब बात समझा और आवश्यक काग-ज़ात देकर मद्रास भेज दिया।

उसी दिन घर आ जुग्गी ने अपनी पत्नी को सन्तराम के विषय में बताया तो किशोरी ने कहा, "यह तो खेत में आक पैदा हो गया है।"

"मैंने तो इसे खेत में से उखाड़कर फेंक दिया था, परन्तु वह गिरा खेत में ही और अभी भी खेत को जला डालने का भय बना हुआ है।"

"इसको फूंककर राख कर दो, तभी परिवार का कल्याण हो सकता है।"

"मैं डर रहा था कि है तो तुम्हारा पुत्र ही। मोहिनी ही उसकी सिफारिश करने मांजी के पास पहुंची थी।"

"पर देखिए न, गजाधर और उसका पिता भी तो अपने ही हैं। खेत में उपकारी फसल की रक्षा के लिए अपकारी का विनाश आवश्यक है।

"मैंने दास बाबू से कह दिया है कि वह सन्तराम को समझाकर यहां भेज दें और यदि वे न मानें तो उन्हें एक ऐसी बात भी बता दी है जिससे

वह बांधकर कलकत्ता लाया जा सकता है।"

"ठीक है। मुझे अपनी स्वस्थ और कल्याणकारी सृष्टि की रक्षा करनी है। यह तो न जाने किस अशुभ मुहूर्त में उत्पन्न हुआ था कि मेरे मन में इसके प्रति कुछ भी मोह नहीं रहा।"

१०

सन्तराम और सुमेर खाटू से भागे इसी कारण थे कि वे फर्म के मुख्याधिकारी के सन्देश पहुंचने से पहले ही फर्म पर अधिकार जमा अपना पृथक् कार्य आरम्भ कर देंगे, परन्तु उनसे जुग्गीमल अधिक सतर्क सिद्ध हुआ।

सन्तराम और सुमेरचन्द घर पर यात्रा का सामान फेंक सीधे फर्म के कार्यालय में पहुंचे तो गजाधर को वहां बैठे देख विस्मय में खड़े रह गए।

सन्तराम तो गजाधर को मुकदमे की धमकी दे मिस्टर वैंकट अय्यर से मिलने उसके कमरे में चला गया और सुमेर गजाधर के पास बैठा रह गया। सुमेरचन्द को कुछ ऐसा समझ आ रहा था कि यदि वह अपने पिताजी से झगड़ा प्रकट कर फर्म में नौकरी पा जाए तो वह भीतर के भेद पिता को बताकर उनकी बहुत सहायता कर सकेगा।

सन्तराम को अय्यर से बात करने में बहुत देर नहीं लगी। चार-पांच मिनट में ही वह उसके कमरे से निकला और सुमेर से बोला, "चलो सुमेर, हमको तुरन्त थाने में रिपोर्ट कर देनी चाहिए।" पिता-पुत्र दोनों कार्यालय से निकले।

कार्यालय से बाहर निकल सुमेर ने पिता से पूछा, "किस थाने में रिपोर्ट करनी होगी?"

"तुम्हारी मां के।"

"मा के? वह भला क्या करेगी?"

"उसकी राय से ही तो यह सब कुछ कर रहा हूं। तुम्हारी राय से करता तो कलकत्ता पहुच तुम्हारे बाबा की मिन्नत-समाजत कर रहा होता।"

"पर मां तो साथ नहीं गई थी। और आप तो खाटू से ही यह

योजना बनाकर चले थे।"

"हां, सुमेर। तुम्हारी मां ने तो इस बात की सम्भावना जाने से पहले ही बता दी थी। तुम्हारी मां कह रही थी, 'आप दादी के निधन पर जा रहे हैं तो वहां तेरहवें के दिन पूर्ण परिवार एकत्रित होगा। परिवार में झगड़ा हुए बिना नहीं रहेगा। आप सावधान रहिएगा और पीछे यहां का भी ध्यान रखिएगा।'"

"मैं तो मां को इतना समझदार नहीं मानता था।"

"वह यह भी कहती थी कि उसको स्वयं वहां जाने में डर लगता है।"

"पर डर तो व्यर्थ निकला है।"

"नहीं, सुमेर, यदि वह जाती तो तुम्हारे बाबा हमको जूते लगवाकर गांव से निकलवा देते।"

पिता-पुत्र अपने निवासस्थान पर पहुंचे। उन्होंने अपना घर कार्यालय से दूर ले रखा था। यह भी सन्तराम ने अपनी पत्नी की राय से ही किया था।

सन्तराम की पत्नी राधा एक कहार की लड़की थी। उसके पिता का देहान्त उसके बाल्यकाल में ही हो गया था और उसकी मां सुखिया लड़की के साथ लखनऊ में चौका-बासन का काम कर पेट भरती थी। राधा उसके साथ थी।

जुग्गीमल एण्ड सन्स की लखनऊ शाखा का मैनेजर जुग्गीमल का बड़ा लड़का माधवप्रसाद था। वह अपनी पत्नी के साथ नरही में मकान लेकर रहता था। दुकान बाज़ार चौक में थी। चौका-बासन और घर की सफाई इत्यादि के लिए सुखिया और उसकी लड़की राधा पन्द्रह रुपया महीना, रोटी-कपड़े पर रखी गई थीं। सन्तराम को अपने बड़े भाई के पास काम सीखने भेजा गया था।

राधा न केवल उज्ज्वल रंग की थी, वरन् तीखे नख-शिख भी रखती थी। मां-बेटी को काम करते अभी चार-पांच मास ही हुए थे कि राधा की गर्भावस्था का माधव की पत्नी निर्मला को पता चल गया। उसने सुखिया को बुलाकर पूछा, "सुखिया, लड़की का विवाह कर दिया है?"

"हां सरकार।"

"कहां? तुमने बताया नहीं।"

"मैं आपको बताने का विचार कर ही रही थी। उसका घरवाला

मना कर रहा था। इसलिए चुप थी।"

"तो अब तो मैं स्वयं पता पा गई हूं। कहां रहता है राधा का घरवाला? हम उसे कुछ देंगे ही, कुछ लेंगे नहीं।"

"बबुआइन, वह कहीं दूर नहीं है। सन्तराम बाबू ने उससे विवाह किया है। वह यह कह रहा था कि वह स्वयं अपनी माजी को यह बात लिखेगा तो बात बन जाएगी। परन्तु ऐसा प्रतीत हुआ है कि भगवान मनुष्य की अपेक्षा अधिक तेजी से कार्य करता है।"

निर्मला सुखिया की बात सुन भौचक्की हो उसका मुख देखती रह गई। फिर कुछ विचारकर बोली, "अच्छा, सन्तराम से पूछूंगी। फिर बात करूंगी।"

माधवप्रसाद को जब इस घटना की सूचना दी गई तो उसने सन्तराम को बुलाया और पूछा, "क्या सुखिया सत्य कहती है कि तुमने राधा से विवाह कर लिया है?"

"हां, भैया।"

"किस पण्डित ने तुम्हारा विवाह कराया है?"

"किसी पण्डित ने नहीं। मैंने उसको एक वचन-पत्र लिखकर दिया है। रात जब सब सो जाते हैं तो वह मेरे सोने के कमरे में आ जाती है।"

"पर तुम अभी नाबालिग हो। तुम तो कोई इकरारनामा लिखने की सामर्थ्य नहीं रखते।"

"इसी कारण मैंने अभी बताया नहीं था। आखिर मैं एक दिन तो वयस्क होने ही वाला हूं। तब मैं अपने इकरारनामे का पालन करूंगा।"

"तब तक तुम परिवार से फारखती पा जाओगे। फिर इस बीवी का पालन-पोषण कैसे करोगे?"

"दादा, राधा सुन्दर और बुद्धिशील है। फिर भला उसको घर में स्थान क्यों नहीं मिल सकता?"

"घर के पुरखा हैं बापा। मैं उनको लिख रहा हूं। जैसा वे कहेंगे, किया जाएगा। तब तक तुम काम पर नहीं जा सकते।"

माधव ने कलकत्ता पत्र लिख दिया और सन्तराम को काम से पृथक् कर दिया। साथ ही सुखिया और राधा की घर में नौकरी समाप्त कर दी।

सन्तराम ने लखनऊ में एक पृथक् मकान ले लिया और राधा और

उसकी मां को लेकर वहां रहने लगा। इसपर भी वह नित्य दुकान पर आता और चुपचाप बैठकर चला जाता। माधवप्रसाद को पता चला कि दुकान के खाते में दस सहस्र रुपया कम हो गया है। जांच करने पर पता चला कि एक दस सहस्र रुपये का चैक रुपया निकालने के लिए सन्तराम के हाथ भेजा था। रुपया निकाला तो गया, परन्तु रोकड़ में जमा नहीं किया गया।

जुग्गीमल और किशोरी अपने छोटे लड़के की करतूत सुन लखनऊ आ गए। वे समझे थे कि यह पारिवारिक बात ही है। परिवार का एक लड़का किसी अनिश्चित लड़की को घर ले आया है। इस कारण किशोरी भी अपने पति के साथ लखनऊ आई थी।

लखनऊ पहुंच माधव से पता चला कि सन्तराम ने अपना पृथक् मकान ले लिया है और अपनी बीवी और सास के साथ वहां रहता है।

"खर्चा कहां से कर रहा है ?"

"मैं उसे एक सौ रुपया वेतन देता था, परन्तु उसने दुकान में से दस सहस्र रुपया बिना बताए ले लिया है। मैं समझता हूं कि उससे ही निर्वाह हो रहा है।"

जुग्गीमल तो सख्त नाराज़ था। वह सन्तराम को बेदखल करने का विचार करने लगा था, परन्तु वह किशोरी की सबसे छोटी सन्तान था और उसका उससे विशेष स्नेह था।

उसने कह दिया, "जी नहीं। पहले मुझे सन्तराम की पत्नी और उसकी मां से मिल लेने दो, तदुपरान्त विचार करेंगे।"

उस दिन सन्तराम कार्यालय में आया तो उसे अपने पिता के सामने उपस्थित किया गया। पिता ने सन्तराम को सामने बैठाकर पूछा,

"सन्त, विवाह कर लिया है क्या ?"

"जी।"

"और हमको बताया भी नहीं ?"

"मुझे आशा नहीं थी कि आप उसकी मन्जूरी देंगे।"

"क्यों ? बहुत कुरूप है तुम्हारी पत्नी ?"

"जी नहीं, वह बहुत सुन्दर है। उसका रंग माताजी के समान ही उज्ज्वल है और रूपरेखा में तो घर का कोई प्राणी भी उसके बराबर

नही है।"

"ओह ! इसपर भी तुम यह समझते थे कि हम उससे तुम्हारा विवाह स्वीकार नहीं करेंगे ?"

"इसलिए कि वह कहार की बेटी है।" जुग्गीमल यह सुन तो चुका था, इसपर भी उसने विस्मय में पूछ लिया, "तो तुमको एक सुन्दर स्त्री पाने के लिए एक नाली में हाथ डालना पड़ा है ?"

"पर पिताजी, वह गन्दी नाली नहीं है। वह हमारे जैसी इन्सान ही है। यदि ऐसा न होता तो उसको मुझसे बच्चा ही क्यों होता ?"

"तुमने एक बे-बाप की और बिरादरी से बाहरवाली लड़की के साथ विवाह किया है। परन्तु मूर्ख, इसपर भी हम तुमको मना नहीं करते। हम लड़की की रूपरेखा और बुद्धि की परीक्षा करते और जैसा तुम कहते हो कि वह सुन्दर है, गौरवर्णीय है, सुशील है और बुद्धिशील है तो हम उसका तुमसे विवाह धूमधाम से करते।

"अब भी तुम्हारी मा यहां आई है। वह किसी प्रकार का निर्णय करने से पहले तुम्हारी विवाहिता को देखना चाहती है। तुम जाओ और भाई के घर से माजी को अपने घर ले जाओ। यदि तुम माजी को सन्तुष्ट कर लेते हो तो फिर उस दस सहस्र रुपये की बात करेंगे, जो तुमने दुकान से चोरी कर लिए हैं।"

"उसकी बात भी कर लूंगा।" सन्तराम ने प्रसन्नता से प्रफुल्लित हो कह दिया। वह उठा और उसी समय माधवप्रसाद के मकान को चल दिया।

सन्तराम सायंकाल तक नहीं लौटा। जुग्गीमल और माधव-प्रसाद दुकान से घर गए तो वहां किशोरी, राधा और सन्तराम भी मिले।

किशोरी ने बताया, "मैं अभी-अभी आई हूं और दुकान पर आपको सूचना भेजने ही वाली थी कि आप आ गए हैं।"

"तो क्या निर्णय किया है ?"

"मैंने सन्त की पत्नी को अपना आशीर्वाद दे दिया है। वह भली लड़की प्रतीत होती है। किसी घटनावश कहार की बेटी की कोख में चली गई थी। अब एक अन्य घटनावश वह पुनः अपना स्थान पा गई है।"

जुग्गीमल ने कहा, "ठीक है। पर किशोरी, यह पारिवारिक समस्या है और घर का एक हाईकोर्ट भी है। उसकी अनुमति के बिना यह प्राणी परिवार में सम्मिलित नहीं किया जा सकता।"

"मांजी से स्वीकृति लेनी होगी?" किशोरी इतना कह गम्भीर हो गई। जुग्गीमल ने जब कुछ उत्तर नहीं दिया तो यह अर्थ समझा गया कि रामेश्वरी ही राधा को परिवार में सम्मिलित करने की स्वीकृति दे सकती है। किशोरी ने विचार कर कह दिया, "ठीक है। परन्तु देखिए, मैंने इस लड़की को आशीर्वाद दिया है और इस आशीर्वाद के पक्ष में वकालत करने के लिए मुझे हाईकोर्ट में स्वयं जाना होगा।"

"तो तुम इस लड़की के लिए गांव की यात्रा करोगी?"

"जी।"

"परन्तु दुकान का भी तो मामला है। सन्तराम ने बिना स्वीकृति के दुकान का दस सहस्र रुपया अपनी जेब में डाल लिया है।"

"हां, यह भी मैं सुन आई हूं। उसने उचित अधिकारी से पूछे बिना रुपया राधा की माता के पास ज़मानत रख दिया है। इस ज़मानत रखने की भी सफ़ाई राधा की मां ने दी है। यह रखना आवश्यक था। जात-बिरादरी में, आर्थिक स्थिति में और शिक्षा-दीक्षा में अन्तर के कारण किसी न किसी प्रकार की ज़मानत रखनी आवश्यक थी। इस आवश्यक ज़मानत के लिए रुपया तो आना ही चाहिए था।

"सन्तराम में यदि दोष है तो नैतिक साहस का है। वैसे वह कहता है कि वह चोर नहीं है। उसने चोरी घर में ही की है और वह भी घर में एक सुन्दर प्राणी को सम्मिलित करने के लिए।

"इसपर भी मैं यह सिफारिश करना चाहती हूं कि इस समय यह सत्रह वर्ष का है। जब यह वयस्क होगा तो इसको फर्म में भागीदार स्वीकार किया जाएगा। तब यह अपने लाभ में से यह दस सहस्र रुपया दे देगा। इससे प्रोनोट लिखा लिया जाए।"

"पर किशोरी, यह नाबालिग है। इसका लिखा प्रोनोट तो फर्म स्वीकार नहीं कर सकती।"

"तो उस प्रोनोट की मैं ज़ामिन हो जाती हूं। मेरा इतना कुछ तो फर्म के पास जमा है ही।"

किशोरी की इस वकालत और ज़मानत के उपरान्त भी परिवार की

बात रामेश्वरी से कही गई। किशोरी सन्तराम और राधा को लेकर खाटू जा पहुंची और रामेश्वरी अपनी पतोहू के आग्रह को टाल नहीं सकी।

परन्तु किशोरी के उत्साहपूर्वक राधा का पक्ष लेने से राधा और सन्तराम के मन पर विपरीत प्रभाव ही उत्पन्न हुआ था। सन्तराम तो राधा की सम्मति से जीवन चलाने लगा और मुखिया राधा के द्वारा सन्तराम पर राज्य करने लगी।

परिणाम यह हुआ कि माधव से झगड़ा हुआ तो उसने मां को छोटे लड़के का पक्ष लेते देख सन्तराम से पृथक् रहने मे ही कल्याण देखा। उसने पिता को लिखा कि वह सन्तराम के साथ काम नही करना चाहता। इसके उपरान्त एक मुन्शी भेजा गया और फिर जुग्गीमल स्वय आया। अन्त मे सन्तराम को स्वतन्त्र रूप से फर्म की एक शाख का कार्य करने के लिए बम्बई भेज दिया गया।

वहा से वह मद्रास आया और यहा कार्य करते हुए उसे दस वर्ष हो चुके थे। सन्तराम के दो ही लडके थे। एक सुमेरचन्द और दूसरा माणिकलाल। सुमेरचन्द का विवाह बम्बई के एक सेठ भागीरथ की लडकी शकुन्तला से इसी वर्ष हुआ था। सुमेर उसकी रूपरेखा से सन्तुष्ट नही था। माणिक राधा की प्रथम सन्तान था। उसका विवाह कलकत्ता मे और खाटू के नरेश की पोती नलिनी से हुआ था।

माणिक ने जब अपने पिता के टेढे व्यवहार को देखा तो वह अपने बाबा जुग्गीमल को लिख कलकत्ता में फर्म के मुख्य कार्यालय मे पहुच गया। उसने ही जब अपने पिता की नीति और आचरण की बात बताई तो जुग्गीमल और किशोरी भी सन्तराम को मन से निकाल उसके कारोबार की जाच का विचार करने लगे थे। इसी बीच मे रामेश्वरी के उत्तराखण्ड की तीर्थयात्रा से रुग्ण होकर लौटने का समाचार मिला और परिवार खाटू मे एकत्रित हो गया।

द्वितीय परिच्छेद

जुग्गीमल मां से एक नया विचार लेकर कलकत्ता पहुंचा था। मां ने ब्रह्मभोज और यज्ञ का पूर्ण वृत्तान्त और ख़र्चे का हिसाब सुनकर कहा था कि यह तो प्याऊ ही है। उसने लड़के से कहा था कि उसे कुआं बनवाना चाहिए।

मां की इस इच्छा की पूर्ति के लिए वह खाटू में ही विचार करने लगा था। फिर खाटू से कलकत्ता पहुंचने तक उसके मन में मां की योजना ने एक अस्पष्ट, पर स्थिर रूप धारण कर लिया था। वह इतना तो स्वयं ही समझ गया था कि प्याऊ लगाना एक अति उपयोगी कार्य होते हुए भी स्थायी कार्य नहीं है। जल पिलाने और उससे प्यासों की प्यास बुझाने के लिए कोई ऐसा स्थायी प्रबन्ध करना चाहिए जिससे कुएं की भांति स्वयमेव जल स्रवित होता रहे और प्यासे बिना किसीकी सहायता के स्वयं जल निकाल तृप्ति प्राप्त करते रहें।

परन्तु इस अस्पष्ट विचार को रूप मिला कलकत्ता में आकर। आर्यसमाज के एक संन्यासी नेता स्वामी सत्यानन्द वहां आए हुए थे। उन दिनों उनके उपदेशों की धूम थी। वे प्रायः रामकथा किया करते थे। इस कारण आर्यसमाज के क्षेत्र से बाहर के लोग भी उनकी कथा सुनने आते थे और उनके उपदेशों से कृतकृत्य होते थे।

स्वामीजी के धर्म-कर्म-सम्बन्धी विचारों की धूम जुग्गीमल के पास भी पहुंची। वे एक पंजाबी ठेकेदार श्रीचन्द्र के घर पर ठहरे हुए थे और नित्य सायंकाल घर से कुछ अन्तर पर एक पार्क में कथा किया करते थे।

जुगीमल को सूझा कि स्वामीजी से मां की बात बताकर कुएं खुदवाने की योजना बना ले। एक दिन वह अपनी घोड़ागाड़ी में सवार हो ठेकेदार श्रीचन्द्र के मकान पर जा पहुंचा। मध्याह्न के भोजनोपरान्त स्वामीजी एक घण्टा विश्राम करते थे और फिर तीन बजे से पांच बजे तक मिलने के लिए आए लोगों से बातें करते थे।

जिस दिन सेठ जुगीमल आया, दर्शक कम थे। अतः बातचीत करने को पर्याप्त समय मिल गया। स्वामीजी ने सेठजी का परिचय प्राप्त किया और पूछा, *"कुछ धर्म-कर्म भी करते हैं, सेठ साहब ?"*

"महाराज, उसीके सम्बन्ध में आपसे राय करने आया हू।"

"हा, तो क्या समस्या है आपकी ?"

"महाराज, मा इस समय पचहत्तर वर्ष से ऊपर हो चुकी है। मैं जब चौदह वर्ष का था तो मा ने एक-एक पैसा जमाकर अढ़ाई सौ रुपया धर्म-कर्म का इकट्ठा किया हुआ था। मेरी कलकत्ता कारोबार करने के लिए आने की इच्छा हुई तो मा ने वह धर्मादा का अढ़ाई सौ रुपया मुझे देकर कहा, 'यह धर्मखाते का रुपया है। इसको धर्म की अमानत मान इसका प्रयोग करोगे तो काम में बरकत होगी।' मेरे मन में यही भावना थी। मा ने पन्द्रह वर्ष में पैसा-पैसा करके वह अढ़ाई सौ रुपया इकट्ठा किया था। अत. मैं उस धनराशि को पवित्र समझ उसकी रक्षा करता रहा। मा के आशीर्वाद और भगवान की कृपा से काम मे बरकत हुई है। मैं अपने सपूर्ण लाभ मे से तेरह प्रतिशत रुपये का धर्मादा निकालता रहा हू। मा के अढाई सौ रुपये पर भी सूद दर सूद देकर एक भारी रकम हो गई है।'

"कुछ दिन हुए मैं मा के पास गया था। वहा एक वृहत् यज्ञ और ब्रह्मभोज कराया था। मा ने उसके उपरान्त यह कहा कि वह ब्रह्म-*भोज इत्यादि तो केवल प्याऊ ही था। वे कहने लगी कि अब तो मुझे* एक कुआं बनवाना चाहिए जिससे लोग सदा तृप्त होते रहे।

"मैं आपके पास इसी कारण आया हू कि आप बताने की कृपा करे कि मा के नाम पर कुआ कहा और कैसे लगवाऊ कि उनकी साध पूरी हो सके।"

स्वामीजी ने कुछ गम्भीर होकर कह दिया ,"कितना रुपया इन मे लगाना चाहते हो ?"

"महाराज, इस समय अस्सी लाख से ऊपर इस खाते में है। अभी तक लगभग साढ़े चार लाख इसमें प्रति वर्ष जमा हो रहा है।"

"और काम क्या करते हो ? सट्टे का ?"

"जी नहीं। मां ने धर्मादा का रुपया इसी शर्त पर दिया था कि यह काम मत करना। मां का विचार था कि सट्टे के अनिश्चित भय में धर्म का धन नहीं डालना। मैंने व्यापार ही किया है और हमारी फर्म में अब कई भागीदार हैं। उन सबका विचार है कि जुआ नहीं खेलना चाहिए। हम व्यापार का अभिप्राय यह समझते हैं कि आवश्यक वस्तुओं को उनकी उपज के स्थान से लेकर मांग के स्थान पर ले जाना। इसी काम के लिए हम दो पैसा रुपया से चार आना रुपया तक अपनी मज़दूरी प्राप्त करते हैं।"

स्वामीजी को सामने बैठा सेठ एक सुलझे हुए मस्तिष्क का व्यक्ति प्रतीत हुआ। अतः उन्होंने पूछा, "तो तुम्हारी मां कहती थी कि तुमने उस यज्ञ में प्याऊ लगाई थी ?"

"जी।"

"पर राजस्थान में पानी पिलाना भी कोई कम उपकारी बात नहीं।"

"महाराज ! ब्रह्मभोज में जल तो पिलाया ही जाता है, परन्तु उसमें यज्ञ, हवन, दान, दक्षिणा भी दिया था। ग्यारह ऋत्विक् हवन कराने आए थे। पास-पड़ोस के एक सौ ब्राह्मण भोजन के लिए आमन्त्रित थे और दो सहस्र के लगभग गांव के प्राणी भोजन करने आए थे। छोटी जाति के लोग एक सहस्र के लगभग थे। उन सबको दान में एक-एक रुपया, ब्राह्मणों को पांच-पांच रुपया और बच्चों को एक-एक रुपया दक्षिणा में दिया था।"

स्वामीजी यह सब वृत्तान्त मुस्कराते हुए सुन रहे थे। जब जुग्गीमल सब वृत्तान्त सुना चुका तो स्वामीजी ने पूछ लिया, "कुल कितना रुपया खर्च किया था ?"

"लगभग साढ़े छः सहस्र रुपया व्यय हुआ था। घर के प्राणियों को भेंट पृथक् दी थी।"

"और प्याऊ पर कितना खर्च किया था ?"

"महाराज, प्याऊ पर तो कुछ भी व्यय नहीं हुआ था।"

"तो सेठजी, वह यज्ञ था। वह प्याऊ नहीं थी। और तुम्हारी माताजी भी किसी कुएं के खोदने की बात नहीं कर रही थी।

"हम यह समझे हैं कि तुमने ब्राह्मणों को और निर्धनों को जो दक्षिणा और दान दिया था वह उनका कुछ दिन तक ही काम चला सकेगा। तुमको कुछ ऐसा काम करना चाहिए जिससे उनको रुपया ऐसे मिलता रहे जैसे कुए से जल मिलता है।

"कुएं का जल भी तो बिना पुरुषार्थ के प्राप्त नहीं होता। अतः वहां के लोगों को धन की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ तो करना ही पड़ेगा। करना भी चाहिए। प्याऊ की भांति हाथ पसार पीने की बात तुम्हारी मा को पसन्द नहीं प्रतीत हुई। वे चाहती हैं कि कुआ तो तुम बना दो और फिर जो वहां पुरुषार्थ से जल निकले वह सभी लें।"

जुगोमल के मन में प्रकाश हो रहा था। उसके मस्तिष्क में अस्पष्ट-सी योजना थी, वह स्पष्ट होने लगी। इसपर भी उसने पूछ लिया, "तो महाराज! आप क्या राय देते हैं?"

"देखो, सेठजी, मैं तो एक सन्यासी हू। यह कुए खुदवाने के विषय में मैं कुछ नहीं जानता। इसपर भी इतना तो कह ही सकता हू कि समाज में चार स्वभाव के लोग हैं। चारों के लिए उनके स्वभावानुसार कुए खुदवाने चाहिए। ब्राह्मण स्वभाववालों के लिए ज्ञान, धर्म और दान देने के साधन उपलब्ध कराने से उनके लिए कुआं खुद जाएगा।

"क्षत्रिय स्वभाववालों के लिए अस्त्र-शस्त्र चलाने, शारीरिक बल प्राप्त कराने और फिर इनका प्रयोग देश, धर्म, जाति के लिए कराना उनके लिए कुआं खुदवाना होगा।

"वैश्य स्वभाववालों के लिए अर्थ की प्राप्ति और उस अर्थ को धर्म-कर्म में व्यय करने की शिक्षा देना उनके लिए कुआ खुदवाना होगा।

"एक चौथा वर्ग भी है। उसको हम शूद्र वर्ग कहते हैं। वे लोग स्वेच्छा से भी विचार करने के अयोग्य होते हैं। उनको तुम अच्छे संस्कार देने का प्रबन्ध कर सकते हो। यही उनके लिए कुएं का कार्य करेगा।

"इस चौथी श्रेणी के लोग शिथिलबुद्धि, परन्तु सबल मनवाले होते हैं। इनके मन पर ऐसे सस्कार जमा देना एक शुभ कार्य होगा जिसके बल पर वे भी समाज तथा देश के लाभ मे कार्य

जीविकोपार्जन करने के योग्य हो सकें।

"बस, मैं तो यही कह सकता हूं, सेठ साहब। चार प्रकार के कुएं लगाने होंगे जिनमें से चारों स्वभाव के लोग पुरुषार्थ से जल निकालकर तृप्त हो सकें और तुम्हारी माताजी के गुणानुवाद गाते रहें।"

सेठ जुग्गीमल में जन्मजात व्यावसायिक बुद्धि थी। वह इस संक्षिप्त उपदेश से विचारों के बोझ से दबा हुआ स्वामीजी के निवास-स्थान से लौटा।

अब उसे अपने माता-पिताजी की बात स्पष्ट दिखाई देने लगी थी। घर पहुंच उसने फर्म की व्यावसायिक कमेटी बुलाई और उसमें मां की इच्छा और उसकी स्वामीजी द्वारा की गई विवेचना रख दी।

व्यावसायिक कमेटी में पांच सदस्य थे। उसमें जुग्गीमल, उसका सबसे बड़ा लड़का माधवप्रसाद, छोटी लड़की मोहिनी, इन्द्रा का घरवाला कृष्णचन्द्र और मोहिनी का लड़का विष्णुसहाय था। विष्णुसहाय इस समय लन्दन गया हुआ था और वहां हिन्दुस्तानी माल का एक 'एम्पोरियम' चलाने में लीन था।

व्यावसायिक समिति अपनी योजनाएं बनाकर विष्णु के पास लिखकर भेजती रहती थी और उसकी सम्मति पर विचार करने के उपरान्त ही अन्तिम निर्णय करती थी। अतः मांजी की इच्छा, उसपर स्वामी सत्यानन्दजी की सम्मति और व्यावसायिक कमेटी के विचार में चार विद्यालय चलाने की योजना का प्रस्ताव विष्णु की सम्मति के लिए भेज दिया गया।

इसी पत्र की एक प्रतिलिपि हिन्दी भाषा में लिखकर रामेश्वरी के पास भी भेज दी गई।

२

सन्तराम अपने घर पहुंचा तो राधा और उसकी मां उत्सुकता से पिता-पुत्र की प्रतीक्षा कर रही थीं। सन्तराम आया तो धम्म से सोफ़ा पर बैठ गया। बैठने के इस ढंग से ही राधा समझ गई कि सम्भावित बात हो गई है। वह अपने पति के कहने की प्रतीक्षा में बैठी थी। बात सुमेर ने कही :

"हमारे कार्यालय में जाने से पूर्व वहां बाबा का भेजा आदमी पहुंच गया था और उसने कार्यालय पर अधिकार कर लिया है। बाबा ने खाटू से तार भेजकर बैंकों का धन भी 'फ्रीज़' करा दिया था।"

"तो तुमने बलपूर्वक अपना अधिकार क्यों नहीं जमा लिया ?"

सुमेर हंस पड़ा। वह मन में विचार कर रहा था कि क्या मां की इसी बुद्धिशीलता की पिताजी प्रशंसा कर रहे थे! सुमेर को हंसते देख राधा ने कहा, "तुमको चाहिए था कि वहां पृथक् मेज़-कुर्सी लगाकर बैठ जाते और अपना काम आरम्भ कर देते। यदि हो सकता तो वहां नौकरों-चाकरों को अपनी तरफ मिलाकर नये मैनेजर को धक्के देकर बाहर निकलवा देते।"

"पर मां, इससे होता यह कि वे पुलिस में रिपोर्ट कर देते और हम दोनों इस समय हवालात में होते।"

"खैर, यह तो दूसरा उपाय था। पहली बात तो यह करनी चाहिए थी कि जब दादी मरी नहीं थी तो आपको चला आना चाहिए था। मैंने कहा भी था कि आपको इधर का ध्यान रखना चाहिए।

"दूसरा उपाय मैंने यह बताया है। अभी भी आप भाड़े के पचास-साठ गुण्डे करके कार्यालय पर धावा बोल दें। पुलिस ताला लगा देगी तो आप अपना ताला उसपर लगा दें। तदनन्तर अदालत में मुकदमा चल पड़ेगा और पांच-दस साल में मैं आपकी माताजी की मिन्नत-समाजत कर सुलह करा लूंगी।"

"तो मां," सुमेर ने फिर बात में दखल देते हुए कहा, "अभी जाकर मिन्नत-समाजत कर फैसला करा दो न।"

"अब तुम्हारा पक्ष हल्का है। इसलिए फैसला उतना हक में नहीं हो सकेगा जितना कब्ज़ा होने पर होता।"

सुमेर की फिर सम्मति बदली। वह समझने लगा कि मां कुछ अक्ल रखती है। इसपर भी वह फौजदारी करने का तत्त्व नहीं समझा। उसने कह दिया, "इसपर भी मैं समझता हूं कि तुम कलकत्ता चली जाओ और दादी की मिन्नत-समाजत कर बात बना लो।"

"मेरी सम्मति में एक तीसरा भी उपाय है।"

"क्या ?"

"तुम अदालत में किसी प्रकार का दावा कर फर्म पर ताले लगवा दो और बैंकों के खाते खुलने न दो। इतना तुम करो और फिर मैं मां की मिन्नत-समाजत करने के लिए कलकत्ता चली जाऊंगी।"

"मैं भी यही ठीक समझता हूं," सन्तराम ने कहा।

"तो फिर जाइए। किसी वकील से राय कर फर्म और फर्म के धन को ताला लगवाइए।"

"इसीलिए तो मैं आया हूं। अभी एक सहस्र रुपया निकाल दो। इसका हिसाब मैं लौटकर दे दूंगा।"

"आप खाटू जाते समय एक सहस्र ले गए थे। उसका क्या हुआ। क्या वह सब व्यय हो गया है?"

"नहीं, सब तो व्यय नहीं हुआ। दोनों का हिसाब आकर दूंगा।"

इसपर राधा उठकर अपने सोने के कमरे में गई और पांच सौ ही लेकर आई और बोली, " अभी तो इतने से काम चलाइए।"

सुमेर विस्मय से मां का मुख देखता रह गया। परन्तु उसने मां के सामने कुछ कहा नहीं। दोनों नगर के विख्यात वकील से मिलने चल पड़े। यह वकील मिस्टर सी० वी० मेनन था। दोनों पिता-पुत्र घोड़ा-गाड़ी में सवार हो चल दिए। मार्ग में सुमेर ने अपने पिता से पूछा, "बैंक में आपके अपने खाते में कितना रुपया है?"

"मेरा एक 'सेविंग एकाउण्ट' है और उसमें दो-चार सौ से अधिक नहीं होने चाहिए।"

"पर पिताजी हमारे 'प्राइवेट बिज़नेस' में से तो लाखों की आय होती रही है और फर्म में से भी हिस्से का लाभ कई वर्ष से आ रहा है। उस सबका क्या हुआ?"

"वह सब तुम्हारी मां के पास जमा है। मुझे डर रहता है कि तुम्हारे बाबा से झगड़े के समय मेरे खातों की पड़ताल न होने लगे।"

"तो यह बुद्धिमत्ता की बात भी मां ने बताई है?"

"हां। उसका अपना खाता और हिसाब है।"

"पर मां ने यह पांच सौ तो ऐसे दिए हैं, जैसे अन्दर इससे अधिक कुछ नहीं।"

"हां, घर में कुछ नहीं होगा। बैंक में से निकालने के लिए उसने चैक देना ठीक नहीं समझा।"

युक्ति से बात ठीक ही जान पड़ती थी, परन्तु वह निश्चिन्त नहीं था। उसको कुछ दाल में काला दिखाई देने लगा था।

वे मिस्टर मेनन की बैठक में गए और जब वह कचहरी से लौटा तो उससे बातचीत करके लौट आए। मेनन ने पांच सौ तो अपनी फीस में ही ले लिया और कहा, "कल प्रातःकाल आ जाइए। कागज़ तैयार कर सब-जज की अदालत में उपस्थित कर दूंगा, यदि कुछ रुपया खर्च करोगे तो कल ही नोटिस निकलवा दूंगा। अगले दिन की तारीख़ पड़ जाएगी और फिर 'इण्टेरिम इन्जन्कशन' जारी हो जाएगा। तभी बैंकों को नोटिस जारी हो सकेगा।"

"कितना रुपया खर्च हो जाएगा?"

"देखो मिस्टर सन्तराम, मुकदमा झूठा है। झूठ को सत्य सिद्ध करने के लिए बहुत कुछ खर्च करना पड़ेगा। दो-तीन हज़ार जेब में रखना। न जाने किसको क्या देना पड़ जाए।"

"हम कल नौ बजे यहां आ जाएंगे।"

"ठीक है।"

पिता-पुत्र दोनों घर लौटे। घर लौटते समय सुमेर ने पिता से पूछ लिया, "यदि इसी प्रकार चलता रहा तो बहुत रुपया खर्च हो जाएगा।"

"हां। मैं समझता हूं कि एक लाख रुपया खर्च हो सकता है।"

"पर पिताजी, क्या यह कारोबार लेना इतने मूल्य की बात है?"

"मूल्य का प्रश्न नहीं। प्रश्न तो यह है कि हमारा पलड़ा भारी होना चाहिए जिससे सुलह के समय हमको अच्छी से अच्छी शर्तें मिल सकें।"

सुमेर चुप रहा। जब सन्तराम और सुमेर खाटू दादी मरने की सम्भावना पर गए थे तो सुमेर की पत्नी शकुन्तला अपने मायके बम्बई गई हुई थी। उसको सूचना तो मिल गई थी कि उसके पति की परदादी सख्त बीमार है, परन्तु उसके उपरान्त की खबर नहीं मिली थी। शकुन्तला का भी यही विचार था कि बड़ी मां मरण के किनारे है। परन्तु अनिश्चित अवस्था के कारण कोई सूचना नहीं आई।

उसने अपनी मां से कहकर स्वयं खाटू जाने का विचार किया। जब यह बात शकुन्तला के पिता को पता चली तो उसने कहा कि

सीधे राजस्थान जाने के स्थान पर शकुन्तला को मद्रास जाना चाहिए। वहां से पता चल जाएगा कि स्थिति कैसी है। तदनन्तर निश्चय किया जाएगा कि वहां जाना है अथवा नहीं। कलकत्ता जाने का भी विचार उपस्थित हुआ, परन्तु अन्तिम निर्णय यही हुआ कि मद्रास जाकर पता किया जाए। शकुन्तला अपने छोटे भाई नगेन्द्र के साथ मद्रास पहुंची। जब सन्तराम और सुमेर वकील से मिलने गये हुए थे, तब शकुन्तला भाई के साथ घर पहुंच गई।

शकुन्तला ने अपनी सास को पायलागूं कही तो मां ने उसे बैठाया और जलपान के लिए पूछा। शकुन्तला ने कहा, "खाटू से मांजी का कोई समाचार आया है ?"

"वह बूढ़ी मरती-मरती बच गई है। अभी कुछ अन्न-दाना और गन्दा करने का विचार रखती है।"

"तो पिताजी और उनके पुत्र आ गए हैं ?"

"हां। निखट्टू गए थे कमाने और ईश्वर को धन्यवाद है कि सही-सलामत घर लौट आए हैं।"

शकुन्तला को यह बात भली प्रतीत नहीं हुई और वह इस क्रोध और व्यंग्य का कारण जानने के लिए अपनी सास का मुख देखती रही। राधा ने समझा दिया। उसने कहा, "यहां से पिता-पुत्र दोनों के चले जाने पर व्यापार और कार्यालय पर विपक्षियों का अधिकार हो गया है।"

"विपक्षी कौन ? किनका अधिकार हो गया है ?"

"श्वसुर का। मेरा अभिप्राय है, कलकत्ता वालों का।"

"पर मांजी, उनका अधिकार तो पहले ही था।"

"वह कागजी अधिकार था। वास्तव में यह कारोबार हमारा था।"

शकुन्तला के लिए यह बात नवीन थी। उसके विवाह के उपरान्त ही घर में वार्षिक लाभ का रुपया आया था। सुमेर ने अपनी पत्नी को यह बताया था। अब उसकी सास कुछ उलटी बात कह रही थी।

शकुन्तला उठकर अपने कमरे में जाने लगी थी कि उसका पति और श्वसुर आ गए। उसने छोटा-सा घूंघट निकाल श्वसुर के चरण स्पर्श किए और फिर घरवाले के भी चरण छूने का नाटक किया और तदनन्तर अपने कमरे में चली गई। सुमेर उसके पीछे-पीछे वहां जा

पहुंचा।

औपचारिक बात हो चुकी तो शकुन्तला ने पूछा, "आपने बड़ी माजी का कोई समाचार नहीं लिखा ? बहुत चिन्ता लग रही थी। इसी कारण मां ने यहां भेज दिया है जिससे उनको उचित समाचार भेज सकूं।"

इसपर सुमेरचन्द ने पूर्ण वृत्तान्त बिना किसी प्रकार का नमक-मिर्च लगाए सुना दिया। शकुन्तला ने पूछा, "तो आपने धर्मादा को लेने का प्रस्ताव किया था ?"

"हां।"

"क्यों ? आप अपने 'प्राइवेट' व्यापार में से तो धर्मादा निकालते नहीं और जो निकालते हैं उसमें से अपना हक निकाल लिया है ?"

सुमेर को यह हक की बात समझ नहीं आई। उसने पूछ लिया, "वहां रुपया रखने से हमको हक कैसे मिलता ?"

शकुन्तला ने मुस्कराते हुए कहा, "जो धर्म करने से फल मिलता है, उसमें हमारा भी भाग रहता। यही हक है।"

"वाह ! अब यह रुपया हमारे पास आ जाएगा और फिर हम उस-का प्रयोग करेंगे तो मैं समझता हूं यह हक अधिक अच्छा रहेगा।"

"धर्म का भाग धर्म के नाम ही जाना चाहिए।"

"तुमको रत्नजड़ित हार ले देना धर्म नहीं है क्या ?"

"परन्तु उस मतलब के लिए आपके पास और भी बहुत कुछ है।"

"उसमें से निकाले बिना काम हो जाए तो और भी अच्छा है।"

"खैर, इसे छोड़िए। यह मुकदमे की बात क्या है ?"

"यह तो मैं भी समझ नहीं रहा। यह सब माजी करा रही हैं।"

"मेरी राय मानिए।"

"बताओ।"

"आप अपने पिता से पृथक् हो जाइए। अभी आज ही अपने बाबा के पास चले जाइए और उनसे क्षमा मांग उनसे सुलह कर लीजिए। मुकदमेबाजी, विशेष रूप से घर में ही, पाप है। इससे कल्याण की आशा नहीं हो सकती।"

"देखो शकुन्तला, तुम माजी से बात कर लो। मुझको तुम्हारी बात ठीक मालूम होती है, परन्तु मैं मां के साथ बात कर नहीं सकता।"

शकुन्तला इससे विस्मय में रह गई। शकुन्तला का भाई नगेन्द्र बाहर बैठा था। उसे किसीने पूछा ही नहीं था। भीतर उसकी बहिन और जीजाजी में लम्बी बात होने लगी थी। अतः वह उठा और घर से निकल गया।

जब शकुन्तला अपने पति से यह बात कर कि उसे ही अपनी सास को मुकदमे के लिए समझाना चाहिए, शयनागार से निकली तो नगेन्द्र को वहां बैठा न देख अपनी सास की मां से पूछने लगी :

"भैया कहां गया है ?"

"पता नहीं। वह बैठा-बैठा उठा और घर से निकल गया है।"

"और मांजी कहां हैं ?"

"वे ज़रा तुम्हारे श्वसुर से परामर्श कर रही हैं। क्यों, कुछ काम है ?"

"कुछ विशेप नहीं।" इतना कह वह स्नान करने चली गई। अड़तालीस घण्टे की यात्रा के उपरान्त वह स्नान की आवश्यकता अनुभव करने लगी थी।

नहा-धोकर निकली तो घर के सब प्राणी रात का खाना खाने के लिए बैठे मिले। वह भी वहां जा बैठी। वह नगेन्द्र के विषय में चिन्तित थी। उसने समीप बैठे पति से कहा, "मुझे छोड़ने छोटा भाई नगेन्द्र आया था। वह पता नहीं, कहां चला गया है।"

"घूमने गया होगा। आ जाएगा।"

खाना खाते समय कोई बात नहीं हो सकी। शकुन्तला अपनी सास से अलग बात करना चाहती थी।

३

नगेन्द्र को कुछ ऐसा समझ आया कि उसकी बहिन से उसकी सास का व्यवहार अच्छा नहीं। कम से कम वह अपने बड़े भाई की स्त्री से अपनी मां का व्यवहार तो इससे बहुत अच्छा पाता था। उसकी सास अथवा सास की मां ने अपनी बहू से बम्बईवालों का कुशल-समाचार तक नहीं पूछा था। जब से वह वहां पहुंचा था किसीने न तो उससे, न ही उसकी बहिन से उसके विपय में पूछा था। वह कुछ ऐसा अनुभव करने लगा था कि उसे घर का कोई नौकर मान लिया गया है, जो

उनकी बहू की सेवा-सुश्रूषा के लिए आया है।

उसको आए एक घण्टा हो गया था। अड़तालीस घण्टे की यात्रा के उपरान्त वह स्नानादि कर कपड़े बदलना चाहता था, परन्तु किसी-ने उससे जल पीने के लिए भी नहीं पूछा था। बहिन को कमरे में जीजाजी से बातचीत करते देख उसके मन में विचार आया कि उसे कहीं अन्यत्र ठहरने का प्रबन्ध करना चाहिए। वह उठा और घर से निकल गया। घर के नीचे ही घोड़ागाड़ी मिल गई और वह उसमें बैठ गाड़ीवाले से बोला, "किसी अच्छे-से होटल में ले चलो।"

गाड़ीवाला रायल होटल में ले गया। उसने एक कमरा देखा, पसन्द किया और होटल के रजिस्टर में अपना नाम तथा बम्बई का पता लिखकर कमरे में जा तनिक पलंग पर सुस्ताने लेटा तो सो गया। रात के नौ बजे उसकी नींद खुली। वह उठा और अपना बिस्तर इत्यादि बहिन के मकान से लेने चल पड़ा।

बहिन के घर पहुंचा तो वह अपनी सास से बातें कर रही थी और उसकी सास उसे ऊंचे-ऊंचे डांट रही थी। दोनों बैठक में अकेली बातें कर रही थीं। नगेन्द्र को आया देख दोनों चुप हो गईं। शकुन्तला ने उससे पूछा, "कहां गए थे नगेन्द्र ?"

"दीदी, मैं होटल में ठहरने का प्रबन्ध कर आया हूं और सामान लेकर वहां जा रहा हूं।"

"क्यों ?" शकुन्तला की आंखें तरल हो रही थीं। नगेन्द्र ने समझा कि बहिन उसपर नाराज़ हो रोने लगी है। इस कारण उसने कह दिया, "दीदी, मां ने घर से चलते समय ही कह दिया था कि किसी अच्छे-से होटल में ठहर जाना।"

शकुन्तला को एक बात समझ आई कि इस घर की वर्तमान परि-स्थिति में यह ठीक ही हुआ है। इसपर उसने पूछ लिया, "किस होटल में ठहरे हो ?"

"रायल होटल। सी-बीच के सामने ही है। कमरा नम्बर तीन है।"

"अच्छी बात है। मैं सुबह मिलने आऊंगी।"

नगेन्द्र ने बिस्तर कन्धे पर रखा और सूटकेस हाथ में लटका मकान की सीढ़ियां उतर गया। घर का नौकर सामने खड़ा देख रहा था। न तो उसने स्वयं नगेन्द्र का सामान नीचे ले जाने में सहायता की और

न ही किसीने उसे कहा कि सामान नीचे गाड़ी में ले जाओ। नगेन्द्र विस्मय कर रहा था कि उसकी बहिन ने उसके झूठ कहने पर कि मां ने घर से चलते समय ही होटल में ठहरने के लिए कह दिया था, तुरन्त विश्वास कर लिया और उसे होटल जाने की स्वीकृति दे दी।

वह समझ रहा था कि घर में किसी प्रकार का झगड़ा हो रहा है। उसने बहिन की सास को उसे डांटते भी सुना था।

नगेन्द्र का यह अनुमान ठीक ही था। शकुन्तला ने रात के खाने से उठते ही सास से कहा था, "मांजी ! मैं आपसे एक बात जानना चाहती हूं।"

"क्या, पूछो।"

"तनिक पृथक् में बात करूंगी।"

"ओह ! तो यह मां के घर से नई बात सीख कर आई हो ?"

"जी ! मां ही तो बच्चों को सिखाती-पढ़ाती है।"

"अच्छा, इधर आ जाओ।" वह उसे बैठक में ले गई। सन्तराम सुमेर को अपने सोने के कमरे में ले गया। वह उसे उसकी मां से हुई बात बताना चाहता था।

शकुन्तला ने बैठते ही पूछा, "घर में किसी प्रकार की मुकदमेबाज़ी होनेवाली है ?"

"हां। परन्तु यह झगड़ा हम नहीं करनेवाले थे। यह सुमेर के बाबा ने आरम्भ किया है।"

"उन्होंने क्या किया है ?"

"उन्होंने तुम्हारे श्वसुर और पति को काम से निकाल दिया है।"

"पर वे तो कह रहे हैं कि उन्होंने ही पृथक् होने की मांग की थी। जब फर्म की कमेटी में उन्होंने यह कहा कि वे फर्म से अपने भाग का रुपया लेकर पृथक् कारोबार करना चाहते हैं तभी तो बाबा ने उनको कलकत्ता चलने के लिए कहा था।"

"पर तुम्हारी इस विषय में क्या रुचि है ?"

"मेरी आपके पुत्र की भलाई में रुचि है।"

"ओह ! अभी से उसपर अधिकार जमाने लगी हो। देखो, शकुन्तला, तुम इस घर में आई हो तो अपने स्थान पर रहो। यदि घर के पुरखा का स्थान लेना चाहोगी तो इस स्थान से भी वंचित हो

जाओगी। ज़रा दर्पण मे अपनी सूरत देख लो और तब तुम जान जाओगी कि तुम्हारा क्या स्थान है।"

इस समय नगेन्द्र आ गया था और बात रुक गई। जब तक नगेन्द्र गया नही, राधा खडी देखती रही कि बहिन भाई से क्या कहती है। वह समझी थी कि उसके सामने खडे रहने से ही शकुन्तला ने घर की कोई बात उसे नही बताई। एक बात उसकी चिन्ता का विषय हो गई थी। शकुन्तला ने कहा था कि वह भाई से मिलने होटल जाएगी।

तुरन्त उसके मन मे आया कि सुमेर को इस मूर्ख बहू से सतर्क कर देना चाहिए। जब यह अपने भाई से मिलने जाए तो उसे साथ जाना चाहिए। इसके साथ ही वह झगडे के दिनो मे बहू को पुन मा के घर जाने पर विवश कर देने की योजना बनाने लगी थी।

नगेन्द्र के जाते ही राधा ने शकुन्तला से कहा, "कुछ और बताना हो तो जल्दी करो। मैं यह समय व्यर्थ की बातो मे गवाना नही चाहती। यह समय पत्नियों के लिए पतियो की सगत प्राप्त करने का होता है।"

"मैं केवल इतना कहना चाहती थी कि घर मे मुकदमेबाज़ी किसी कल्याण की सूचना नही हो सकती। कोई ऐसा उपाय करना चाहिए, जिससे यह रुक जाए।"

"तुम अभी बच्ची हो। तुमको इस घर का अनुभव नही। इस कारण तुमको अभी चुपचाप कुछ सीखने मे लीन रहना चाहिए।"

इतना कह राधा अपने सोने के कमरे मे चली गई। वहां सुमेर और सन्तराम बातें कर रहे थे। पिता-पुत्र मे भी वार्तालाप सुखपूर्वक नही चल रहा था।

पिता ने वह सब बात बताई थी जो सुमेर की माता ने कही थी। सुमेर की माता का यह अनुमान था कि इस समय उनके पास बीस लाख रुपये के लगभग नकद है। पहले उनके कारोबार मे फर्म का रुपया भी लगता रहता था और उसी पूंजी के आश्रय में उनका कारोबार भी चल रहा था। अब उनको अपना रुपया पूजी के रूप मे प्रयोग करना होगा।

इसपर सुमेर ने बताया, "पिताजी" कई लाख रुपया फर्म का अपने भुगतानों मे गया हुआ है।"

"हां, इसीके लिए तो मैं मद्रा को भागा था, परन्तु मुझे सब

ठीक करने का अवसर नहीं मिला। इस बात की जांच आरम्भ होने से पहले ही हमें कार्यालय को सील करवा देना चाहिए।"

इसपर सुमेर ने शकुन्तला की बातें कहीं। "वह कह रही है कि हमें कलकत्ता जाकर सब कुछ बाबा को बताकर उनसे क्षमा मांग लेनी चाहिए।"

"वह मूर्ख इन बातों को क्या जानती है !"

"एक बात तो वह जानती है और कहती है कि अदालत से अधिक सहानुभूति बाबा और दादी से मिल सकती है।"

"पर एक बात तुम भूल रहे हो कि अदालत को धोखा देने की गुंजायश है और बाबा को धोखा देना कठिन है। विशेष रूप से जब माणिक वहां पहुंचा हुआ है।"

"पर हम धोखा दें ही नहीं, और वहां जाकर अपना अपराध स्वीकार कर लें।"

"अर्थात् अपने-आप कसूरवार बन दण्ड के भागी बन जाएं।"

"पिताजी, क्षमा तो तब ही मिल सकेगी, जब अपना अपराध मान जाएंगे।"

"पर हमने कोई अपराध किया है क्या ? यह जो कुछ प्रत्यक्ष रूप में दिखाई दे रहा है वह अपने-अपने दृष्टिकोण के अन्तर के कारण है।"

इसी समय राधा कमरे में आई तो पिता-पुत्र की बातें सुनने बैठ गई। सुमेर कह रहा था, "मैं दो भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों में भेद मिटाने की बात नहीं कह रहा। मैं तो दोनों में झगड़ा मिटाने की बात कह रहा हूं। हम घर के दो प्राणी समानान्तर रेखाओं में नहीं चल सकते क्या ?"

अब राधा ने बात में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "सुमेर यह अपनी बीवी के आदेश से कह रहा है।"

इसपर सन्तराम ने कहा, "यह कोई बुरी बात नहीं। मैं भी तो तुमसे राय लेकर ही बात चला रहा हूं।"

"तो तुमपर मैं कोई बल-प्रयोग कर रही हूं ?"

"मतलब यह कि शकुन्तला सुमेर पर किसी प्रकार का बल-प्रयोग कर रही है ?"

"हां। उसके आते ही पति-पत्नी में पृथक खिचड़ी पकने लगी है।"

"तो शकुन्तला ने भी कुछ कहा है ?"

"यही कि घर मे मुकदमा नही होना चाहिए।"

"और यह भी यही कह रहा है।"

"मैं कह रही हू कि दोनों मूर्ख हैं।"

सन्तराम हस पड़ा। बोला, "मैं भी ऐसा ही समझता हूं। पर राधाजी, मुकदमे पर रुपया खर्च होगा और उसमें तुम कजूसी करती हो।"

"मैं तो यह कह रही हू कि दुकान को ताले लगवाने का यत्न करो और फिर मुकदमा लम्बा चलने दो। शेष मुझपर छोड़ो।"

सुमेर उठकर जाने लगा तो राधा ने कहा, "देखो, तुम्हारी बहू अपने भाई से मिलने होटल जाएगी। तुम उसके साथ जाना और जरा कान और आंखें खोलकर बातें सुनना।"

"मां ! तुमने नगेन्द्र को यहा रह जाने के लिए नही कहा ?"

"उसकी मां ने उसे कह रखा था कि बहिन के घर मे मत रहना। यह ठीक ही है। भाई बहिन के घर मे शोभा नही पाता।"

यह बात सुमेर को ठीक प्रतीत नही हुई। परन्तु मा का कथन घर में ब्रह्मवाक्य होता था और उसका खण्डन करने का रिवाज नही था।

४

"मा से क्या बात हुई है ?" सुमेर ने अपनी पत्नी से अपने शयनागार मे जाकर पूछा।

"वे मेरी बात गलत समझती हैं। एक बात उन्होंने कही है कि मुझे अपना मुख दर्पण में देखकर इस घर में अपने स्थान का ज्ञान होना चाहिए।"

इसपर सुमेर को खाटू में लक्ष्मी की बात स्मरण आ गई। उसने कहा, "यह बात तो मां ने ठीक कही है। हमारे पूर्ण परिवार मे एक तो मां है, और दूसरे एक अन्य औरत है जो सुन्दर मानी जा सकती हैं। दोनों का घर में बहुत ऊंचा स्थान है। इसी सौन्दर्य के बल पर ही मां ने इस घर में ऊंचा स्थान पाया है। वह दूसरी भी धीरे-धीरे वही स्थान पा रही है। उसके कारण ही उसके घरवाले को हमपर श्रेष्ठता मिली है और उसे यहां हमपर शासन करने के लिए भेज दिया गया है।"

"कौन है वह ?"

"मेरे एक ताऊजी हैं। उनके लड़के ने एक वर्मी लड़की से शादी कर ली है। इस समय वह घर में सबसे अधिक सुन्दर लड़की है। घर की सब औरतें खाटू में थीं। वह वहां अन्धकार में एक उज्ज्वल ज्योति के समान दिखाई देती थी।

"देखो, शकुन्तला, हमारी परदादी युवावस्था में सुन्दर थीं। हमारी दादी मां भी अति सुन्दर थीं। उसके बाद माताजी ने उन दोनों को मात कर दिया था। अब वह लक्ष्मी घर में राज्य करती है।

"खाटू में तो मैंने उसपर अपना जादू चलाने का यत्न किया था। मैं जानता था कि उसके द्वारा घर-भर पर राज्य कर सकूंगा, परन्तु बड़ी मांजी बीच में कूद पड़ीं और मेरा प्रभाव जमने नहीं दिया।"

"कैसे उसपर प्रभाव जमाना चाहते थे ?"

इस प्रश्न पर सुमेर गम्भीर हो विचार करने लगा कि वह अपने शौर्य के कार्य का बखान अपनी पत्नी के सम्मुख करे अथवा न करे। परन्तु वह बताना चाहता था कि वह उसको छोड़ नहीं सकता है। इस कारण उसने खाटू में घटी उस रात की घटना का कुछ नमक-मिर्च लगा वर्णन कर दिया।

शकुन्तला ने सब कथा सुन कहा, "यह तो आपने घोर पाप किया है।"

"इसमें पाप क्या है ?"

"आपने उसका धोखे में भोग किया है। वह निस्सन्देह यह समझ रही थी कि वह अपने पति की संगत में है। आप जानते थे कि वह आपके भाई की पत्नी है। अतः यह तो महापाप है।"

"कुछ भी हो, मैं इससे प्रसन्न हूं।"

दिया है और वे माजी को समझाने की बात कह रहे हैं।"

"ख़ैर, लक्ष्मी जाने और आप जानें। मुझे तो यह पता है, जो कुछ मेरे भाग्य में है, वह मिलेगा ही। इसी कारण मैं किसी प्रकार के पाप-कर्म में लिप्त होना नहीं चाहती।

"आप मुकदमे से पृथक् हो जाइए और अपने भाग का रुपया लेकर स्वतन्त्र कारोबार करिए। यदि आपको यहां कारोबार करना ठीक प्रतीत न हो तो बम्बई चलिए। मैं पिताजी से कहूंगी तो वे सहायता कर देंगे।"

"वहां क्या काम किया जा सकेगा?"

"यह मैं नहीं बता सकती।"

"पर मैं तो लक्ष्मी के पति के साथ रहना चाहता हूं।"

"यत्न करिए।" शकुन्तला को यह समझ आ रहा था कि किसी भी ढंग से हो, उसे अपने पति को अपनी मां से पृथक् कर देना चाहिए। वह समझती थी कि उसने उसे कुरूप कहकर उसका अपमान किया है। उसे कुछ ऐसा समझ आया था कि उसकी सास को अपने रूप का बहुत अभिमान है।

सुमेर का विचार था कि शकुन्तला लक्ष्मी के साथ अपने पति का व्यवहार सुन भड़क उठेगी। उसे यह देख विस्मय हुआ था कि वह इस-पर भी शान्ति से बात करती रही थी।

वह देख रहा था कि शकुन्तला, किसी भी कारण से क्यों न हो, उसको वही बात कहने को कह रही है जो वह स्वयं करना चाहता था।

दोनों में इस बात पर एकमत हो गया कि उन्हें मुकदमे में सम्मिलित नहीं होना है। इसके उपरान्त वे प्रातः नगेन्द्र से मिलने के लिए जाने का विचार करने लगे।

अगले दिन शकुन्तला अपने पति सुमेर को लेकर रायल होटल में पहुंच गई। नगेन्द्र 'डाइनिंग हाल' में प्रातः का अल्पाहार ले रहा था। जब ये पहुंचे तो नगेन्द्र ने बहिन से पूछा, "बहिन, अल्पाहार लिया है?"

"अभी नहीं। मेरे श्वसुर-सास तो अभी सोकर उठे भी नहीं थे कि हम इधर चल पड़े।"

"तब तो ठीक है।" नगेन्द्र ने कहा, "यहां बैठो। मैं अभी आपके लिए भी मंगवा देता हूं।"

नगेन्द्र ने वैरे को संकेत से बुलाया और दोनों अभ्यागतों के लिए भी 'ब्रेकफास्ट' के लिए कह दिया, "दूध, कार्न फ्लेक, टोस्ट, मक्खन, चाय और बस।"

इसपर सुमेर ने कहा, "मेरे लिए दो अण्डे भी।"

शकुन्तला ने अपने पति की मांग का समर्थन कर दिया, "हां। ये लेंगे। मैं अभी यह नहीं खाती।"

"तो कभी खाने की आशा कर रही हो?" नगेन्द्र ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

"घर-भर में खाए जाते हैं। इसलिए मैं विचार किया करती हूं कि कब तक बची रहूंगी।"

"तो आज से ही आरम्भ कर दो। मैं भी घर के बाहर खा लेता हूं।"

ब्रेकफास्ट लेते हुए कोई बात नहीं हुई। शकुन्तला का विचार था कि नगेन्द्र पिछले दिन हुई उसकी अवहेलना की बात करेगा, परन्तु उस-ने इसका उल्लेख नहीं किया। नगेन्द्र की आयु लगभग तेरह-चौदह वर्ष की थी। सुमेर को उसके साथ मां और नानी की ओर से हुए व्यवहार का ज्ञान था। नगेन्द्र को उसकी शिकायत न करते देख सुमेर को विस्मय हुआ था, परन्तु वह भी उस दुःखद घटना का उल्लेख करना नहीं चाहता था।

ब्रेकफास्ट के उपरान्त नगेन्द्र उनको अपने कमरे में ले गया और वहां जाते ही नगेन्द्र ने पूछा, "दीदी, कल रो क्यों रही थीं?"

"मैं रोई थी क्या?"

"नहीं, तुम नहीं, तुम्हारी आंखें रोई थीं। वे आंसुओं से डब-डबा रही थीं।"

मुझे यह देखकर दुःख हुआ था कि मेरी सास ने तुमको कोई नौकर समझ अवहेलना की है।"

"तो अब उसे पता चल गया है कि मैं कौन हूं। उन्होंने अब तो मुझे तुम्हारा भाई समझ लिया होगा। वे जान गई होंगी कि मैं इस मंहगे होटल में भी रह सकता हूं।"

"अच्छा, अब बताओ क्या कार्यक्रम है?" शकुन्तला ने बात बदल दी।

"मैं क्या बताऊं। दीदी ने कहा था कि उसके साथ कोई आना

चाहिए । इस कारण मैं आ गया हूं । अब तुम कहोगी कि मुझे जाना चाहिए तो मैं चला जाऊंगा ।"

"तो ऐसा करो । तुम दो दिन और ठहरो । तब तक तुम मद्रास की सैर करो । मैं तुमसे कल और परसों भी इसी समय मिलूंगी । परसों तुम्हारे जाने का कार्यक्रम बना दूंगी ।"

"ठीक है, दीदी ! मैं तो तुम्हारे साथ आया हूं । तुम मेरे साथ नहीं आईं ।"

"यह बताओ, कुछ रुपये की तो आवश्यकता नहीं ?"

"अभी तो नहीं । यदि कम होने लगेंगे तो घर तार देकर मंगवा लूंगा ।"

फिर इधर-उधर की बातें होती रहीं । एक घण्टा बातें कर सुमेर और शकुन्तला घर चल पड़े । घर पर उसके पिता और माता नहीं थे । सुमेर की नानी ही घर पर थी । सुमेर ने पूछा, "पिताजी कहां गए हैं ?"

"वे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे थे । तुम्हारी माता और वे वकील से मिलने गए हैं ।"

"माताजी किसलिए गई हैं ?"

"तुम्हारे पिता बहुत फिजूलखर्च हैं । इसलिए वह साथ गई है, जिससे खर्च पर नियन्त्रण रह सके ।"

रात सुमेर ने पिताजी से पूछा था कि रुपया कहां है, तो उसके पिता ने बताया था कि सब रुपया उसकी माता के अधिकार में है । अब वह समझ गया कि उसकी मां रुपये के विषय में अपने पति पर भी विश्वास नहीं करती ।

वैसे तो ऐसी बातें पहले भी होती थीं । परन्तु मुकदमे की पृष्ठभूमि में यह स्थिति उसे अखरने लगी थी । मुकदमा उसकी मां करा रही थी । उसकी मां ने स्वयं माना था कि मुकदमे से उनकी स्थिति उच्च हो जाएगी और वह घरवालों से अच्छी शर्तों पर सुलह करा सकेगी ।

सुमेर को अपने लिए कुछ रुपये की आवश्यकता थी । पहले तो फर्म से मिलनेवाला वेतन वह अपने पास रख लेता था । अब महीना समाप्त हो चुका था और पिछले महीने का वेतन उसे नहीं मिला था, इस कारण उसकी जेब खाली हो रही थी । वह कुछ रुपया अपने पिता से मांगनेवाला था, परन्तु वह उसके लौटने से पहले जा चुका था ।

इस समय उसे विचार आया कि फर्म को ताला लगने से पहले अपने पिछले महीने का वेतन ले लेना चाहिए। अतः वह शकुन्तला से कह कि वह फर्म के कार्यालय जा रहा है, वहां से चल दिया। उसने घोड़ा-गाड़ी पकड़ी और फर्म के कार्यालय में जा पहुंचा।

गजाधर वहां था। मिस्टर अय्यर नहीं था। दूसरे क्लर्क अभी आ रहे थे। गजाधर ने विस्मय में सुमेर की ओर देखा तो सुमेर ने पूछ लिया, "तो तुम मेरे यहां आने की आशा नहीं करते थे ?"

"नहीं। मैंने तो तुम पिता-पुत्र दोनों को पकड़ने के लिए पुलिस तुम्हारे घर भेजी है।"

सुमेर मुस्कराया और बोला, "खैर। मैं तो यहां आ ही गया हूं। तुम मुझे यहीं पकड़वा सकते हो।"

"और तुम्हारे पिता कहां हैं ?"

"मुझे पता नहीं। इस समय वे घर पर नहीं थे।"

इससे गजाधर किसी प्रकार उनकी योजना में गड़बड़ पड़ जाने की सम्भावना अनुभव करने लगा था। वह चिन्ता में सुमेर का मुख देखता रह गया। सुमेर सामने बैठ गया और पूछने लगा, "किस समय तक पुलिस आ जाएगी ?"

"मेरी राय मानो। तुम यहां से चले जाओ और यदि बचना चाहते हो तो अपने पिता को छोड़ कहीं लापता हो जाओ।"

"फर्म को बहुत बढ़िया मैनेजर मिला है, जो फर्म के हितों के ही विरुद्ध कार्य कर रहा है!"

"मुझे तुम्हारी सूरत देख तुमपर दया आ गई है। आखिर हो तो मेरे भाई ही।"

सुमेर समझ रहा था कि इनको पता चल गया होगा कि फर्म के रुपये की अमानत में खयानत की गई है। वह और उसकी माता यह समझ रहे थे कि फर्म की तरफ से किसी प्रकार की कार्यवाही की जाने से पूर्व ही फर्म को ताले लग जाएंगे। वह समझ गया था कि उनकी तरफ से देरी हो गई है।

परन्तु अब वह कुछ नहीं कर सकता था। साथ ही उसकी योजना दूसरी थी। वह किसी न किसी प्रकार से फर्म में ही नौकरी पा जाना और घर की फर्म के साथ सम्बन्धित रहना चाहता था। वह अपनी

योजना इस परिवर्तित स्थिति में कैसे चला सकेगा, यह विचार करने के लिए वह समय चाहता था। इसी कारण वह वहां बैठा था और पूछ रहा था कि पुलिस कब तक आएगी। अब गजाधर को भाई के नाते सहानुभूति प्रकट करते देख बोला, "यदि दया ही आई है तो ऐसा करो कि मुझे अपने पिता से पृथक् मान लो। मैं फर्म के लिए बहुत बड़ा सहायक सिद्ध हूंगा।

"मैंने कल भी बताया था कि मैं अपने पिता की योजना में न तो सम्मिलित था और न ही अब हूं।"

"तुमने कल कुछ इसी विषय में कहा था, परन्तु इस कथन का अभी तक प्रमाण नहीं मिला। तुम दोनों के वारंट तो कल प्रात: से ही जारी हो चुके थे परन्तु तुम्हारे मद्रास में होने का ज्ञान कल ही हुआ था। उसी समय अय्यर साहब को पुलिस थाने में भेजा था और विचार था कि तुम दोनों आज प्रात:काल घर पर ही पकड़ लिए जाओगे।"

"परन्तु·····" इसी समय मैनेजर की मेज पर टेलीफोन की घण्टी बजी। गजाधर ने टेलीफोन उठाया। दूसरी ओर मिस्टर अय्यर बोल रहा था। अय्यर की बात सुन गजाधर ने कहा, "ठीक है। यहां आ जाओ।"

सुमेर ने अनुमान लगाकर पूछा, "तो पुलिस को यहीं बुला रहे हो?"

"हां। तुम्हारे पिता पकड़े गए हैं। अब तुम चाहो तो मेरी सहानुभूति का लाभ उठाकर यहां से भाग सकते हो।"

सुमेर गजाधर के कहने का प्रयोजन नहीं समझा था। इस कारण उसने कहा, "ऐसे नहीं। यदि सहानुभूति दिखानी है तो मेरी जमानत का प्रबन्ध कर दो।"

"इतनी बड़ी जमानत का मैं प्रबन्ध नहीं कर सकूंगा। एक करोड़ रुपये का गबन है।"

"देखो, मेरा कहा मानो। तुम अपनी सुसराल भाग जाओ। वे इतनी बड़ी जमानत का प्रबन्ध कर सकेंगे।"

"मैं वहां जाना नहीं चाहता।"

"तो फिर ऐसा करो कि भापाजी के पास कलकत्ता चले जाओ। उनके सामने अपनी सफाई दोगे तो बाप-बेटे दोनों की बात हो [illegible]"

सुमेर को मार्ग सूझ गया। इसपर भी उसे सन्दे[illegible]

किसी प्रकार का धोखा न दे रहा हो। उसने पूछा, "पिताजी घर पर ही पकड़े गए हैं क्या ?"

"नहीं, मिस्टर मेनन के यहां बैठे हुए पकड़ लिए गए हैं।"

"माताजी उनके साथ थीं क्या ?"

"हां, वे घर लौट गई हैं।"

"पुलिस घर पर भी बैठी है ?"

"मेरा विचार है, नहीं। पुलिस इन्स्पेक्टर ने थाने से टेलीफोन किया है। वे दस मिनट में यहां पहुंच जाएंगे।"

"अच्छा, धन्यवाद।" इतना कह सुमेर कार्यालय से बाहर निकल गया।

५

घर पर राधा पहुंची हुई थी। उसका मुख विवर्ण हो रहा था। सुमेर की नानी भी शोकमुद्रा बनाए लड़की के पास बैठी थी। सुमेर वहां पहुंचा तो दोनों चौंककर खड़ी हो गई।

शकुन्तला अपनी सास को अकेली घर लौटते देख किसी प्रकार की दुर्घटना की आशंका कर रही थी, परन्तु न तो वह सास से कुछ पूछना चाहती थी और न ही उसके दुःख में सम्मिलित होने में किसी प्रकार का तत्त्व समझती थी। सास के आने पर दो मिनट तक वह सास का मुख देखती रही और फिर अपने कमरे में जाकर विचार करने लगी। सुमेर ने आते ही पूछा, "मां ! पिताजी पकड़े गए हैं क्या ?"

"हां, तुम कार्यालय में गए थे न ? वहां से बच कैसे आए हो ?"

"कैसे भी हो। मुझे एक सहस्र रुपया शीघ्र दे दो। मैं पिताजी की जमानत का प्रबन्ध करने जा रहा हूं।"

"कहां जा रहे हो ?"

"बम्बई। शकुन्तला भी साथ जाएगी। सुना है, बहुत बड़ी जमानत मांगी जाएगी। उसका प्रबन्ध यहां नहीं हो सकता।"

मां आश्चर्यचकित-सी मुख देखती रह गई। सुमेर ने मां को जल्दी रुपया देने के लिए आग्रह करते हुए कहा, "मां, पुलिस मेरे पीछे पीछे आ रही है। जल्दी करो। यही एक उपाय सूझ रहा है।"

मा की समझ मे बात ग्रा गई। वह अपने सोने के कमरे की ओर चली गई।

शकुन्तला अपने पति की आवाज़ सुन कमरे बाहर निकल आई थी। सुमेर ने उससे कहा, "शकुन्तला, तुरन्त अपना और मेरा सूटकेस तैयार कर लो। हमें चलना है।"

शकुन्तला ने बात को समझा और वह भागकर अपने कमरे मे गई। बम्बई से आने के बाद अभी तक उसने अपना सूटकेस और बिस्तर खोला ही नही था। सुमेर का बिस्तर और सूटकेस भी, जो खाटू से आया था, अभी तक खोला नही गया था।

अतः उसने भीतर जाकर कपड़े बदले और घर के नौकर को बुलाकर सामान उठा मकान के नीचे ले चलने के लिए कहा। वह बाहर आई तो मा सौ-सौ रुपये के नोट गिनकर उसके पति को दे रही थी। जब वह दस नोट दे चुकी तो उसने कहा "बहुत ध्यान से व्यय करना। आय का स्रोत बन्द हो गया है।"

"ठीक है, मा ! मैं प्रबन्ध होते ही तार भेजूगा।"

वह शकुन्तला के साथ नीचे उतरकर घोड़ागाडी मे बैठ गाडीवान से बोला, "रायल होटल।"

"वहां क्या है ?" शकुन्तला ने पूछा।

"तुम्हारे भाई के कमरे मे बैठकर आगे योजना पर विचार करेंगे।"

रायल होटल जाने पर शकुन्तला प्रसन्न थी। वह समझ रही थी कि बम्बई जा रहे हैं और नगेन्द्र को भी साथ ले चलेंगे। परन्तु सुमेर का मस्तिष्क किसी अन्य योजना पर विचार कर रहा था।

नगेन्द्र होटल से उतरकर कहीं जाने के लिए तैयार खड़ा था। उसी समय उसकी बहिन अपने पति के साथ अपना सामान लिए गाड़ी मे आ पहुंची। नगेन्द्र प्रश्न-भरी दृष्टि से उनकी ओर देख ही रहा था कि सुमेर ने कहा, "नगेन्द्र भैया ! तनिक कमरे मे चलो। जल्दी करो।"

नगेन्द्र ने होटल के कुली से सामान उठवाकर ऊपर भेज दिया। स्वयं धीरे-धीरे उनके साथ ऊपर सीढ़ियां चढते हुए उसने अपनी बहिन से पूछा, "क्या बात है बहिन ?"

"इनके वारण्ट हैं और ये भागे जा रहे हैं।"

"कहां ?"

"कमरे में चलकर बताते हैं।"

ऊपर चलकर नगेन्द्र ने कमरा खोल दिया। तीनों भीतर जा, कुली को विदा कर, भीतर से द्वार बन्द करके बातें करने लगे। सुमेर ने अपनी और अपने पिता की पूर्ण स्थिति बताकर कहा, "मैं तो कल से ही पिताजी से कारोबार के विषय में विचार कर रहा था। इसपर यह मुसीबत आ खड़ी हुई है। मेरा विचार है कि अपने बाबा और दादी की शरण में जाऊंगा तो बात बन जाएगी।"

शकुन्तला का विचार था कि वे बम्बई जा रहे हैं। परन्तु अब कलकत्ता जाने का समाचार सुन वह अति सन्तुष्ट थी। इस अवस्था में वह भी अपने पिता के घर जाना नहीं चाहती थी।

सुमेर ने नगेन्द्र को समझाया, "मैं अभी यहां से स्टेशन जा, जो भी गाड़ी मिलेगी उसमें बैठकर इस नगर से बाहर हो जाना चाहता हूं।"

"कलकत्ता की गाड़ी तीन बजे छूटती है।"

"पर मैं तो जो भी गाड़ी तैयार मिलेगी उसमें ही यहां से निकल जाऊंगा। मुझे मद्रास में नहीं रहना चाहिए।"

जल्दी से शकुन्तला और सुमेर ने एक-एक प्याला काफी पी, कुछ बिस्कुट लिए और फिर रेल के स्टेशन की ओर चल पड़े। दो गाड़ियां तैयार खड़ी थीं। एक दिल्ली की ओर दूसरी बंगलौर की। सुमेर का निर्वाचन दिल्ली की गाड़ी का था। अतः वह टिकट घर से दिल्ली के दो टिकट खरीद गाड़ी में जा बैठा।

शकुन्तला जब अपनी सास के घर से चली थी तो बम्बई जाने का विचार करती थी। होटल में उसके पति ने कह दिया था कि वह कलकत्ता जा रहा है और अब वह अपने पति के साथ दिल्ली का टिकट लेकर दिल्ली जा रही थी। अभी भी वह समझ रही थी कि इनको विजयवाड़ा तक का टिकट लेना चाहिए था और वहां से वे कलकत्ते के लिए गाड़ी बदल सकते थे। अतः गाड़ी में आराम से बैठ उसने पति से कह दिया "आपको विजयवाड़ा तक का ही टिकट लेना चाहिए था।"

"क्यों?"

"हमें कलकत्ते जाना है न?"

सुमेर हंस पड़ा। वह बोला, "नहीं देवीजी! मैं अपनी परदादी की शरण में जा रहा हूं। मेरी समझ आ रहा है कि मेरी नौका को वही

पार लगावेगी।"

"पर आपने ····"

"मां से बम्बई जाने के लिए कहा था और तुम्हारे भाई से कलकत्ता। परन्तु मैं जा रहा हू खाटू। तुमने भी तो अभी तक हमारे परिवार के इस मूल स्रोत को नही देखा।"

शकुन्तला इसमें कुछ तत्त्व नही समझी। उसे परेशान देख सुमेर ने कहा, *"तुम नहीं जानती और मैं जानता हू कि बडी मा का बाबा पर कितना प्रबल जादू पड़ा है।* यदि उसके मन मे दया उत्पन्न कर सका तो फिर सब काम सिद्ध हो सकेंगे।"

एक बात वह समझ रही थी कि कम से कम खाटू मे पुलिस का पहुंचना सुगम नही है। वहा विचार करने तथा भावी जीवन का कार्य-क्रम बनाने और उसे चलाने के लिए समय भी मिल जाएगा।

वे फर्स्ट क्लास के डिब्बे मे बैठे हुए दिल्ली की ओर भागे चले जा रहे थे। एकाएक सुमेर हसा और बोला, "मद्रास मे कोई भी यह विचार नहीं करेगा कि मैं खाटू जा रहा हू।"

"कितने दिन लगेंगे वहा पहुचने मे ?"

"दो दिन मे दिल्ली पहुचेंगे और पाच दिन आगे के लिए चाहिए।"

"और पिताजी का क्या होगा ?"

"माताजी उनको छुडाने का प्रबन्ध कर लेंगी।"

"पर वे तो आपपर आशा लगाए हुए हैं।"

"लगाए रहने दो। मैं तो पिताजी को छुड़ाने का यही उपाय ठीक समझ सका हूं। मेरे बाबा सेठ जुग्गीमल के अतिरिक्त कोई उनको छुड़ा नही सकता और उनकी चाबी खाटू मे है।"

शकुन्तला चुप रही। उसने बड़ी मा का घरवालों पर प्रभाव देखा नही था। वह अपने श्वसुर के लिए अधिक चिन्तित भी नही थी। वह तो यह देख रही थी कि उसका पति कीचड़ में फंसा हुआ है। वह बच गया तो उसका जीवन भी चल पड़ेगा।

एक दिन दिल्ली में आराम कर वे राजस्थान की ओर चल पड़े। मद्रास से चलने के आठवें दिन वह खाटू मे सेठ बनवारीलाल की हवेली के बाहर जा खड़ा हुआ।

जब उनके खटखटाने पर द्वार खुला तो अन्दर सूचना भेजी गई कि मद्रास से सुमेर और उसकी पत्नी आए हैं।

रामेश्वरी उनके यहां आने की आशा नहीं करती थी। उसने समझा कि अवश्य कोई भारी गड़बड़ हुई है जो यह पुनः यहां आया है।

जब सूचना भीतर गई तो गजाधर की पत्नी लक्ष्मी उसके पास बैठी उसे अपनी भाषा की एक पुस्तक पढ़ उसका अर्थ समझा रही थी। पुस्तक महात्मा बुद्ध की शिक्षा के सम्बन्ध में थी। महात्मा बुद्ध के किसी शिष्य की लिखी पुस्तक 'धम्मपद' का बर्मी भाषा में अनुवाद था।

रामेश्वरी के चौकीदार ने आकर बताया कि मद्रास से सुमेर और उनकी धर्मपत्नी आए हैं, तो वह मन में विचार करने लगी कि उनके यहां आने का क्या उद्देश्य हो सकता है। उसने लक्ष्मी से कहा, "तुम अपने कमरे में चलो।"

लक्ष्मी अपनी पुस्तक समेट अभी मांजी के कमरे से निकल ही रही थी कि सुमेर शकुन्तला को लिए हुए कमरे में जा पहुंचा। वह लक्ष्मी को वहां देख खिलखिलाकर हंस पड़ा। परन्तु तुरन्त ही स्वयं को नियंत्रित कर वह रामेश्वरी के चरण स्पर्श कर शकुन्तला से बोला, "मांजी को पांयलागूं करो।"

शकुन्तला ने माथा भूमि के साथ लगा कर प्रणाम किया और फिर मांजी के समीप जमीन पर बैठ गई। मांजी एक चौकी पर बैठी थीं। रामेश्वरी ने शकुन्तला की पीठ पर हाथ फेर प्यार देते हुए कहा, "सुमेर, तुम जाते समय तो बिना मिले ही चल दिए थे। अब क्या हुआ है कि फिर यहां आ गए हो?"

"यह तो मां को आराम से बैठकर बताऊंगा। अभी तो यही समझिए कि अपनी उस समय की भूल के लिए क्षमा मांगने के लिए आया हूं। साथ ही मां ने अभी तक अपने परपोते की बहू को आशीर्वाद भी तो नहीं दिया था। पिछली बार जब हम यहां आए थे तो यह बम्बई में अपनी मां के घर गई हुई थी।"

"अच्छी बात है, तुम दोनों मेरे बगलवाले कमरे में ठहर जाओ। स्नान इत्यादि से निवृत्त होकर खाना-पीना कर लो। फिर तुम्हारे आने का कारण पूछूंगी। मेरा तो मन कहता है कि शकुन्तला के दर्शन फोकट में ही हो रहे हैं। तुम्हारे आने का सम्बन्ध तुम्हारे यहां से बिना

बताए भागने के साथ प्रतीत होता है।"

"मां, अभी तो यह आराम ही करेगी। रात भोजन के उपरान्त सारी बात बताऊंगा।"

नौकर को इन दोनो को ठहराने का आदेश मिला तो सुमेर और शकुन्तला उस कमरे मे जा पहुचे जहा रामेश्वरी उनको ठहराना चाहती थी। कमरे में जाकर शकुन्तला ने पूछा, "तो यह थी आपकी लक्ष्मी ?"

"हां, तुमने कैसे जान लिया ?"

"उसकी शक्ल देखकर और फिर आपके उसको देखकर हंसने पर।"

"उसका सौन्दर्य कैसा लगा ?"

"अच्छा है। शरीर उसका मुझसे सुन्दर है। परन्तु उसका मन कैसा है, यह इतनी जल्दी पता नही चल सकता।"

"उसे देख मेरा मन फिर डांवाडोल होने लगा है।"

"पहले जेल की हवा खाने से तो बचिए। फिर इस लक्ष्मी और मन की बात भी सोच ली जावेगी। मैं समझती हू कि यह दिशा आपके लिए शुभ नही होगी।"

६

रामेश्वरी ने भी सुमेर को हसते देखा था। वह लक्ष्मी को वहा देख-कर हंसा था। रामेश्वरी सोच रही थी कि इस नेक लड़की को इस दुष्ट की दुष्टता से बचाना चाहिए। वह इसी दिशा मे विचार कर रही थी।

बनवारीलाल को भी सुमेर और उसके पिता से हुए झगड़े का अस्पष्ट-सा ज्ञान था कि ब्रह्मभोज के दो दिन के उपरान्त हवेली में कुछ झगड़ा हुआ था। उसे इतना स्मरण था। उसने अपनी पत्नी से पूछा, "यह अब किसलिए आया है ?"

"रात को खा-पीकर बताएगा। इसके साथ इसकी बीवी है। सुना है कि बम्बई के किसी बडे धनी-मानी की लड़की है।"

इस धनी-मानी शब्द ने बनवारी के मन मे उस लड़की के प्रति श्रद्धा और रुचि उत्पन्न कर दी थी। परन्तु वह जीवन-भर पारिवारिक समस्याओं से तटस्थ रहकर अपनी माला-पूजा से ही सम्बन्ध रखता आया था, इस कारण वह चुप रहा।

"शकुन्तला, तुम निश्चिन्त रहो। मैं ऐसी मूर्खता नहीं कर सकता जिससे जीवन ही भयमय हो जाए।"

अगले दिन लक्ष्मी ने ही माताजी की ओर से जुग्गीमल के नाम एक पत्र लिख दिया। फिर उसके उत्तर की प्रतीक्षा होने लगी।

सुमेर तो अकेला यहां पड़ा-पड़ा ऊबने लगा था। उसने मां से कहकर मद्रास का समाचार मंगवाने का भी यत्न किया। एक पत्र गजाधर के नाम लिखा गया। उसमें रामेश्वरी ने यह लिखवाया कि सुमेरचन्द खाटू आकर छिपा पड़ा है। कलकत्ते से बड़े सेठ आए हों तो उनको यह समाचार दे दिया जाए।

कलकत्ता की चिट्ठी से पहले ही मद्रास से पत्र आया। लिफाफे में दो पत्र थे। एक लक्ष्मी के लिए दूसरा माताजी के लिए। पत्र लक्ष्मी के नाम पर ही था।

पत्र मिलने पर लक्ष्मी माताजी के पास आकर बोली, "मांजी, मद्रास से आपके पत्र का उत्तर आया है।"

उस समय माताजी के पास शकुन्तला बैठी थी। रामेश्वरी ने एक क्षण तक विचार किया और फिर कहा, "पढ़कर सुना दो।"

लक्ष्मी ने पत्र पढ़कर सुनाना आरम्भ किया, "परम पूजनीया बड़ी माताजी! गजाधर की चरण वन्दना पहुंचे। आपका पत्र मिला और यह जानकर विस्मय हुआ कि सुमेर भैया खाटू पहुंच गया है। मैंने ही उसे मद्रास से भाग जाने की राय दी थी परन्तु मेरी राय थी कि वह बाबाजी के पास कलकत्ता जाए और उनसे अपने कुकृत्यों के लिए क्षमा मांगे। मुझे पूर्ण आशा थी कि बाबाजी सुमेर को क्षमा कर देंगे। फिर उसके पिता की समस्या भी सुगमता से सुलझ जाती। मांजी! लगभग एक करोड़ रुपये का मामला है। फर्म का इतना धन उन्होंने अपने निजी व्यवसाय में लगा लिया है।

"सुमेर की माताजी ने चाचा सन्तराम की जमानत के लिए प्रार्थना की थी। अस्सी लाख रुपये की दो जमानतें मांगी गईं, किन्तु वे उतना प्रबन्ध नहीं कर सकीं।

"बाबाजी यहां आए हुए थे। वे यत्न कर रहे थे कि फर्म का रुपया चाचा सन्तरामजी के व्यापार से निकाल लिया जाए तो फिर सन्तराम को छुड़ा लिया जाए। परन्तु सन्तरामजी के प्राइवेट व्यापार के रजिस्टर

इत्यादि सुमेर की माताजी के पास हैं। वे मिले नहीं और रुपये का पता नहीं चला। बाबा कलकत्ता लौट गए हैं और दो सप्ताह तक फिर आएंगे। तब तक सन्तरामजी हवालात में रहेंगे। यह सब इस कारण हुआ है कि प्राइवेट व्यापार का सब रहस्य सुमेर जानता है और वह खाटू में छिपा हुआ है।

"मैं कलकत्ता लिख रहा हूं। वहां से किसी प्रकार की सूचना आने पर फिर लिखूंगा।"

चिट्ठी सुनने के उपरान्त रामेश्वरी कुछ देर तक विचार करती रही। फिर एकाएक पूछने लगी, "और तुमको भी पत्र आया है?"

"हां माजी! एक लिफाफे में दो पत्र थे। वे चाहते हैं कि मैं उनके पास पहुंच जाऊं। परन्तु कैसे, इस बारे में उन्होंने कुछ नहीं लिखा।"

"तुम जाना चाहती हो?"

"मेरा तो यहां दिल लगा हुआ है। बच्चे भी यहां ठीक-ठाक हैं।"

"परन्तु उसने बुलाया है तो इनकार कैसे करोगी?"

"पर माजी! यहां से जाना भी तो सुगम नहीं।"

"उसका प्रबन्ध मैं कर दूंगी।"

"तो कर दीजिए।"

परन्तु उसी दिन कलकत्ता से तार आया। सेठ जुग्गीमल ने लिखा था, "खाटू आ रहा हूं। सुमेर से वहीं मिलूंगा।"

इस तार ने लक्ष्मी के मद्रास जाने का सुझाव प्रस्तुत कर दिया। तार में सेठजी के आने की बात सुन वह अपना सामान बांधने लगी।

लक्ष्मी और शकुन्तला में सख्यभाव बढ़ रहा था। शकुन्तला प्रायः लक्ष्मी के कमरे में घुसी रहती थी। और सुमेर अपने पचासी वर्ष के परदादा की संगति में परेशानी अनुभव कर रहा था।

जुग्गीमल के आने का समाचार पा वह प्रसन्न तो था परन्तु साथ ही परेशान भी। वह जानता नहीं था कि कम्पनी के रुपये के विषय में कितना कुछ पता चला है और वह उसका पूर्ण रहस्य प्रकट करे अथवा नहीं।

तार मिलने के पांचवें दिन जुग्गीमल खाटू आ पहुंचा। उसके साथ व्यावसायिक कमेटी का एक सदस्य भी था। यह सदस्य था जुग्गीमल का सबसे बड़ा दामाद कृष्णचन्द्र।

मां के सम्मुख सुमेर को बुलाकर जुग्गीमल ने कहा, "देखो सुमेर, तुम यदि कम्पनी के रुपये के गबन की पूरी-पूरी जानकारी दे दो तो तुमको इस गबन के मामले से बाहर कर दिया जाएगा। और यदि फर्म का सब रुपया वसूल हो गया तो सन्तराम के विरुद्ध भी जो मुकदमा चलाया जा रहा है वह वापस ले लिया जाएगा।"

सुमेरचन्द ने विचार किया कि बड़ी मां के सामने बात होने से वे जामिन हो गई हैं और अब वह बाबा से पूरी बात का पालन कराने के लिये घर के पुरखा की सहानुभूति अपने साथ कर रहा है। उसने अपनी सफाई बाबा के समक्ष उपस्थित करने के विचार से कहा, "पिताजी ब्रांच के मैनेजर थे और साथ ही मेरे पिता थे। इस कारण उनके कामों को पसन्द न करता हुआ भी मैं कुछ कर नहीं सकता था।

"मैं तो कलकत्ता जानेवाला था परन्तु सब बात मांजी के सामने करने के विचार से ही यहां चला आया हूं। मुझे किसीने बताया था कि न्यायबुद्धि के साथ सहानुभूति मिल जाए तो उससे सुख और कल्याण की आशा की जा सकती है। आपकी न्यायबुद्धि और मांजी की परिवार के सदस्यों के प्रति सहानुभूति का समागम चाहता था।"

"और तुमको यह सुझाव देनेवाला कौन था? तुम्हारी माताजी?"

"जी नहीं, मेरी पत्नी शकुन्तला। उसने तो यह कहा था कि आपकी और दादीजी की शरण में चला जाऊं तो घोर से घोर कर्म भी क्षमा किया जा सकता है। परन्तु मैंने समझा कि यदि न्याय के साथ सहानुभूति का पुट दिलवाना है तो दादी के स्थान पर परदादी की शरण जाना अधिक ठीक रहेगा। अतः मद्रास से कलकत्ता की गाड़ी में बैठते-बैठते दिल्ली की गाड़ी में बैठ यहां आ पहुंचा हूं।"

इस भूमिका के साथ सुमेर ने सब बात बता दी। पिता के निजी कार्य का पूर्ण वृत्तान्त, जो मौखिक रूप से दिया जा सकता था, उसने बताया। उन फर्मों का नाम और उन बैंकों का नाम और पते जिनके साथ व्यापार होता था, बता दिए गए।

साथ ही यह बता दिया गया कि कारोबार माताजी के नाम से चलता था और पिताजी कारोबार के व्यवस्थापक के रूप में कार्य करते थे।

बड़े भाई माणिक के विषय में यह बात बहुत पहले से पता चल गई

थी कि वह धर्मभीरु है और किसी भी समय बक जाएगा। इस कारण पिताजी ने उसे अपनी ब्रांच से निकलवाकर कलकत्ता भेज दिया था। इसपर भी सब कुछ उससे चोरी रखा जाता था। वह बहुत कम जानता था। सुमेर ब्रांच में पिता के सहायक के रूप में कार्य करता था। इस कारण उनके पूर्ण कारोबार के रहस्य को जानता था।

सुमेर ने बताया, "यदि वे सब रजिस्टर मेरे सामने आ जाएं जो कम्पनी के थे, तो मैं मूल फर्म की और सहायता कर सकता हूं।"

"हम तुमको मद्रास ले चलते हैं। वहां तुम अपनी माताजी से इस गुप्त कम्पनी के सब रजिस्टर निकलवाने का यत्न करो जिससे शीघ्रातिशीघ्र मुकदमा वापस लिया जा सके। साथ ही यदि तुम्हारे पिता फर्म के रुपये की वसूली में हमारी सहायता करने का वचन दें तो हम उनकी जमानत का प्रबन्ध कर सकते हैं।"

"मैं बड़ी मां के सम्मुख वचन देता हूं कि मैं सत्य हृदय से मूल फर्म की सहायता करूंगा। जो कुछ मुझको मौखिक स्मरण था, मैंने बता दिया है। परन्तु माताजी से कागज निकलवाने के लिए तो मैं यत्न करने का ही वचन दे सकता हूं।"

"हां, चलो। मैं कल यहां से चल दूंगा। मेरे साथ तुम, तुम्हारी पत्नी और गजाधर की पत्नी लक्ष्मी भी चलेंगी।"

जब बात का निश्चय हो गया तो रामेश्वरी ने कहा, "देखो जुग्गी, परिवार के बच्चों को सन्मार्ग दिखाना पारिवारिक कृत्य है। मैं उसी-का यत्न करती रहती हूं। साथ ही व्यापार की रक्षा होने पर तो सहानुभूति के लिए मार्ग प्रशस्त हो जाता है।"

जुग्गीमल मां की भावना को समझता था। इसपर भी वह विचार कर रहा था कि क्या यह प्याऊ लगाने की बात नहीं?

७

खाटू में रहते हुए लक्ष्मी और शकुन्तला में सुमेर से सम्बन्धित बातें हो गई थीं। शकुन्तला ने एक दिन उसको माजी के कमरे से निकलते हुए अपने कमरे में चलने का निमन्त्रण दिया तो लक्ष्मी ने कह दिया "बहिन, तुम ही ऊपर आ जाओ। मैं तुम्हारे कमरे में नहीं आ सकती।'

शकुन्तला को अपने पति के उससे सम्पर्क की बात स्मरण हो आई। उसने कहा, "आपके देवर वहां नहीं हैं।"

"फिर भी। मेरे लिए तो उनके कमरे के बाहर लकीर खिंची हुई है।"

"पर वे तुम्हारे कमरे में तो आ सकते हैं।"

इस समय दोनों ऊपर की मंज़िल पर जाने के लिए सीढ़ियां चढ़ रही थीं। शकुन्तला के कथन से लक्ष्मी समझ गई कि शकुन्तला को उसके साथ हुई दुर्घटना का कुछ ज्ञान है। वह सीढ़ियां चढ़ती-चढ़ती रुक गई और प्रश्नभरी दृष्टि से शकुन्तला के मुख को देखने लगी। शकुन्तला ने लक्ष्मी की बांह में अपनी बांह डाली और ऊपर चढ़ते हुए कहा, "मुझे आपके देवर ने एक कहानी बताई है। इसी कारण मैं वैसी घटना की पुनरावृत्ति की सम्भावना के भय की ओर संकेत कर रही हूं।"

"मैंने इसका प्रबन्ध कर लिया है। रात को मैं मांजी के कमरे में सोती हूं। दिन के समय मेरे पास····" उसने अपनी चोली के नीचे छिपी कटार दिखाकर कहा, "यह रहती है। और मुझे इसके चलाने का अभ्यास है। उस दिन जो हुआ भूल से हुआ था। अब वैसी बात नहीं हो सकती। यह तो बलात्कार के प्रतिरोध के लिए है।"

दोनों लक्ष्मी के कमरे में जा पहुंचीं। ललिता और सिद्धू खिलौने खेल रहे थे। दोनों भूमि पर बिछे गद्दों पर बैठ गईं। शकुन्तला ने पूछ लिया, "उस घटना की बात ललिता के पिता को ज्ञात है क्या?"

"सबसे पहले यह बात उनकी माताजी को विदित हुई थी। कदाचित् वे उस समय जाग रही थीं। और वे उसे ललिता का पिता ही समझ रही थीं। वे हमारे उस स्थान पर उस कृत्य को अशिष्ट व्यवहार तो मानती थीं परन्तु वह पापकर्म हो रहा था, यह उनको प्रातः ही पता चला प्रतीत होता है। उन्होंने बड़ी मांजी को बतलाया और बड़ी मांजी ने ललिता के पिता को बता दिया।

"इसके उपरान्त हम दोनों में बातचीत हुई थी और उन्होंने मुझे सावधान रहने के लिए कहा है।"

"और यह कटार?"

"यह तो मैं बचपन से ही अपने पास रखती हूं। यह मेरी मां ने ही दी थी और बताया था कि स्त्रियां को इसके चलाने का अभ्यास करते

रहना चाहिए और इसे सदा तेज रखना चाहिए।

"तब मैंने मां से पूछा था, 'मा! क्या आवश्यकता है इसकी?' मां ने बताया था, 'कभी ऐसी घटना होने लगती है जिससे बचने के लिए हम फांसी पर लटकना भी पसन्द करती हैं। यह वैसे ही समय के लिए है।' उन्होंने यह भी बताया कि हम स्वेच्छा से क्रूर से क्रूर व्यक्ति की पत्नी बन सकती हैं परन्तु बल से सुन्दर से सुन्दर पुरुष से भी अपना शील भंग होना पसन्द नहीं करती। यह कटार वैसे ही अवसरों के लिए है।"

लक्ष्मी समझ गई कि यह हिन्दुस्तानी औरतों की तरह की नहीं है। उसने साफ कह दिया, "मेरे लाला तुमको घर मे सबसे सुन्दर स्त्री मानते हैं। उनकी माताजी भी सुन्दर हैं। और वह अपने को सुन्दर मा का पुत्र होने से एक सुन्दर पुरुष समझते हैं।"

"माजी ने तो मुझे बताया है कि वह एक कुरूप मा का कुरूप पुत्र है। उन्होने मुझमे उसकी कुरूपता को देखने की दृष्टि भी उत्पन्न कर दी है।"

शकुन्तला अपने पति को एक सुन्दर और स्वस्थ युवक समझती थी। उसने लक्ष्मी के घरवाले को नहीं देखा था। इस कारण वह उन दोनों की तुलना नहीं कर सकती थी। हा, वह अपने और लक्ष्मी में अन्तर देख रही थी। लक्ष्मी से वह अधिक सुदृढ और कुछ भारी शरीर-वाली थी। रग पर्याप्त काला था और नाक मोटी तथा आखे छोटी-छोटी थी। अपने सामने बैठी युवती को हलकी, फुलकी, चुस्त, सतर्क, उदीयमान पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान उज्ज्वल परन्तु पीतवर्ण और मुस्कराती हुई देख रही थी।

शकुन्तला को अपने मुख पर मुस्कराते चित्रवत् बैठी देख लक्ष्मी हंस पड़ी। शकुन्तला तो मन में विचार कर रही थी कि कितनी भाग्य-शालिनी है यह औरत।

लक्ष्मी ने उसे मौन देख कहा, "तो तुम नहीं समझी न?"

"मैं यह समझी हूं बहिन, कि तुम मेरी हसी उडाने का यत्न कर रही हो।"

"यह कैसे?"

"मैं यह समझी हूं कि तुम यह प्रकट करने का यत्न कर रही हो कि

तुम्हारे देवर उतने ही सुन्दर हैं जितनी कि मैं हूं।"

लक्ष्मी हंस पड़ी। उसने कहा, "हमारी बातचीत में 'तुम' और 'मैं' तो अभी तक आए ही नहीं। अभी तक तो ललिता के पिता और उनके भाई की बातचीत ही हो रही है। मांजी ने मेरे हृदय में यह बात बैठा दी है कि मनुष्य यह शरीर नहीं। वास्तविक मनुष्य तो उसके भीतर रहनेवाली आत्मा है। उन्होंने मुझे एक धर्म पुस्तक में से एक श्लोक स्मरण करा दिया है। वे नित्य उसका पाठ कराती हैं और मुझे उसके अर्थ का चिन्तन करने को कहती रहती हैं।

"वह श्लोक है—

"अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत॥

"इसमें कहा है कि यह देह नाश होनेवाली है। सदा रहनेवाली इसके भीतर आत्मा है। उसका नाश नहीं होता। उसमें विकार उत्पन्न नहीं होता।

"यह तो हम सब देखते हैं कि देह में बाल्यकाल, यौवन और बुढ़ापा आते रहते हैं। परन्तु आत्मा सदा एक समान रहती है। उस आत्मा को दो आभूषण मिले हैं, जो उसको अलंकृत करते हैं। वे भूषण हैं मन और बुद्धि।

"जब से मैं इस विषय पर इस दृष्टि से विचार करने लगी हूं, मुझे दूसरों की आत्मा का दर्शन होने लगा है। उसी दृष्टि से कह रही हूं। बड़ी मांजी तो अद्वितीय हैं। उनका शरीर जर्जर हो चुका है परन्तु उनकी आत्मा और आत्मा को मिले मन और बुद्धिरूपी आभूषण अति उज्ज्वल हैं। वे सुदृढ़ और सुन्दर भी हैं।"

"और तुम कैसी हो ?"

"मैं स्वयं को देख नहीं सकती। अपने को देखने के लिए कोई दर्पण चाहिए। हां, माताजी अवश्य मुझे देखती होंगी। उनसे कभी पूछना कि मैं कैसी हूं। कदाचित् वे हम दोनों में तुलना भी कर सकें।"

"पर मैं पूछती हूं कि सुन्दर आत्मा, मन और बुद्धि रखने से लाभ ही क्या हुआ यदि उनके सौन्दर्य को देखने की दूसरे में सामर्थ्य ही नहीं, उसे देख पसन्द करने की किसीमें रुचि ही नहीं।"

"मैं तो अभी तक यह समझी हूं कि अपने आत्मा को दूसरे द्वारा

देखे जाने और उसको अधिक से अधिक सुन्दर बनाने की आवश्यकता है। दूसरे तो स्वयमेव पसन्द करने लगते हैं।"

शकुन्तला को यह बात ठीक प्रतीत नहीं हुई थी। वह समझती थी कि एक पत्नी का पति द्वारा पसन्द किया जाना अत्यावश्यक है। इस पसन्द किए जाने में शरीर ही मुख्य वस्तु है। एक सुन्दर, सबल और स्वस्थ शरीर ही पति को आकर्षित कर सकता है और यह पति-पत्नी-सम्बन्धों में अत्यावश्यक बात है।

इस कारण एक अन्य दिन उसने इसी विषय पर बड़ी मां से बात की। वह लक्ष्मी की अनुपस्थिति में ही बात करना चाहती थी। ऐसा अवसर मिलते ही उसने पूछा, "माजी, जब पत्नी को पति पसन्द न करे तो उस अवस्था में पत्नी क्या करे?"

"भगवत् भजन करे। अगले जन्म में उसको वास्तविक सौन्दर्य पहचानने की बुद्धि रखनेवाला पति मिल जाएगा।"

"अर्थात् उसको सुन्दर शरीर मिल जाएगा। परन्तु इस जन्म में तो कोई उपाय नहीं है न?"

"उसका भी उपाय है। जो आभूषण आत्मा को मिले हैं, उनको तनिक पालिश और धो-पोंछकर रखने से आत्मा का सौन्दर्य पति पर प्रतिबिम्बित होने लगेगा। वह पत्नी के वास्तविक रूप-लावण्य को देखने लगेगा।"

"मुझे तो इसमें कोई आशा दिखाई नहीं देती।"

"तो तुम अपने विषय में पूछ रही हो? पर शकुन्तला, तुम तो बहुत ही सुन्दर लड़की हो। तुम्हारी आत्मा अति उज्ज्वल और सुन्दर है। एक बात और बताऊं। देखो किसीसे कहना नहीं। किसी दुष्ट व्यक्ति को पता चल गया तो वह ईर्ष्या करने लगेगा और फिर इस बात में विघ्न बनने का यत्न करेगा। तुम अति सुन्दर हो और तुम्हारा सौन्दर्य तुम्हारे पति पर प्रतिबिम्बित होने लगा है। जब से तुम बम्बई में आई हो वह तुम्हारे सौन्दर्य को दिनोंदिन अधिकाधिक अनुभव करने लगा है।"

"यह बात उन्होंने कही है?"

"इन शब्दों में तो नहीं कही है। हां, उसकी प्रत्येक बात से यही ध्वनित होता सुनाई देता है कि तुम्हारे व्यक्तित्व का उसके मानस पर

प्रभाव हो रहा है। इसीको तो सौन्दर्य कहते हैं। सांसारिक लोग शरीर की बनावट से प्रभावित होते हैं, यह मनुष्यों में पशुपन का लक्षण है। कुत्ते भी कुतियों की ओर आकर्षित होते रहते हैं। परन्तु एक मनुष्य दूसरे में मनुष्यता को उत्पन्न करने लगता है। सुन्दर वातावरण में सुन्दर पदार्थ निर्मित होते हैं।

"यही बात मुझे तुम्हें लेकर तुम्हारे पति में उत्पन्न होती प्रतीत होने लगी है।"

शकुन्तला गम्भीर होकर अपने पति के उन दिनों के व्यवहार पर चिन्तन करने लगी। जब से वह बम्बई से आई थी, चिन्तन करने पर उसको ऐसा प्रतीत हुआ था कि उसके व्यवहार में कुछ तो अन्तर आया ही है। वह अभी तक तो यह समझ रही थी कि यदि उसका पति उसके प्रति कम रुष्टता प्रकट कर रहा है तो वह बड़ी मांजी को अपने अनुकूल करने के लिए है और अपने मन के भावों को लक्ष्मी के प्रति छुपाने के लिए है। बम्बई से चलते समय भी उसने कहा था कि वह फर्म की मद्रास शाखा में ही काम पाना चाहता है, जिससे वह गजाधर की पत्नी लक्ष्मी से सम्पर्क बना सके। इस कथन के उपरान्त वह अपने पति के पूर्ण व्यवहार को कृत्रिम मानती थी।

परन्तु अब मांजी कह रही थीं कि यह उसके मानसिक और बौद्धिक परिवर्तन के कारण है। यद्यपि उसको माताजी के कथन पर पूर्ण रूप से विश्वास नहीं आया था पर इसने उसके मन में एक प्रकार से उत्साह भर दिया था और वह अपने व्यवहार के प्रभाव को और अधिक देखना चाहती थी।

मांजी ने उसे ईर्ष्यालु व्यक्तियों से सचेत भी किया था। वह मन में विचार करने लगी थी कि मुझसे ईर्ष्यालु कौन हो सकता है। विचार करने पर भी वह समझ नहीं सकी।

रामेश्वरी ने उसे मौन और गम्भीर विचार में देख पूछ लिया, "क्या विचार कर रही हो?"

"मांजी, मैं अभी आपकी बात को हृदयंगम नहीं कर सकी। यह तो मैं अनुभव कर रही हूं कि उनके मेरे प्रति व्यवहार में परिवर्तन है परन्तु यह मेरे किस गुण के कारण है, यह अभी समझ में नहीं आ रहा है।"

"तुम अपने मन को कलुषित मत करो। इसको इसी प्रकार स्वच्छ

और निर्मल रखो जैसा यह है। बुद्धि को निर्मल एवं सतर्क रखो और ईश्वर पर विश्वास करो। वही भविष्य के विषय में जानता है।"

८

सुमेर और जुगीमल में बात हुई तो सुमेर ने शकुन्तला को बता दिया, "हम कल बाबाजी के साथ मद्रास जा रहे हैं।"

"तो सुलह हो गई है ?"

"यही कि वे पिताजी को जमानत पर छुड़ाने और उनके विपरीत मुकदमा वापस लेने के लिए भी तैयार हो गए हैं। वे केवल यह चाहते हैं कि फर्म का रुपया वापस मिल जाना चाहिए। उन्होंने उस धन के विषय में कुछ नहीं कहा जो हमको फर्म के स्थान पर अपने नाम से व्यापार करने पर प्राप्त हुआ है।"

"यह कैसे हो सकता है ? गजाधर ने उनको सब बता दिया होगा।"

"हो सकता है। यदि यह सब कुछ जानकर भी वे इतने उदार हैं तो सत्य ही पिताजी भूल कर रहे हैं। पिताजी को पाच वर्ष पहले ही स्पष्ट रूप से कह देना चाहिए था कि वे पृथक् व्यापार करना चाहते हैं। मैं समझता हूं कि वे हमको आर्थिक सहायता भी देते।"

"खैर, यह तो हुआ नहीं। इसके विचार की अब आवश्यकता भी नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि अब आप क्या करने जा रहे हैं।"

"मैं बाबाजी की फर्म की हानिपूर्ति मे सहायता करने जा रहा हू।"

"परन्तु इसमे आपकी माताजी बाधा खड़ी करेंगी।"

"उनको समझाने का यत्न करूगा कि हमारा हित इसमे ही है।"

"मान लीजिए कि वे आपका कहा नही मानते तो क्या होगा ?"

"होगा यह कि मुकदमा चलेगा। गबन सिद्ध होना सहज है और पिताजी को सात वर्ष का दण्ड होना निश्चित है। पिताजी के नाम पर किसी प्रकार की अचल सम्पत्ति नहीं। इस कारण जब्त तो कुछ होगा नहीं परन्तु पिताजी का इस कैद मे जीवन बीत जाएगा।"

"इस परिस्थिति में आप क्या करेंगे ?"

"तुम क्या समझती हो कि मुझे क्या करना चाहिए ?"

"मैं भला आपको क्या राय दे सकती हूं। जो आपको सत्य और न्याययुक्त समझ आए उसको ही करिए।"

"इसमें निपट निर्धनता की स्थिति भी हो सकती है।"

"बड़ी मांजी के घर पर आकर रहने लगेंगे।

"यहां खाटू में ?"

"हां, यहां क्यों नहीं ?"

"यहां कुछ काम नहीं।"

"काम तो बनाया जा सकता है।"

"भला कैसे ?"

"यदि इसकी आवश्यकता पड़ी तो विचार कर लिया जाएगा।"

इसपर सुमेर विचारमग्न हो गया। उसने कुछ विचारकर कहा, "यह सब बहुत ही विचित्र प्रतीत होता है। मैं फर्म के कार्यालय में बैठा था जब गजाधर ने बताया कि उसने टेलीफोन पर पुलिस को वहां बुलाया है कि वे मुझको पकड़ लें।

"मैं प्रत्यक्ष में तो अपना शौर्य प्रकट कर रहा था और कह रहा था कि आने दो पुलिस को, मैं यहीं बैठा हूं। परन्तु मन ही मन विचार कर रहा था कि वहां से भाग जाऊं। एकाएक गजाधर ने स्वयं कह दिया कि मैं भागकर अपने श्वसुर के पास अथवा भापाजी के पास जा सकता हूं। वह कह रहा था कि हूं तो मैं उसका भाई ही।

"मैं गजाधर के विचार सुन चकित था। मुझे उसके इस कथन में भी कुछ कुटिलता ही अनुभव हो रही थी। इसपर भी मैं आया। होटल पहुंचने तक मैं विचार करने लगा था कि तुम्हारे पिताजी से अपनी और अपने पिता की काली करतूत का वर्णन करूंगा तो क्या वे वही सहानुभूति दिखाएंगे जो गजाधर ने दिखाई थी। मैं समझता था कि तुम मेरी सिफारिश लगाओगी तो वे तुम्हारी खातिर मेरी बात मान जाएंगे परन्तु यह सहानुभूति होगी अथवा मुझपर एहसान। इससे तो मैं तुम्हारा बेदाम का गुलाम बन जाऊंगा।

"अतः मैं अपने बम्बई जाने की उपयुक्तता पर सन्देह करने लगा था। स्टेशन पर दिल्ली जाने की गाड़ी खड़ी थी। मैंने नगेन्द्र से कहा, 'भैया, दो टिकट दिल्ली के ले लो।' मैंने उसे एक सौ रुपये का नोट दिया तो वह मेरा मुख देखने लगा। मैंने उसका समाधान कर दिया। मैं

दिल्ली में जामिन ढूंढने के लिए जा रहा हूं। वहां एक जान-पहचान का आदमी है।

"नगेन्द्र ने भी यह उचित समझा प्रतीत होता है। उसने इसके उपरान्त कुछ कहा नहीं और टिकट ले आया।

"मैंने तुरन्त यह निर्णय किया था कि यदि गजाधर, जिसकी पत्नी के साथ मैं दुर्व्यवहार कर चुका था, सहानुभूति की बात कर रहा है तो इन सबकी पीरमुर्शिद माजी को क्यों न कहूं ? यहां आकर मुझे यह पता चला है कि माजी से सहानुभूति प्राप्त करनी तो गजाधर से भी सुगम बात थी।

"अब बाबा आए हैं और उनका व्यवहार न्याययुक्त तो है ही, वह सहानुभूतिपूर्ण भी है।

"मेरे मन में अपने सम्बन्धियों के प्रति जो मैल था वह बहुत सीमा तक धुल चुका है।"

"मुझे आपकी बात सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई है। देखिए, आगे क्या होता है।"

"मुझे भय है अपनी माताजी की ओर से।"

"भय की क्या बात है ?"

"कुछ कह नहीं सकता। मैं ही उनकी ओर से आश्वस्त नहीं हूं।"

"आशा करनी चाहिए कि वे भी अपनी भलाई इसीमें समझेंगी कि परिवारवालों के साथ धोखा न किया जाए।"

यह बात तो लक्ष्मी से ही शकुन्तला को पता चली थी कि वह भी बाबाजी के साथ मद्रास जा रही है। वह यह देख प्रसन्न थी कि उसके पति ने कई दिन से लक्ष्मी के विषय में बातचीत करनी छोड़ दी है। उस दिन भी उसने लक्ष्मी के विषय में नहीं बताया था। शकुन्तला किसी न किसी प्रकार अपने पति को सचेत कर देना चाहती थी कि लक्ष्मी के पास सदा तेजधारवाली कटार रहती है और वह उसके प्रयोग का अभ्यास करती रहती है।

खाटू से विदा होने के दिन चलने से पूर्व शकुन्तला ने अपने पति से कहा, "कुछ ऐसा पता चला है कि लक्ष्मी भी साथ चल रही है।"

"हां।"

"आपको उससे सतर्क रहना चाहिए।"

मुस्कराहट से ही वह परास्त हुआ था। अब भी वही बात हुई। उसने कहा, "घर चलकर बात करूंगा।"

जुग्गीमल एण्ड कम्पनी का एक 'अतिथि-गृह' था। यहां कम्पनीवालों के मद्रास में रहने का प्रबन्ध था। गजाधर अभी अकेला होने की वजह से वहीं रहता था। जुग्गीमल इत्यादि को भी गजाधर वहीं ले जानेवाला था। प्रश्न सुमेरचन्द का उपस्थित हुआ। उसका निर्णय जुग्गीमल ने कर दिया। उसने कहा, "सुमेर, अभी तो तुम हमारे साथ गेस्ट हाउस में ही चलो। वहां चलकर निश्चय कर लेना कि तुमको कहां जाना चाहिए।"

इसपर गजाधर ने कहा, "इनकी माताजी तो घर से लापता हैं। घर को ताला लगा मिला था। पड़ोस में पूछ-ताछ से पता चला है कि मकान खाली कर ही वे गई हैं। मकान का भाड़ा फर्म की ओर से दिया जा रहा था। इस कारण फर्म का मकान खाली हुआ है।"

इस सूचना ने जुग्गीमल को परेशान कर दिया। उसने पूछा, "गजाधर, वह मकान कब से खाली पड़ा है?"

"कुछ दिन पहले हमारे वकील ने कोर्ट में एक प्रार्थना-पत्र दिया था कि उस मकान की तलाशी की आज्ञा दी जाए जिससे यदि फर्म के कागजात वहां हों तो वे लिए जा सकें। सन्तरामजी के वकील ने इसका विरोध किया था। इसपर भी मजिस्ट्रेट ने तलाशी की आज्ञा दे दी। उस आज्ञा को लेकर जब हम लोग मकान में गए तो वहां ताला लगा हुआ पाया। मजिस्ट्रेट की आज्ञा से ताला तोड़ा गया तो मकान खाली पड़ा था।"

सब लोग अतिथि-गृह में चले गए। वहां स्नानादि से अवकाश पा-कर सब लोग भोजन करने बैठे। भोजनोपरान्त बैठकर विचार करने लगे कि अब क्या किया जाना चाहिए। सुमेर अपने मन में कई प्रकार की योजनाएं बनाता आया था। उसका विचार था सेठजी से कहकर पिताजी की जमानत कराकर उनको हवालात से मुक्त कराया जाए। फिर उसके बाद मूल फर्म के रुपये का प्रबन्ध कराया जाए। उसे सन्देह था कि मां किसी प्रकार भी फर्म का धन वापस देने को राजी नहीं होगी। परन्तु वह यह नहीं समझ सका था कि मां मकान व
कहीं लापता हो जाएगी।

विचार-विमर्श करनेवालों में सेठ जुगीमल, कृष्णचन्द्र, गजाधर, श्री वेंकट अय्यर तथा मुकदमे में उनके वकील श्री रमण थे।

रमण का विचार था कि सन्तराम जानता है कि उसकी पत्नी कहां गई है। उसने कहा, "यह पता चला है कि मकान छोड़ने से पूर्व वह अपने पति से मिली है। साथ ही हवालात में उसके सुख-सुविधा के लिए धन और सामान भी पहुंच रहा है।"

"क्यों सुमेर, अब क्या विचार है ?"

"मैं पिताजी से मिलकर सब बात जानना चाहता हूं।"

"ठीक है। तुम जल्दी पता करो कि तुम्हारे माता-पिता मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं अथवा नहीं।"

वहां से खाली होते ही वह अपने पिताजी की ओर से मुकदमे में उपस्थित होनेवाले वकील श्री मेनन से मिला।

वकील ने जब उसको आया देखा तो वह विस्मय से उसे देखता ही रह गया। फिर उसके मुख से निकला, "तुम कहां थे ?"

"यहीं था।"

"तुम्हारे तो बिना जमानत के वारंट निकले हुए हैं।"

"मुझे पता नहीं। मैं पिछले मास अपनी मां से कुछ रुपये निर्वाह के लिए ले गया था। वे अब खर्च हो गए हैं। और रुपये लेने के लिए घर पर गया था परन्तु मकान में ताला लगा हुआ था। यह देख मैं आपसे जानने आया हूं कि वे कहां हैं ?"

"मकान को ताला तो फर्मवालों ने लगवा दिया है। परन्तु तुम्हारी मां लापता है। मुकदमे के लिए कुछ धन मुझको भी चाहिए था परन्तु नहीं जानता कि उनसे कहां मिलूं।"

"पिताजी को तो पता होगा ?"

"वे कहते हैं कि उनको पता नहीं है। प्रति सप्ताह के दो सौ रुपये जेलर को इस मतलब के लिए दिए जा रहे थे कि उनके खाने-पीने और रहने का अच्छा प्रबन्ध हो सके। दो सप्ताह से जेलर को भी कुछ नहीं मिला और तुम्हारे पिताजी आजकल कष्ट में हैं।"

"क्या उनसे मैं मिल सकता हूं ?"

"जेलर को कुछ देना पड़ेगा। प्राइवेट तौर पर मिल सकोगे। अदालत में तुम्हें हाज़िर किया तो तुम भी पकड़कर हवालात में डाल

दिए जाओगे।"

"कितना मांगेगा जेलर ?"

"कहो तो पूछकर बता सकता हूं। कल बहुत प्रात काल आना। मेरा विचार है कि एक घण्टे की भेंट के लिए एक सौ रुपया तो मांगेगा ही।"

"तो प्रबन्ध कर दीजिए। इतना कुछ तो मैं दे दूंगा। मैं स्वयं को पकड़वाने से पहले माता-पिता से सम्पर्क स्थापित करना चाहता हूं।"

सुमेर के पास एक दिन प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त अन्य उपाय ही कोई नहीं था।

६

गजाधर अपनी पत्नी की मुस्कराहट को देख उससे एकान्त में मिलने के लिए उतावला हो रहा था। ऐसा अवसर रात को ही मिल पाया। लक्ष्मी ने बताया, "बड़ी माजी वृद्धा होने पर भी खूंखार से भी खंखार व्यक्ति को अपने सम्मोहन मे बाध रखने की शक्ति रखती हैं।

"आपके भाई शकुन्तला के घरवाले वहा एकाएक पहुचे तो मैं भयभीत हो ऊपर की मंजिल पर अपने कमरे मे भाग गई। वैसे तो मैंने एक बात समझ ली थी कि आप मद्रास आ रहे हैं और यहां आपके भाई साहब से सामना हो सकता है। अत: मैंने अपनी पुरानी कटार लोहार से तेज करा ली और यहा छिपा रखी थी। मैं इसके चलाने का नित्य अभ्यास करती रहती थी।

"इस कटार को अपने पास रखने मे मैं कुछ आश्वस्त अनुभव करती थी। परन्तु परिवार के एक सदस्य की हत्या कर देने पर मेरी यहा क्या स्थिति रह सकेगी, यही चिन्ता और भय का विषय था।

"उन्होंने मुझको माजी के पास बैठा देखा था, तब उनकी आंखों मे शरारत दिखाई दी थी। परन्तु दिन व्यतीत होने के साथ-साथ उनकी आंखो की शरारत का लोप होता हुआ दिखाई देने लगा था। वे यहा पर बाईस दिन रहे हैं और मैं समझती हूं कि माजी के सम्मोहन से कहिए अथवा ईश्वर की प्रेरणा से कहिए, वे यहा से लौटते हुए तो भीगी बिल्ली की भांति भयभीत प्रतीत होते थे।"

"लक्ष्मी, तुममें भी तो मांजी के पास रहने पर कुछ परिवर्तन आया प्रतीत होता है।"

"सच ! पर वह तो मैं देख नहीं सकती। अपने गुण-दोष कोई स्वयं नहीं देख सकता।"

"मैं सत्य कहता हूं कि तुम्हारी मुस्कराहट में पुनः वही जादू आ गया है जो कालेज के दिनों में था। तुम वैसी ही लुभायमान प्रतीत हो रही हो।"

"मुझे स्वयं में कुछ भी विशेषता प्रतीत नहीं हो रही। यह भी तो हो सकता है कि एक लम्बी अवधि से मैं आपकी संगत में नहीं थी।"

"हो सकता है। देखो, यदि माताजी के कारण कुछ विशेषता उत्पन्न हुई है तो वह स्थायी होनी चाहिए।"

गजाधर को आशा थी कि सेठ सुमेर को समझाकर अपनी ओर कर लेंगे। परन्तु यहां की परिवर्तित परिस्थिति का क्या प्रभाव होगा? और क्या उसकी माता छिपी हुई हैं अथवा उसके पिता को भी छोड़ सब धन-दौलत लेकर भाग गई हैं ? कम से कम यह तो स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि फर्म के पक्ष में सुमेर के आ जाने से फर्म को किसी प्रकार का लाभ नहीं होनेवाला था। इसपर भी वह देख रहा था कि सेठजी का व्यवहार सुमेर के प्रति वैसा ही था जैसा कि खाटू से आते समय था।

अगले दिन सुमेर ने वकील के द्वारा जेलर की सहायता से जेल के एक पृथक् कमरे में अपने पिता से भेंट की।

"कहां थे सुमेर तुम ?"

"भूमिगत था।"

"परन्तु तुम्हारे तो बिना ज़मानती वारंट निकले हुए हैं। तुम पकड़ गए तो जमानत से भी नहीं छुड़ाए जा सकोगे।"

"तो इससे कुछ अन्तर पड़ता है ? आपके वारंट बाज़मानत हैं और आप जमानत पैदा नहीं कर सके।"

"ज़मानत तो हो सकती है परन्तु तुम्हारी मां ने धोखा दिया है। उसने ज़ामिन ढूंढ़ने का यत्न नहीं किया।"

"वे कैसे करतीं ?"

"मैंने उससे कहा था कि वह एक करोड़ रुपये का ड्राफ्ट बनवाकर

शकुन्तला के पिता के पास चली जाए। उस रुपये की जमानत पर वे मेरे ज़ामिन बन जाते। परन्तु वह वहां नहीं गई। एक दिन उसने कहा था कि तुम अपने श्वसुर के पास जमानत का प्रबन्ध करने के लिए गए हो। परन्तु बहुत दिनों तक तुम्हारी कोई सूचना नहीं मिली।"

सुमेर ने यह बताए बिना कि वह कहां रहा, पूछा, "अब माताजी कहां होंगी ?"

"मुझे पता नहीं। वह मुझे बताकर नहीं गई। यहां तक कि वह बैंकों के अपने सब प्राइवेट खाते का रुपया निकाल कर ले गई है।"

"कैसे निकालकर ले गई हैं ?"

"हमारी फर्म के सब खाते हम दोनो के हस्ताक्षरो पर चलते थे। मैं बन्दीगृह में था और उसने सब निकाल लिया है।"

"कितना रह गया होगा ?"

"दो-अढ़ाई करोड़ के लगभग होगा। कल वकील साहब आए थे और कह रहे थे कि आगे के खर्च के लिए कहा से धन लिया जाए। कुछ दिन हुए जेलर आया था और कह रहा था कि उसको मिलनेवाला रुपया तीन सप्ताह से नही मिला है इसलिए वह भविष्य मे मेरी सुख-सुविधा का प्रबन्ध नही कर सकता। अब मुझको जेल की सूखी रोटी और काला साग मिलने लगा है। मैं समझता हू कि यदि महीने तक यह बात रही तो मेरे यहा प्राणांत हो जाएगे।"

सुमेर अपने पिता के दुर्बल शरीर को देखता रहा। कुछ क्षणों तक चिन्तित-सा बैठा रहने के उपरान्त वह कहने लगा, "भूमिगत होने से पूर्व मैं माताजी से एक सहस्र रुपया ले गया था। वह रुपया अब व्यय हो चुका है। शकुन्तला मेरे साथ है। बीस-तीस रुपये नित्य का खर्च है। मैं भी परेशान हूं कि क्या करू। एक विचार यह भी आ रहा है कि स्वयं को पुलिस के हवाले कर दूं। शकुन्तला अपने बाप के घर चली जाएगी और मुझे आप जैसी रूखी-सूखी तो मिलने लगेगी।"

सन्तराम बहुत ही दुखी मन से पुत्र का मुह देखने लगा। सुमेर को विश्वास आ गया कि सत्य ही उसका पिता अपनी पत्नी के विषय में कुछ नही जानता। उसने अपने पिता से पूछा, "माताजी आपसे कब मिली थी ?"

"आज बीस दिन हो गए हैं। वह आई थी और तुम्हारा किसी

प्रकार का समाचार न पाने से चिन्तित प्रतीत होती थी। उस दिन वकील के विषय में बातचीत होती रही। वह मेनन को बहुत बड़ा लोभी बताती थी। मेनन मुकदमे के बारह-तेरह दिन में ही दस सहस्र रुपये खर्च के लिए ले चुका था।

"मैंने उससे आग्रह किया था कि अस्सी लाख रुपये की ज़मानत है। चार ज़मानतें बीस-बीस लाख की ढूंढ़नी हैं। वह किसी भी साहूकार के पास इतना रुपया जमा कराकर प्रबन्ध कर सकती है। वह इस दिशा में यत्न करने का वचन दे गई थी।

"इसके उपरान्त वह नहीं आई।"

"पिताजी, शकुन्तला कह रही थी कि बाबाजी से सुलह कर लेनी चाहिए। वह कहती थी कि उसके पिता को बीच में डालकर सुलह का प्रबन्ध होना सम्भव है।"

"बहुत कठिन है सुमेर! कम्पनी की पूरी पूंजी दस करोड़ रुपया है और उसमें से लगभग एक करोड़ का गबन हो चुका है। यदि यह रुपया न मिला तो फर्म का तो दिवाला निकल सकता है। नहीं सुमेर, उस दिशा में मुझे कुछ आशा नहीं।"

"देखिए पिताजी! बाबा आजकल यहां आए हुए हैं। यदि आप कहें तो मैं शकुन्तला को उनके पास भेजूं। यदि कुछ नहीं हो सका तो वर्तमान से बुरा तो कुछ नहीं हो सकता।"

"देखो सुमेर, तुम अपने लिए यत्न कर लो। फिर मेरे लिए विचार कर लेना। मैं समझता हूं कि जब तक तुम्हारी मां का पता नहीं चल जाता, तब तक सुलह की सम्भावना नहीं है। मेरा जीवन तो उसकी मुट्ठी में है।"

"अच्छा, मैं आपसे पुनः मिलने का यत्न करूंगा। बात यह है कि एक घण्टा-भर बातचीत कर एक सौ रुपया जेलर को देना पड़ता है। मेरे पास तो इतना है नहीं। इसपर भी मैं आज एक बात करनेवाला हूं। शकुन्तला का नैकलेस बाज़ार में ले जाकर बेचने का यत्न करूंगा और फिर कुछ काल के लिए आपकी सुख-सुविधा का भी प्रबन्ध करने का यत्न करूंगा।"

जुग्गीमल ने दो सौ रुपया जेलर को दे सन्तराम के खाने-पीने का प्रबन्ध करा दिया और उन सब बैंकों को नोटिस दिलवा दिया जिनमें

सुमेरचन्द ने पिता के प्राइवेट धन जमा करने की सूचना भेजी थी।

सन्तराम का प्राइवेट व्यापार करने का एक सरल उपाय था। वह फर्म के व्यापार में से कुछ सौदे फर्म के रजिस्टर में दर्ज नहीं करता था। उन सौदों का रुपया स्वाभाविक रूप में मूल फर्म में से दिया जाता था और रुपया आने पर अपने प्राइवेट खातों में जमा करा देता था। सन्तराम के प्राइवेट ग्राहकों के चैक फर्म के नाम आते थे तो वे फर्म की मुहर लगा अपने बैंकों में जमा करा देता था।

जब से सन्तराम पकड़ा गया था, कई लाख रुपये के ऐसे चैक और ड्राफ्ट आए हुए थे। इन लोगों के भेजे गए माल को न तो दर्ज किया गया था और न ही उस माल का भेजा जाना किसी किताब में दर्ज था।

उन प्राइवेट खातेवालों को नोटिस भेजा गया परन्तु उन बैंकों में से रुपया राधा के निकालकर ले जाने के बाद कुछ अधिक रहा नहीं था। राधा बैंकों में से पूरा धन और प्राइवेट व्यापार के सब रजिस्टर लेकर लापता हो गई थी।

सेठ जुगीमल ने सुमेर के विरुद्ध मुकदमा वापस ले लिया। उसकी ओर से एक अर्जी दिलवाई कि वह अपने पिता के इस काले व्यापार के विषय में कुछ नहीं जानता, वह तो केवल एक क्लर्क का काम करता था। जब यह प्रार्थना अदालत में उपस्थित हुई तो फर्म के वकील ने सुमेर की इस प्रार्थना पर कोई आपत्ति नहीं की और उसे अदालत में प्रस्तुत किया और फिर वह छूट गया।

इसके उपरान्त सुमेर अपने पिता की जुगीमल एण्ड सन्स फर्म से सुलह कराने का यत्न करने लगा।

इस समय तक यह पता चला था कि राधा अपनी मां के साथ सब धन लेकर हिन्दुस्तान से बाहर चली गई है। पासपोर्ट तो राधा ने एक वर्ष पूर्व ही बनवा लिया था और उसने अपनी मां के नाम का पासपोर्ट सन्तराम के पकड़े जाने के बाद बनवाया था।

जब सन्तराम को पता चला कि राधा सब धन लेकर हिन्दुस्तान से बाहर भाग गई है तो वह समझ गया कि जुगीमल की फर्मवालों से सुलह किए बिना उसका उद्धार नहीं। वह सुमेर की यह शर्त मान गया कि उसको ज़मानत पर छुड़ा लिया जाए। वह अपने निजी व्यापार की सब बात बता दे तथा जितना भी धन वसूल होना है, वह करा दे, तो

प्रकार का समाचार न पाने से चिन्तित प्रतीत होती थी। उस दिन वकील के विषय में बातचीत होती रही। वह मेनन को बहुत बड़ा लोभी बताती थी। मेनन मुकदमे के बारह-तेरह दिन में ही दस सहस्र रुपये खर्च के लिए ले चुका था।

"मैंने उससे आग्रह किया था कि अस्सी लाख रुपये की ज़मानत है। चार ज़मानतें बीस-बीस लाख की ढूंढ़नी हैं। वह किसी भी साहूकार के पास इतना रुपया जमा कराकर प्रबन्ध कर सकती है। वह इस दिशा में यत्न करने का वचन दे गई थी।

"इसके उपरान्त वह नहीं आई।"

"पिताजी, शकुन्तला कह रही थी कि बाबाजी से सुलह कर लेनी चाहिए। वह कहती थी कि उसके पिता को बीच में डालकर सुलह का प्रबन्ध होना सम्भव है।"

"बहुत कठिन है सुमेर! कम्पनी की पूरी पूंजी दस करोड़ रुपया है और उसमें से लगभग एक करोड़ का गबन हो चुका है। यदि यह रुपया न मिला तो फर्म का तो दिवाला निकल सकता है। नहीं सुमेर, उस दिशा में मुझे कुछ आशा नहीं।"

"देखिए पिताजी! बाबा आजकल यहां आए हुए हैं। यदि आप कहें तो मैं शकुन्तला को उनके पास भेजूं। यदि कुछ नहीं हो सका तो वर्तमान से बुरा तो कुछ नहीं हो सकता।"

"देखो सुमेर, तुम अपने लिए यत्न कर लो। फिर मेरे लिए विचार कर लेना। मैं समझता हूं कि जब तक तुम्हारी मां का पता नहीं चल जाता, तब तक सुलह की सम्भावना नहीं है। मेरा जीवन तो उसकी मुट्ठी में है।"

"अच्छा, मैं आपसे पुनः मिलने का यत्न करूंगा। बात यह है कि एक घण्टा-भर बातचीत कर एक सौ रुपया जेलर को देना पड़ता है। मेरे पास तो इतना है नहीं। इसपर भी मैं आज एक बात करनेवाला हूं। शकुन्तला का नैकलेस बाज़ार में ले जाकर बेचने का यत्न करूंगा और फिर कुछ काल के लिए आपकी सुख-सुविधा का भी प्रबन्ध करने का यत्न करूंगा।"

जुग्गीमल ने दो सौ रुपया जेलर को दे सन्तराम के खाने-पीने का प्रबन्ध करा दिया और उन सब बैंकों को नोटिस दिलवा दिया जिनमें

सुमेरचन्द ने पिता के प्राइवेट धन जमा करने की सूचना भेजी थी।

सन्तराम का प्राइवेट व्यापार करने का एक सरल उपाय था। वह फर्म के व्यापार में से कुछ सौदे फर्म के रजिस्टर में दर्ज नहीं करता था। उन सौदों का रुपया स्वाभाविक रूप में मूल फर्म में से दिया जाता था और रुपया आने पर अपने प्राइवेट खातों में जमा करा देता था। सन्तराम के प्राइवेट ग्राहकों के चैक फर्म के नाम आते थे तो वे फर्म की मुहर लगा अपने बैंकों में जमा करा देता था।

जब से सन्तराम पकड़ा गया था, कई लाख रुपये के ऐसे चैक और ड्राफ्ट आए हुए थे। इन लोगों के भेजे गए माल को न तो दर्ज किया गया था और न ही उस माल का भेजा जाना किसी किताब में दर्ज था।

उन प्राइवेट खातेवालों को नोटिस भेजा गया परन्तु उन बैंकों में से रुपया राधा के निकालकर ले जाने के बाद कुछ अधिक रहा नहीं था। राधा बैंकों में से पूरा धन और प्राइवेट व्यापार के सब रजिस्टर लेकर लापता हो गई थी।

सेठ जुग्गीमल ने सुमेर के विरुद्ध मुकदमा वापस ले लिया। उसकी ओर से एक अर्जी दिलवाई कि वह अपने पिता के इस काले व्यापार के विषय में कुछ नहीं जानता, वह तो केवल एक क्लर्क का काम करता था। जब यह प्रार्थना अदालत में उपस्थित हुई तो फर्म के वकील ने सुमेर की इस प्रार्थना पर कोई आपत्ति नहीं की और उसे अदालत में प्रस्तुत किया और फिर वह छूट गया।

इसके उपरान्त सुमेर अपने पिता की जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म से सुलह कराने का यत्न करने लगा।

इस समय तक यह पता चला था कि राधा अपनी मां के साथ सब धन लेकर हिन्दुस्तान से बाहर चली गई है। पासपोर्ट तो राधा ने एक वर्ष पूर्व ही बनवा लिया था और उसने अपनी मां के नाम का पासपोर्ट सन्तराम के पकड़े जाने के बाद बनवाया था।

जब सन्तराम को पता चला कि राधा सब धन लेकर हिन्दुस्तान से बाहर भाग गई है तो वह समझ गया कि जुग्गीमल की फर्मवालों से सुलह किए बिना उसका उद्धार नहीं। वह सुमेर की यह शर्त मान गया कि उसको ज़मानत पर छुड़ा लिया जाए। वह अपने निजी व्यापार की सब बात बता दे तथा जितना भी धन वसूल होना है, वह करा दे, तो

उसके खिलाफ मुकदमा भी वापस ले लिया जाएगा।

सन्तराम के मान जाने पर उसकी ज़मानत का प्रबन्ध हो गया। चार बीस-त्रीस लाख रुपये के जमानती ढूंढ़े गए और सन्तराम बाहर आ गया।

बाहर आकर उसने रुपया वसूली में प्रत्येक प्रकार की सहायता देनी आरम्भ कर दी। इसपर भी एक करोड़ रुपये में से केवल तीस लाख ही वसूल हो पाया। मुकदमा वापस होने पर सुमेर तथा सन्तराम को सिंगापुर में एक पृथक् फर्म खोलने में सहायता दी गई। सुमेर चाहता था कि उसे फर्म में ही रहने दिया जाए। परन्तु इस विषय में यही उचित समझा गया कि उनको पृथक् व्यापार करने को कहा जाए।

सुमेर के श्वसुर ने भी यही सम्मति दी कि सुमेर को अपना पृथक् व्यापार करना चाहिए।

इस समय यूरोप का प्रथम महायुद्ध आरम्भ हो गया था। जुग्गीमल को फर्म की लन्दन शाखा बन्द करनी पड़ी और विष्णुसहाय जो लन्दन गया हुआ था, काम समेटकर हिन्दुस्तान वापस आ गया। वह अपने साथ फर्म के अधीन कुछ उद्योगों के चलाने की योजना लेकर आया।

जहां फर्म को एक व्यापारिक संस्था से बदलकर एक औद्योगिक संस्था बनाने की योजना चलने लगी वहां जुग्गीमल बड़ी मां के एक कुआं लगाने की योजना पर विचार-विनिमय करने लगा।

इस अभिप्राय से बनाई समिति की बैठक कलकत्ता में होने लगी। सबसे पूर्व जुग्गीमल ने स्वामी सत्यानन्दजी की योजना बताई। स्वामीजी की योजना यह थी :

चार ऐसे स्थान बनाने चाहिए जहां चारों स्वभावों के लोग अपने-अपने स्वभावानुसार अपनी जीविकोपार्जन करने योग्य हो सकें और जीविकोपार्जन करते हुए शुद्ध पवित्र यज्ञ रूप जीवन चला सकें।

विष्णुसहाय का कहना था कि जीविकोपार्जन की योग्यता तो अंग्रेज़ी सरकार की नौकरी के योग्य बनाने से पैदा की जा सकेगी। आज देश में चारों वर्णों के लिए शिक्षाकेन्द्र खोलने से सरकारी कर्मचारी निर्माण करने होंगे। अन्य कोई उपाय नहीं है।

इसने जुग्गीमल के उत्साह में ठण्डा जल डाल दिया। वह सरकारी क्लर्क बनाना कोई बहुत बड़ा काम नहीं समझता था। वह अपना मुका-

बला एक सरकारी क्लर्क से करता था और वह किसी प्रकार भी गुरु अनुभव नहीं करता था।

उसकी फर्म में चालीस के लगभग बंगाली बाबू काम करते थे। वे सब बेचारे खींचतान कर ही निर्वाह कर पाते थे। यह नहीं कि इस फर्म में वेतन कम मिलता था। इसमें मुकाबले की फर्मों से अधिक वेतन दिया जाता था परन्तु इन क्लर्कों की अवस्था तो वैसी ही थी।

विष्णुसहाय इङ्गलैण्ड के 'बर्नार्ड शॉ' और 'सिडनी वैब' जैसे फेबियन ढग के समाजवादी से प्रभावित होकर भारत लौटा था। अतः वह धर्मादा समिति में बैठा बता रहा था, "भापा! दुनिया-भर में राजा-महाराजा नि.शेष किए जा रहे हैं। यह युद्ध निश्चय रूप से रहे-सहे राजा-महाराजाओं को समाप्त कर देगा। परिणाम यह होगा कि प्रजातन्त्रात्मक राज्य चलेंगे। समय आनेवाला है जब एक भंगी-चमार की राय का भी वही मूल्य होगा जो एक धनी-मानी की राय का होता है। एक विश्वविद्यालय के प्रोफेसर और एक विश्वविद्यालय के चपरासी की राय का समान मूल्य होगा। ऐसी स्थिति में ये अशिक्षित और भाग्यहीन लोग राज्य अपने हाथ में लेकर समाज की सब योजनाओं को हाथ में ले लेंगे।

"इसका प्रथम प्रभाव यह होगा कि जुग्गीमल एण्ड सन्स की फर्म नहीं रह सकेगी। यह सरकार की मलकियत बन जाएगी और सेठ जुग्गीमल यदि इस फर्म मे काम करना चाहेंगे तो पाच सौ रुपया महीना के नौकर के रूप में कार्य कर सकेंगे।

"इसपर भी यदि सेठजी अपनी कोई योजना चलाना चाहेंगे तो उसे पार्लियामेंट के अधीन ही रहकर चला सकेंगे। पार्लियामेंट जन-साधारण द्वारा बनाई हुई होगी। पार्लियामेंट से मतभेद होने पर पार्लियामेंट की बात मानी जाएगी, सेठ की नहीं।

"यदि कहीं सेठजी ने पार्लियामेंट को कुछ समझाकर अपनी बात मनवा ली तो जन-साधारण उस पार्लियामेंट को ही भंग कर देगा।

"भापा! जमाना आ रहा है कि यह धर्म-कर्म भी इस प्रकार नहीं चलेंगे जैसे आप तथा बडी मा चलाना चाहते हैं। इनको भी सरकार ही चलाएगी और उसी ढग पर चलाएगी जिस ढग से जन-साधारण चाहेंगे।"

"तब तो यह धर्म कार्य रहेगा नहीं ?"

"धर्म का नाम ही मिट जाएगा। लोक-कल्याण का नाम चलेगा। साथ ही लोक-कल्याण और धर्म में अन्तर रहेगा। लोक-कल्याण का अभिप्राय रोटी, कपड़ा, मकान, भोग के लिए स्त्री और अन्य इन्द्रियों को आनन्दित करने के लिए संगीत, थियेटर, बायस्कोप तथा अन्य खेल-तमाशे होंगे और धर्म होगा पूजा-पाठ इत्यादि।"

"और भगवान ?"

"भगवान की मूर्तियां मन्दिरों से उठवा-उठवाकर अजायबघरों में रखी जाएंगी और लोग सरस्वती की उपमा संसार की एक्ट्रेसेज़ से दिया करेंगे।"

"तो मन्दिर सब समाप्त हो जाएंगे ?"

"हां, इन मन्दिरों के स्थान पर कला मन्दिर बनेंगे। उनमें गौहर जान और महबूब जान के चित्र लगाए जाएंगे।"

"और सत्य, न्याय, अस्तेय, अक्रोध इत्यादि का क्या होगा ?"

"इन सबके स्थान पर एक शब्द का प्रयोग और उसपर आचरण होगा। वह शब्द होगा 'नीति'। नीति वह होगी जिससे सफलता प्राप्त हो। जिस किसी ढंग से भी सफलता मिले वह नीति कहाएगी। नीतिकुशल लोग ही मान-प्रतिष्ठा पाएंगे।"

"परन्तु विष्णु, नीति का स्रोत धर्म है।"

"नहीं भापा, वह आज से आठ-नौ सौ साल पहले की बात है। तब लोग कहते थे—

"आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धर्मोहि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीना पशुभिः समानाः॥

"परन्तु आज हवा यह चल रही है कि—

"मनुष्य पशु में है अन्तर नहीं कोई।
भोजन वसन भोग में जीवन होई॥"

"तो यह यतीमखाने, अस्पताल और स्कूलों का क्या होगा ?"

"यह सरकार चलाएगी। बड़े-बड़े डाक्टर, हकीम, वैद्य उसमें नौकर रखे जाएंगे। वे अपना पेट पालने के लिए सरकारी आदेश मानेंगे।"

"तब तो सन्तराम और सुमेरचन्द की मांग ठीक ही प्रतीत होती

को न्यूयार्क ले चला जाए। वहां लोगों की भाग-दौड़ देख वे कुछ समझ सकें तो समझ सकें। भला खाटू में क्या रखा है ?"

"ठीक है। तो मैं उनको लिख देता हूं।"

जुग्गीमल ने मांजी को एक पत्र लिख दिया। पत्र में लिखा, "मांजी! आपके आदेशानुसार कुंआ लगाने की योजना पर विचार हो रहा है। सबकी राय है कि हम लोग जल मथ रहे हैं। कारण यह है कि जिस व्यक्ति के मस्तिष्क की यह उपज है वह तो यहां है नहीं। अतः धर्मादा समिति की यह सम्मति है कि मांजी को कलकत्ता ले आया जाए और उनके सामने तथा उनकी सम्मति से कुएं की योजना बनाई जाए।

"मां, बताओ तुमको ले चलने के लिए कोई कब आए? मांजी, यूरोप में युद्ध आरम्भ हो जाने से हमारी फर्म में भी कई प्रकार के परिवर्तन करने आवश्यक हो गए हैं। अतः फर्म का कोई भी सदस्य काम को छोड़कर नहीं जा सकता।

"मां, जुग्गी तुमको इतनी लम्बी यात्रा का कष्ट कभी भी नहीं देता, यदि यह नितान्त आवश्यक न हो जाता कि धर्मादा समिति की स्थापना करनेवाले की रुचि और इच्छा से ही सब कुछ निर्णय करना चाहिए।

"मां, इस धर्मकार्य में कुछ कष्ट तो उठाना ही चाहिए। इसी कष्ट से धर्मकार्य की महिमा बढ़ती है।

"अतः मां, बताओ कब और किसको भेजूं ?"

रामेश्वरी धर्मकार्य के नाम पर आह्वान को अस्वीकार न कर सकी। उसने लिख दिया, "जुग्गी, शीघ्रता से किसीको यहां भेज दो जो मुझे ले जाए। साथ में किसी स्त्री को भी भेजना। पुरुष को यात्रा में भाग-दौड़ के लिए और स्त्री को मेरी देख-रेख के लिए। कदाचित् तुम्हारे पिताजी भी आना चाहेंगे।"

रामेश्वरी ने जुग्गी का पत्र अपने पति को सुनाया था और फिर उस पत्र का भेजा जानेवाला उत्तर भी सुना दिया। इसपर बनवारीलाल को विस्मय हुआ। उसने कहा, "मुझको किसलिए साथ लिए जा रही हो?"

रामेश्वरी ने केवल यह बताया, "मेरा चित्त करता है कि आपको

साथ रखू। कहीं फिर वह विष्णुप्रयाग और जोशी मठ के बीचवाली बात न हो जाए।"

"पर तुम तो कहती हो कि तुम्हारा अब किसीमें मोह नहीं रहा।"

"पर आपकी बात दूसरी है।"

"क्या दूसरी है ?"

"मैं बता नहीं सकती। अनुभव करती हूं, पर कह नहीं सकती।"

"मैं समझता हूं कि मैं न जाऊं। मेरी रुचि तुम्हारे धर्मादा में नहीं। न ही मुझे कलकत्ता देखने में रुचि है।"

"पर देखिए सेठजी महाराज, आप मुझको कलकत्ता नहीं ले जा रहे। मैं आपको ले जा रही हूं।"

"पर क्यों ? मैं पूछ रहा हूं।"

"एक कारण तो यह है कि विवाह के समय पण्डित ने कहा था कि हम दोनों साथ-साथ धर्म-कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करेंगे। इस कारण आपको साथ लिए जा रही हूं। जब उस वर्ष यज्ञ हुआ था तो आप मेरे साथ ही बैठे थे। अब भी साथ ही रहेंगे।

"दूसरा कारण यह है कि मेरा मन कहता है कि अब आपसे पृथक् न होऊं।"

सेठ बनवारीलाल इस मोह को समझ नहीं सका। वास्तव में उसके मन में अपनी पत्नी से विशेष लगाव कभी नहीं रहा था। इस-पर भी वह सदा सेठानीजी से अकेला जाता एक दिशा में जा रहा था। अब भी वह मान गया।

पत्र गया तो वे अपनी यात्रा का प्रबन्ध करने लगे। अब रेल की सड़क डिगाना तक बन गई थी और अनुपात में यात्रा का कष्ट कम रह गया था। इसपर भी रेल की छत्तीस से चालीस घंटे की यात्रा थी।

मां का पत्र आया तो जुग्गीमल किशोरी को साथ ले स्वयं उनको लिवाने के लिए आया। और उनको अपने साथ लेकर वापस कलकत्ता जा पहुंचे।

बड़ी मां के कलकत्ता आने पर परिवार के सदस्य कलकत्ता में मांजी के दर्शन के लिए आने लगे।

दो-चार दिन तक माजी को कलकत्ता दिखाने का कार्यक्रम चलता रहा और फिर धर्मादा समिति की बैठक हुई।

जुग्गीमल ने स्वामी सत्यानन्दजी महाराज की योजना बताई तो विष्णुसहाय ने योजना में अपना संशोधन सुना दिया। उसने कहा, "मांजी, आज कलियुग में मुख्य धर्म है लोगों को जीविकोपार्जन के योग्य बनाना। जीविकोपार्जन के साधन सरकार के अधीन होते जाते हैं। शीघ्र ही देश के सब काम सरकारी होनेवाले हैं। अतः सरकारी नौकर निर्माण करने को ही धर्मकार्य कहेंगे। सरकारी नौकर तो सरकार की इच्छानुसार बनने चाहिए। अतः जो सरकार कहे वह करना ही धर्मकार्य हो गया है।"

रामेश्वरी बात समझ रही थी। उसने कह दिया, "देखो विष्णु, सरकार सब कार्य अपने अधीन करती है अथवा कुछ काम अपने अधीन करती है, इससे मेरा कोई मतलब नहीं। मेरा मतलब तो यह है कि लोग जिस किसीके भी नौकर हों वे मन, वचन, कर्म से शुद्ध, पवित्र, सत्यवादी और ईमानदार हों। यह हमको करना है। और यही हम कर सकेंगे।"

"पर मांजी, यदि आप शुद्ध, पवित्र, सत्यवक्ता, अस्तेय कर्म के करनेवाले लोग निर्माण करेंगी तो वे सब इस संसार की कशमकश में असफल रहेंगे। और फिर आपके स्कूल-कालेज असफल रहेंगे।"

"असफल का क्या मतलब?"

"मतलब यही कि वहां कोई पढ़ने के लिए नहीं जाएगा। स्कूल-कालेज खाली रह जाएंगे।"

"तो यह आवश्यक है कि सरकारी नौकरी करनेवालों को झूठ बोलना, चोरी करना, गंदे रहना और बेईमान बनना सिखाया जाए?"

"मांजी, बात तो कुछ ऐसी ही है। केवल उनको झूठे, फरेबी इत्यादि नहीं कहा जाएगा, उनको नीतिवान कहा जाएगा।"

"तो नीति के यह अर्थ होंगे?"

"यह इस प्रकार कहा जाएगा कि नीति वह है जिससे कार्य में सफलता मिले। और नौकरी में सफलता मेहनत करने से नहीं होगी। मेहनत करना प्रकट करने मात्र से सफलता प्राप्त होगी। नीति में यह आवश्यक है कि मनुष्य परिश्रम करता हुआ दिखाई दे।"

रामेश्वरी हंस पड़ी और बोली, "विष्णु, तुम अभी तक धर्म का अर्थ नहीं समझ सके। बस इसीके लिए मुझको डेढ़ हजार मील की

यात्रा कराई है ?

"देखो, मैं बताती हूं। धर्म उसको कहते हैं जिसमें हम वह कुछ करें जो हम चाहते हैं कि हमारे साथ किया जाए। भला तुम बताओ इस कार्यालय में कितने कर्मचारी हैं ?"

"पचास के लगभग हैं।"

"और तुम यह चाहते हो कि वे तुमसे उस नीति का प्रयोग करें जिसका तुमने अभी वर्णन किया है।"

"ऐसा कौन चाहेगा ?"

"तो यह करो कि वैसे कर्मचारी निर्माण करो जैसे तुमको चाहिए। जिस नीतिवाले तुमको चाहिए, उस नीतिवाले कर्मचारी निर्माण करनेवाले विद्यालय का प्रबन्ध करो।"

"पर मांजी, वैसे स्कूल-कालेज चलेंगे नहीं।"

"तो न चलें। धर्म स्कूल-कालेज चलाना नहीं है। देखो विष्णु, धर्म केवल कुआं खोदना भी नहीं वरन् धर्म तब होगा जब कुएं में से जल निकलेगा और वह स्वच्छ, मीठा तथा रोगरहित होगा।"

"पर माजी, मैं तो कह रहा हूं कि स्वच्छ जल पीने के लिए कोई आएगा ही नहीं।"

"तो न आए। पुण्य तो ऐसा कुआं खोदने में है, जिसमें से स्वच्छ तथा स्वास्थ्यप्रद जल निकले। पीने के लिए कोई आता है अथवा नहीं यह कुआं खोदनेवाले के विचार का विषय नहीं है। यह प्यासों का काम है। जो आने का कष्ट करेंगे और फिर जल निकालने का प्रयास करेंगे वे लाभ उठाएंगे।"

"तो फिर आप क्या चाहती हैं ?" विष्णु ने निरुत्तर होते हुए पूछा।

"देखो विष्णु, मैंने कहा था कि यज्ञ हुआ, ब्रह्मभोज हुआ और रुपये बांटे गए। उसका प्रभाव कुछ दिन तक लोगों के चित्त में रहा और फिर धीरे-धीरे लोग भूल गए। भोजन और रुपये दिए गए तो वे उससे भी कम काल में विस्मरण हो गए। मैं यह चाहती हूं कि कुछ ऐसा किया जाए जिससे यह प्रभावोत्पादक क्रियायें निरन्तर होती रहें और प्रभाव उत्पन्न होता रहे। साथ ही मैंने उस दिन के कार्य को प्याऊ लगाना कहा था। वह इसलिए कि जैसे प्याऊ पर से जल पीने-

वालों को पुरुषार्थ किए बिना जल मिला था। यह न हो। ऐसा कुआं निकालो कि जिज्ञासुओं को पुरुषार्थ से जल प्राप्त हो।

"यदि पुरुषार्थ करनेवाले नहीं आएंगे तो दोष पुरुषार्थ न करनेवालों का होगा। कुआं लगानेवाले का पुण्य इससे पृथक् बात है।"

"तो मांजी!" जुग्गी ने मां को अपनी बात की योग्यता से वकालत करते देख कहा, "कुआं अथवा कई कुएं लगाए जाएं। परन्तु कोई ऐसा साधन भी होना चाहिए जिससे जिज्ञासुओं को पता चलता रहे कि अमृत रूपी जल का स्रोत अमुक स्थान पर है। ऐसा न हो कि किसी जिज्ञासु की प्यास केवल मात्र अज्ञान के कारण बनी रह जाए। उसे पता होना चाहिए कि स्वच्छ जल के क्या अर्थ हैं और वह कहां पर प्राप्य है।"

"ठीक है, यह तो होना ही चाहिए। कुएं खोदने का तो पुण्यकार्य होगा ही, साथ ही इच्छा रखनेवालों को बताया भी जाता रहे कि इस प्रकार के जल का कुआं कहां है?"

इसके बाद योजना चलने लगी।

तृतीय परिच्छेद

रामेश्वरी ग्रभी कलकत्ता में ही थी कि सुमेरचन्द सपत्नीक यहा आ पहुंचा। इस बार वह एक होटल मे ठहरा और ग्रपने बाबा जुगीमल से मिलने के लिए ग्राया।

जुगीमल सुमेर को ग्राया देख उसका कुशल-समाचार पूछने लगा। सुमेर ने बताया, "माताजी का पता लगा है कि वे दक्षिण ग्रमेरिका के रायो-डि-जेनिरिओ नगर मे हैं। वहा वे एक मद्रासी ब्राह्मण की साझीदारी में टिम्बर का व्यापार कर रही हैं। किसीसे पिताजी का पता पाकर उन्होंने उनको बुलाया तो वे सिंगापुर का काम-काज समेट वहा जाने के लिए तैयार हो गए। मैंने और पिताजी ने दुकान बन्द कर सम्पत्ति का बटवारा कर लिया है। वे रायो-डि-जेनिरिओ चले गए हैं। मैंने वहां जाना उचित नही समझा, न ही सिंगापुर मे रहना ठीक प्रतीत हुग्रा। ग्रत. ग्रापसे राय करने के लिए यहा ग्राया हू।"

"सुना है कि तुम्हारे एक लड़का हुग्रा था?"

"जी, वह शकुन्तला के साथ होटल मे है?"

"तुम रहने के लिए यहां ग्रा सकते थे।"

"वह तो दादीजी निमन्त्रण देंगी तो ग्राऊगा। सायंकाल शकुन्तला को लेकर यहा ग्राऊगा।"

"ठीक है, कारोबार की बात सायकाल ही करेंगे। ग्राजकल फर्म के चीफ विष्णुसहाय हैं। मैं तो फर्म के काम से पृथक् हो गया हू। पत्तीदार तो रहूंगा परन्तु फर्म का कर्मचारी नही रहा।"

"ऐसा क्यों?"

"मैं माताजी के धर्मादा से चलनेवाले काम का व्यवस्थापक बन गया हूं।"

"क्या काम चल रहा है?"

"बनारस में दर्शनशास्त्र का एक विद्यालय खोलने का विचार है। यह कार्य तो इसी वर्ष से चलनेवाला है। वहां भूमि खरीद इमारत बन रही है। दो-तीन दिन में मैं वहां जानेवाला हूं। दर्शनशास्त्र के पढ़े विद्यार्थियों को इस भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न नगरों में लक्ष्मीनारायण मन्दिर के पुजारी बनाएंगे। वहां वे कथा और धर्मोपदेश किया करेंगे।

"जोधपुर में एक विद्यालय खोलनेवाले हैं। उस विद्यालय में जीविकोपार्जन की और साथ ही धर्म की शिक्षा देनेवाले हैं।"

"और भापा, यह सब योजना आप हीं बना रहे हैं?"

"नहीं सुमेर, मुझमें इतनी योग्यता कहां। विचार बड़ी मांजी का है, योजना का सैद्धान्तिक रूप स्वामी सत्यानन्दजी का दिया हुआ है। उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणत करने के लिए तीन व्यक्ति हैं। उनकी राय से कार्य हो रहा है। हमारा विचार है कि तीन वर्ष में यह योजना चल निकलेगी।"

"और आप इसमें क्या होंगे?"

"बताया तो है कि व्यवस्था रखनेवाला, मैनेजर। रुपये-पैसे का हिसाब मैं रखूंगा। योजना की मंजूरी धर्मादा समिति देगी और मैं प्रबन्ध करूंगा।"

"भापा, यह कार्य व्यर्थ नहीं है क्या?"

"देखो सुमेर, मुझे फर्म से एक सहस्र रुपया वेतन मिलता था। फर्म में से लाभ का भाग सवा लाख-डेढ़ लाख तो मिलता ही है। उस लाभ के मिलने पर एक सहस्र छोड़कर यह प्रबन्ध करने के लिए जा रहा हूं।"

"पर मैं तो कह रहा हूं कि यह दर्शन विद्यालय, मन्दिर और फिर जोधपुर का विद्यालय सब व्यर्थ हैं।"

"तो सार्थक कार्य क्या है?"

"यूरोप में युद्ध हो रहा है। युद्ध के लिए सामग्री बन रही है। इस समय अवसर है कि हाथ रंगे जाएं।"

"इसके लिए विष्णु प्रबन्ध कर रहा है। तुम उससे मिलकर अपनी

योजना बताओ।"

"विष्णु पर मुझे विश्वास नहीं।"

"क्यों, क्या दोष है उसमें?"

"उसमें कल्पनाशक्ति नहीं है।"

"तुममें तो है न?"

"परन्तु मुझमें व्यावहारिक बुद्धि नहीं है। ये दोनों गुण आपमें हैं।"

"तुम उससे बात करो। फिर मुझे बताना कि कहां गाड़ी अटकी है। मैं उसमें विचार कर जैसा समझ में आएगा, बताऊंगा।"

इसके उपरान्त इधर-उधर की बातें होती रहीं। सुमेर सायंकाल दादी से मिलने के लिए आने की बात कहकर चल दिया।

इस समय तीन सलाहकार आ गए, जिनसे धर्मकार्य चलनेवाला था। ये तीनों विद्वान आदमी थे। एक थे दर्शनाचार्य पण्डित कीर्तिमोहन। दूसरा एक विलायत से पढ़कर आया वैज्ञानिक था। और तीसरा एक खेतीबाड़ी का विशेषज्ञ था।

ये तीनों महानुभाव अभी कार्य की रूपरेखा ही बना रहे थे। जब ये आया करते थे तो रामेश्वरी देवी इनकी बातें सुनकर उनपर अपनी सम्मति बताने के लिए आया करती थी।

रामेश्वरी देवी आई तो दर्शनाचार्य कीर्तिमोहन ने बताया, "मांजी, बनारस में दर्शनशास्त्रों से सम्बन्धित शास्त्रों का पुस्तकालय होना चाहिए।"

"ठीक है। ग्रन्थों की सूची देते जाओ। धर्मादा समिति में उसकी स्वीकृति होने के बाद पुस्तकें मंगा दी जाएंगी। क्यों जुग्गी, इमारत में पुस्तकालय के लिए स्थान होगा या नहीं?"

"यह तो, माजी, है। इमारत का मानचित्र ऐसा बना है कि एक भवन होगा जिसमें सार्वजनिक व्याख्यान इत्यादि हुआ करेंगे। संगीत और साहित्यिक सभाएं हुआ करेंगी। इस भवन के ऊपर बरामदे में पुस्तकालय होगा। पुस्तकालय के साथ कई कमरे होंगे जिनमें बैठकर शास्त्राध्ययन किया जा सकेगा।

"नीचे की मंज़िल पर एक कक्ष में संस्कृत, अंग्रेज़ी, जर्मन, फ्रेंच आदि भाषाओं के पढ़ाने का प्रबन्ध होगा। पढ़नेवाले कथा, कीर्तन,

व्याख्यान इत्यादि से अपनी पढ़ाई को दूसरों तक पहुंचाने का अभ्यास करेंगे। इसी विद्यालय में सरस्वतीजी का मन्दिर होगा।"

"यह मानचित्र वहां की नगर पालिका द्वारा स्वीकार कर लिया गया है अथवा नहीं ?"

"मांजी, अब तो भवन बनकर दो मास में पूर्ण भी होनेवाला है।"

इस बात से पण्डित कीर्तिमोहन सन्तुष्ट थे। इसपर रामेश्वरी ने दूसरे विद्वानों की ओर देखा। उनमें से एक मिस्टर सतीशचन्द्र घोष, एम०एस-सी०, डी०एस-सी० (कैंटब) थे। वे कहने लगे, "मैं अभी तक यह नहीं समझ पा रहा हूं कि आप विद्यार्थियों को पांच वर्ष तक भाषाएं पढ़ाएंगे, उससे लाभ क्या होगा ?

"इन पांच वर्षों में एक भाषा भी भली भांति आने की नहीं। और सबसे आवश्यक बात विज्ञान पढ़ने के लिए गणित की है। गणित के बिना विज्ञान पढ़ाया नहीं जा सकता।"

"देखिए घोष साहब, आपने यह बात पिछली बैठक में की थी। आपकी पूर्ण बात जुग्गी ने स्वामीजी को बताई है। उनका कहना है कि मुख्य भाषा संस्कृत है। उसे पढ़ने में पांच नहीं दस वर्ष लगेंगे। पहले पांच वर्ष तो केवल संस्कृत और फिर पिछले पांच वर्ष में संस्कृत के साथ अंग्रेज़ी, जर्मन अथवा फ्रेंच, जिसको विद्यार्थी पढ़ना चाहे, की पढ़ाई होगी। इन दस वर्षों में ही वे दर्शनशास्त्र पढ़ेंगे। इसके उपरान्त एक वर्ष आरम्भिक विज्ञान और फिर उच्च विज्ञान की शिक्षा होगी। इसके उपरान्त अनुसन्धान-कार्य। इसके लिए आप योजना बनाइए।"

"मांजी," मिस्टर घोष का कहना था, "यह बात चल नहीं सकेगी।"

"करके तो देखिए।"

"बुद्धि नहीं मानती। और जो बात बुद्धि नहीं मानती उसके लिए योजना नहीं बन सकती।"

"तो आप वह बात बताइए जो आपकी बुद्धि को ठीक जान पड़े।"

"मैंने तो यह योजना बनाई है। कलकत्ता में एक टैक्नीकल कालेज खोल दिया जाए और उसमें एफ०एस-सी० पास को प्रवेश मिले। इतना आप स्वीकार करें तो मैं आगे की बात बता सकता हूं।"

"परन्तु", जुग्गीमल ने कह दिया, "एफ० एस-सी० में तो संस्कृत पढ़ाई नहीं जाती और दर्शनशास्त्र का ज्ञान उन विद्यार्थियों को नहीं होगा।"

"मैंने बहुत कुछ विचार किया है और इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि टैक्नीकल शिक्षा के लिए संस्कृत और दर्शनशास्त्र की आवश्यकता नहीं।"

"परन्तु यह बात तो बहुत विचार-विमर्श के उपरान्त हम निश्चय कर चुके हैं। हमारा यह कहना है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। इस शिक्षा प्रणाली से तो एम० ए० पास लड़के भी किसी भाषा का ठीक ज्ञान नहीं रखते। हमारे विद्वानों का मत है कि भाषा का ठीक ज्ञान हुए बिना विज्ञान की शिक्षा नहीं दी जा सकती। साथ ही संस्कृत संसार की भाषाओं की मां होने से पहले इसे पढ़ना चाहिए और फिर अन्य भाषाएं सुगमता से सीखी जा सकती हैं।"

"मैं आपकी इस कमेटी में काम नहीं कर सकूंगा। आप कहीं सफल हो भी गए तो आपके पढ़े-लिखे विद्यार्थियों का जीविकोपार्जन हो नहीं सकेगा।"

इसपर रामेश्वरी ने कह दिया, "हमें बहुत खेद है कि हमने आपको इतने दिन कष्ट दिया और हम आपकी योजना को स्वीकार नहीं कर सके। क्षमा करें, आपको हम अपनी योजना की श्रेष्ठता समझा नहीं सके।"

तीसरे महानुभाव खेती-बाड़ी के विद्वान थे। नाम था निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य। वे पूछने लगे, "और आप मेरे विषय में क्या करना चाहते हैं?"

उत्तर जुग्गीमल ने दिया। उसने कहा, "जहां तक खेती में उन्नति का प्रश्न है, यह एक बहुत ही विकट समस्या है। साथ ही इसका सम्बन्ध भूमि से है जिसपर हमारा अधिकार नहीं। इसपर भी हम एक बात करना चाहते हैं कि देश में दो-तीन स्थानों पर बीज के लिए बड़े-बड़े खेत स्थापित करें। यहां बढ़िया प्रकार के बीज तैयार कर किसानों को उचित दाम पर दें। इसके लिए हम आपकी पूर्णकालिक सेवाएं लेना चाहते हैं। यह हमारी योजना का प्रथम चरण है।

"इसके साथ ही हम बड़े-बड़े फार्म और फिर उनके साथ फार्म

की पैदावार को मार्केट में ले जाकर बेचने योग्य बनाने के लिए कार-खाने लगाना चाहते हैं।"

निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य सतीशचन्द्र घोष से कुछ अधिक कल्पना-शक्ति रखता था। योजना सुनकर तो वह फड़क उठा और बोला, "आपकी योजना तो कार्यान्वित होने योग्य है। मैं इस दिशा में आपको सहायता भी दे सकता हूं। परन्तु एक बात है।"

"बताइए, क्या बात है ?"

"इस समय मैं तेईस-चौबीस वर्ष का हूं। मुझे बाड़ीसाल एग्रीकलचरल कालेज में प्राध्यापकत्व प्राप्त हो रहा है। वहां मेरा वेतन-मान २५०-५५० और फिर ७५०-१५०० तक है। मैं विवाह भी कर रहा हूं।

"आपके काम में मेहनत बहुत करनी पड़ेगी। वहां तो शाही काम है। सप्ताह में दस सबक पढ़ाने होंगे। और पांच घण्टे फार्मिंग करना होगा। इस प्रकार सप्ताह में पन्द्रह घण्टे से अधिक काम नहीं करना पड़ेगा। आप बताइए कि मेरे भविष्य के बारे में क्या गारंटी देते हैं।"

रामेश्वरी तो इस लोभी जीव की बात सुनकर टुकर-टुकर उसका मुख देखती रह गई। जुग्गीमल ने कह दिया, "देखिए प्रोफेसर साहब, जहां तक मेहनत और आराम का प्रश्न है, हमारा मत है कि हम अपनी शक्ति के अनुसार कार्य करते हैं। हमारे लिए दस और पन्द्रह घण्टे काम का प्रश्न नहीं होता। हमारे सामने कार्य होता है और उसे हमें एक काल के भीतर समाप्त कर उसके परिणाम निकालने होते हैं।

"सरकारी कामों में और निजी कामों में अन्तर तो सदा बना ही रहता है। हमारे लिए काम को परिणामों तक पहुंचाना अत्यावश्यक है और सरकार के यहां नौकरी के वर्ष, महीने, दिन और घण्टे गुज़ारने होते हैं। अपने यहां काम में रुचि होती है। सरकारी काम में वेतन में रुचि रहती है।

"यह आप देख लीजिए। यह हमारा एक धर्मार्थ ट्रस्ट है। इसमें तो वे लोग ही काम कर सकते हैं जो इसको धर्म का काम समझकर करें। जहां तक वेतन और उन्नति तथा जीविका के स्थायित्व का प्रश्न है, उसका निश्चय कर दिया जाएगा।

"यह धर्मार्थ ट्रस्ट जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म की ओर से है। आपका

मैं उस व्यावसायिक फर्म के साथ अनुबन्ध-पत्र लिखवा दूंगा और फिर उसकी ओर से धर्मार्थ समिति के अधीन डैपुटेशन पर ले आएंगे। इससे आपके आर्थिक हित सुरक्षित हो जाएंगे।

"परन्तु कार्य तो धर्म का और अपना समझकर किया जाएगा। यह आप देख लीजिए। यह तो दोनों स्थानों पर होता है, मेरा अभिप्राय है सरकारी नौकरी में और फर्म की नौकरी में भी, अधिकारी लोगों की आशाएं पूर्ण करनी पड़ती हैं। यदि आप अधिकारियों को प्रसन्न नहीं कर सकते तो नौकरी पर रह नहीं सकते। और यह तो मैंने बता ही दिया है कि सरकार के काम का मूल्यांकन उन घण्टों में लिया जाता है जिनमें आप काम करते हैं। प्राइवेट फर्म में काम का मूल्यांकन उन कार्यों के परिणामों में लिया जाता है जो आपको करने के लिए मिलते हैं।"

इस स्पष्टीकरण से निर्मलचन्द्र मुख लम्बा कर गम्भीर विचार में निमग्न हो गया। रामेश्वरी यद्यपि कुछ कह नहीं रही थी परन्तु उसके मुख से स्पष्ट था कि वह इन दोनों विद्वानों से असन्तुष्ट थी।

निर्मलचन्द्र को चुप देख, सतीश घोष जो निर्मलचन्द्र की स्थिति को समझ रहा था, कहने लगा, "देखिए सेठ साहब, आपकी यह योजना चलेगी नहीं। आपके पास रुपया कहीं से आ गया है। इसका अर्थ यह नहीं कि आप ज्ञान-विज्ञान के ज्ञाता हो गए। आप यदि हमारी सेवाएं लेना चाहते हैं तो आपको हमारी योजना पर चलना होगा। अन्यथा हम आपसे छुट्टी चाहते हैं।"

अब रामेश्वरी से नहीं रहा गया। उसने कहा, "प्रोफेसर साहब, मैं आपका इस धर्मादा समिति की ओर से बहुत-बहुत धन्यवाद करती हूं। आप पिछली, कल की और आज की तीन बैठकों में आने का बिल भेज दीजिएगा। वह दे दिया जाएगा। इतनी कृपा बनाए रखिए कि फिर जब कभी आपकी मूल्यवान सम्मति की आवश्यकता पड़े तो आप आइएगा। और इसी प्रकार अपनी निर्भीक सम्मति से अनुगृहीत करिएगा।"

इसका अर्थ था कि वे जा सकते हैं। घोष समझ गया और उठते हुए भट्टाचार्य से बोला, "चलो निर्मल, यह योजना सफल नहीं हो सकती।"

निर्मलचन्द्र नहीं उठा। उसने घोष से बंगला में कहा, "मेरी आपत्ति और आपकी आपत्ति में अन्तर है। तुम इस योजना को सफल न होनेवाली समझते हो। मैं ऐसा नहीं मानता। यह सफल हो सकती है। मैं तो अपने विषय में विचार कर रहा था।"

"तो तुम इस जल को मथो।" इतना कह घोष बैठक से बाहर निकल गया। अब निर्मलचन्द्र ने सेठ जुग्गीमल से कहा, "मुझे योजना में कोई दोष प्रतीत नहीं होता। मुझे तो यह निर्णय करना है कि अपने जीवन में स्थिर होना है और वह कहां हो सकता हूं।"

"ठीक है। आखिर आप विलायत से पढ़कर आए हैं। बीस-तीस हज़ार पढ़ाई पर व्यय हुआ होगा। आपकी दुकानदारी को घाटा नहीं रहना चाहिए। आप अपना निर्णय कब तक बताएंगे।"

"एक सप्ताह में आपको लिखूंगा।"

२

भट्टाचार्य अभी जा ही रहा था कि विष्णुसहाय वहां आ पहुंचा। वास्तव में वह भी धर्मादा समिति का सदस्य था। उसने बैठते ही माताजी से क्षमा मांगी, "मैं समय पर नहीं आ सका। क्या हुआ है? बाहर घोष बाबू को मैंने नमस्कार किया तो उन्होंने उसका उत्तर नहीं दिया और मैं देख रहा हूं कि ये भी भागे जा रहे हैं।"

"हां, बैठो। अभी बताते हैं।"

भट्टाचार्य भी चला गया। जुग्गीमल ने वह पूर्ण वार्तालाप जो उन दोनों प्राध्यापकों से हुआ था, विष्णु को बता दिया। इसको सुन विष्णुसहाय ने गम्भीर होकर कहा, "भापा, तुम यह कार्य सरकार के मुकाबले में करने लगे हो। सरकार जितना धन इस काम में व्यय कर सकती है वह आप नहीं कर सकते। सरकार जितनी लापरवाही से धन का अपव्यय कर सकती है उस प्रकार आप नहीं कर सकेंगे। सरकार के सब कर्मचारी वेतनधारी ही होंगे। धनोपार्जन में न तो उनका सहयोग होता है और न उत्तरदायित्व ही। परिश्रम जनता करती है, सरकार टैक्स वसूल कर धन वितरण करती है। काम हो चाहे न हो, धन आता है और बांट दिया जाता है।

"इस कारण मेरा आपसे सदा यह कहना रहा है कि हम अपनी यह दुकान सरकार के मुकाबले में खोलकर नहीं चला सकते।"

रामेश्वरी ने पूछा, "तो तुम क्या कहते हो विष्णु ? तनिक व्याख्या से कहो। मैं आज इस सबका अन्तिम निर्णय करना चाहती हूं। मैं कलकत्ता में रहती हुई ऊब गई हूं। यहां से शीघ्र भाग जाने का प्रबन्ध करना है।"

विष्णु बोला, "मांजी, आप कुआं नहीं बनवा सकेंगी। कुआं खोदने का काम बहुत सीमा तक सरकार अपने हाथ में ले चुकी है और शेष भी ले रही है। यदि आपने भी कुआ खोदना आरम्भ कर दिया तो दो दुकानदारों में मुकाबला हो जाएगा और सरकार बड़ा दुकानदार होने से हमको मात कर देगी। हम उनका मुकाबला नहीं कर सकेंगे।"

"विष्णु, यह तो बताओ," रामेश्वरी ने पूछा, "क्या सरकार द्वारा निर्माण किया गया कुआ वैसा ही लाभकारी और कुशल होगा जैसा हमारी योजना से बननेवाला है ?"

"मांजी, आपके धर्मकार्य से क्या लाभ होगा, यह तो अभी भविष्य के गर्भ में है। परन्तु मैं आपको सरकारी कुए की बात बताता हू।

"सरकार ने स्कूल-कालेज खोले हैं। इनमें उद्देश्य सरकार के कर्मचारी निर्माण करना है। हिन्दुस्तान में बच्चों और युवकों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए भी तैयार नहीं किया जा रहा है। क्लर्क पैदा किए जा रहे हैं। मोक्षमार्ग के विषय में तो वे कुछ नहीं जानते हैं। काम के विषय मे पढ़ाने की आवश्यकता नहीं। वह तो इस शरीर का गुण है और पशुओं में बनता रहता है। शेष रह गई अर्थ और धर्म की बात। काम के लिए अर्थ चाहिए। उसके लिए दौड़ लग रही है और सरकारी कुए का जल अधिकाधिक अर्थ-पिपासा उत्पन्न कर रहा है।

"सरकारी क्षेत्रों मे यह समझा जा रहा है कि वेतन-प्राप्ति के उपायों का नाम धर्म है। जिस ढंग से अधिकाधिक वेतन अर्थात् अर्थ प्राप्त हो, वही धर्म माना जाता है।

"अतः सरकारी दुकान पर इस प्रकार का धर्म-अर्थ बिकता है। काम तो अपने-आप पैदा होता है। मोक्ष नाम के पक्षी को कोई जानता नहीं।

"आप उनके मुकाबले में अपनी दुकान खोल रही हैं। उस दुकान में मोक्ष सर्वोपरि है। फिर धर्म है और इसके अधीन अर्थ और काम हैं। इसलिए आपकी दुकान चल नहीं सकेगी।

"मांजी, आप प्याऊ ही लगाइए। अन्यथा अपना पूर्ण धर्मादा का धन कलकत्ता विश्वविद्यालय को दे दीजिए और पुण्य का लाभ करिए।"

सेठ जुग्गीमल विष्णु की युक्ति में बल देखता था। परन्तु वह उन साहसी दुकानदारों में था जो अंटी में एक भी पैसा लिए बिना घर से डेढ़ हज़ार मील की दूरी पर संसार-संघर्ष में कूदने को चल पड़ते हैं। वह उन राजस्थानियों की व्यावसायिक बिरादरी का सदस्य था जो कुली के काम से जीवन आरम्भ करते हैं। इस कारण विष्णु से सब विपरीत परिस्थिति का उल्लेख सुनकर भी वह साहसहीन नहीं हुआ।

परन्तु यह सब योजना रामेश्वरी देवी की थी। इस कारण वह मां का मुख देखने लगा। रामेश्वरी दूसरे ढंग से विचार करने लगी थी। उसने अपने विचारों को स्पष्ट कर देने के लिए चिन्तन की आवश्यकता समझी।

उसने कहा, "मैं समझती हूं कि विष्णु के कथन में बहुत वज़न है। इस कारण मुझे ज़रा इस बात पर विचार कर लेने दो। मैं समझती हूं कि धर्मादा समिति की बैठक अब एक सप्ताह के उपरान्त बुलाई जाए। जुग्गी, तुम कल बनारस चले जाओ और अगले मंगल के दिन तक लौट आना। तब तक हम पूर्ण योजना पर विचार कर लेंगे।"

"पर मांजी, वह जो भवन बन रहा है उसका क्या होगा ?"

"वह तो बनेगा। पण्डित कीर्तिमोहनजी को भी साथ लेते जाओ। और जो कुछ इनका वहां जाकर विचार बने वह भी आगामी मंगलवार को सुन लूंगी।"

रामेश्वरी ने विष्णु से कहा, "आगामी बुध के दिन मेरे जाने का प्रबन्ध कर दो।"

विष्णु गया तो रामेश्वरी भी उठकर अपने कमरे को चल पड़ी। जुग्गीमल ने पण्डित कीर्तिमोहन से कहा, "पण्डितजी, आप कल पंजाब मेल से चलने के लिए तैयार हो हावड़ा स्टेशन पर पहुंच जाएं। आपके लिए स्थान का प्रबन्ध कर लिया जाएगा।"

कीर्तिमोहन गया तो जुग्गी भी अपने कमरे में चला गया। मा विचारमग्न अपने पति के पास बैठी थी। बनवारीलाल ने उससे पूछा, "सेठानी, इस नरककुण्ड से कब निकलनेवाली हो?"

"जी, बहुत जल्दी। अगले बुधवार को हम यहां से चल देंगे। उस दिन के लिए रेल में सीटें रिज़र्व करवाने को विष्णु को कह आई हूं।"

"इतने दिन पहले कैसे रिज़र्व हो जाएगी?"

"बात यह है कि दिल्ली से डिगाना की गाडी पकडनी होगी और उसमें भी सीट रिज़र्व करानी होगी। यह यहा से तार देकर ही हो सकेगा। अत इतने दिन पहले प्रबन्ध करना पड़ा है।"

"तो ठीक है।" यह कहकर बनवारीलाल सन्तुष्ट बैठा था और रामेश्वरी अपनी पूर्ण योजना की विफलता पर चिन्तन कर रही थी कि इसी समय जुग्गीमल आ पहुचा।

जुग्गी को देख बनवारी ने कहा, "जुग्गी, तुम्हारी मा ने आगामी बुधवार को यहा से चलने का निश्चय कर लिया है।"

जुग्गी सुन आया था कि मगल के दिन धर्मादा समिति की आगामी बैठक होनेवाली है। उसकी समझ मे यह आया कि माजी अपने जीवन की इस अतिप्रिय योजना को भी छोडने का विचार बना बैठी हैं। इससे वह मा के मुख पर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगा।

रामेश्वरी ने अपने चिन्तन-क्षेत्र से बाहर आकर कहा, "देखो जुग्गी, यहा हम जल-मन्थन कर रहे हैं! जल भी हुगली का गदा। भला इसके मथने से अमृत कैसे निकल सकता है! देखो, तुम बनारस हो आओ। वहां का कार्य तो चलेगा। शेष हम खाटू मे जाकर विचार कर लेंगे।

"अभी मेरे मस्तिष्क मे बात स्पष्ट नहीं। जब तक तुम लौटोगे, मैं इस विषय मे तुमसे बात कर ही धर्मादा समिति से निर्णय कराने का यत्न करूंगी। मैंने मंगल का दिन इसलिए निश्चय किया है कि मोहिनी और सूर्य को भी उसमें बुला लेंगे।"

माजी की इस प्रकार की बात सुन जुग्गी पुन उत्साह से भर गया और बनारस जाने की तैयारी करने के लिए अपने कमरे की ओर चल पड़ा।

जुग्गीमल अपनी फर्म के कार्यालय के ऊपर के कमरे मे

रामेश्वरी और बनवारीलाल भी वहीं एक कमरे में रहते थे।

जुग्गीमल के पास कमरों के पांच सेट थे। यहां उसके परिवार के लोग आते-जाते थे। ये उनके ठहराने के लिए रखे हुए थे। एक में वह स्वयं अपनी पत्नी किशोरी के साथ रहता था। एक अन्य में इस समय रामेश्वरी और बनवारीलाल रह रहे थे। तीन सेट आजकल खाली थे।

जुग्गीमल को अपने कमरे में पहुंचते ही किशोरी ने बताया, "सुमेर सिंगापुर से अपनी पत्नी और बच्चों के साथ आया हुआ है।"

"कहां है वह ?"

"होटल फिरपो में ठहरा हुआ है।"

"यहां क्यों नहीं आया ?"

"कहता था कि दादी निमन्त्रण देंगी तो आऊंगा।"

"बहुत रुपया कमा लिया मालूम होता है।"

"यह तो उसने बताया नहीं। हां, एक बात यह बताई है कि वह अपने पिता से बंटवारा कर चला आया है।"

"तो काम उसको सौंप आया है ?"

"नहीं। सन्तराम अपनी पत्नी के पास दक्षिण अमेरिका के रायो-डि-जेनिरिओ को चला गया है। उसे और उसके पिता को फर्म का क्या कुछ देना है ?"

"वह सत्तर लाख रुपया, जो मद्रास ब्रांच का गबन किया था, अभी उसकी पत्नी के पास है।"

"वह वहां इमारती लकड़ी का व्यापार कर रही है।"

"अब उसका पता जानकर उसपर दावा ठोक देना चाहिए।"

"यह सब विष्णु ही कर सकता है। मैंने तो कारोबार की मैनेजरी छोड़ दी है।"

"पर आप राय तो दे सकते हैं।"

"मैं सूचना दे दूंगा। परन्तु बिना पूछे राय नहीं दूंगा।"

"मैं तो यह कह रही थी कि सुमेर बिना मेरे निमन्त्रण के यहां नहीं आएगा, अर्थात् अब वह मेरा पोता नहीं रहा। वह दामादों की भांति ऐंठने लगा है।"

"आजकल के लड़के इसे 'आत्मसम्मान' कहते हैं।"

"मैं तो इसे अभिमान ही समझती हूं और उस अभिमानी जीव को यहां आने का निमन्त्रण नहीं दूंगी।"

"मैं तो उसकी पत्नी और अपने परपोते को बुलाना चाहता हूं। सुमेर तो फोकट में ही आ जाएगा। एक और बात हुई है।"

"क्या ?"

"हमारी धर्मादा समिति में काम सरलता से नहीं चल रहा है। मोहिनी तो पहले से ही इस काम से अरुचि रखती है। आज विष्णु ने भी इससे अपनी अरुचि प्रकट कर दी है। इसपर माजी ने पूरी योजना पर पुनरावलोकन का निश्चय किया है।"

"और आप क्या समझते हैं ?"

"मुझे तो यह योजना बहुत सुन्दर प्रतीत हुई थी। मेरे मन में मांजी की एक बात बैठ गई है। वह यह कि कुआ लगानेवाला तो निर्मल, स्वादिष्ट और शीतल जल देखकर कुआ बनवा देता है। उसका फल कुआ लगानेवाले को होगा ही। रही यात्रियों के लाभ की बात। जो वहां पहुंच पुरुषार्थ से जल खींच पान करेगा, वह तृप्ति लाभ करेगा ही। यदि किसी मतिभ्रम से अथवा भूल से सब लोग सुन्दर बने कुए पर जल पीने चले जाते हैं, जहां का जल गदा, अस्वास्थ्यकर है तो इसमें दोष यात्री का है। स्वच्छ जल का कुआ लगानेवाले को तो पुण्य मिलेगा ही। चाहे कोई पीने आए अथवा न आए।

"इस कारण मैंने तो जल की स्वच्छता देख कुआ लगाने की योजना स्वीकार की थी। परन्तु विष्णु इत्यादि कह रहे हैं कि इस कुएं पर कोई नहीं आएगा। कारण यह कि यह मार्ग से कुछ दूर है और उतना आकर्षक नहीं जितना कि दूसरे कुए हैं।

"मांजी तो विक्षुब्ध हो खाटू लौट जाने की बात विचार कर रही हैं। अन्तिम निर्णय के लिए मंगल के दिन निश्चय कर दिया है।"

"तो आप बनारस नहीं जा रहे ?"

"जा रहा हूं। मांजी की आज्ञा है कि वहां का कार्य तो चलेगा ही।"

किशोरी इस नई परिस्थिति के उत्पन्न होने पर बोल उठी, "हम भी अब कलकत्ता छोड दें तो कैसा रहे ?"

"क्यों ?"

"पचास वर्ष कलकत्ता में रहते हो गए हैं। परिवार के सब लोग स्वतन्त्र और स्वाभिमानी हो गए हैं। अब हमको अपना डेरा-डंडा ले कूच कर देना चाहिए।"

३

सायंकाल सुमेर और शकुन्तला अपने एक वर्ष के पुत्र परमेश्वरी-लाल को लेकर आ गए। वे अभी किशोरी से औपचारिक वार्तालाप में ही लगे थे कि कमरे में गजाधर और लक्ष्मी अपने तीन बच्चों के साथ आ पहुंचे। मकान का चपरासी उनका बिस्तर और सूटकेस उठाए उनके साथ आया था।

"ओह! लक्ष्मी! तुम बिना सूचना दिए ही आ गई हो?"

लक्ष्मी ने किशोरी के चरण स्पर्श किए और बच्चों को मां के चरण स्पर्श करने के लिए कहा। ललिता अब छः वर्ष की हो गई थी। सिद्धेश्वर चार वर्ष का था और एक बच्चा लक्ष्मी की गोद में था। वह छः मास का प्रतीत होता था।

मांजी ने चौकीदार को उनका सामान नम्बर तीन के कमरे में रखने के लिए कह दिया। फिर उसने ललिता को अपनी गोद में बैठा उसकी पीठ पर प्यार देते हुए पूछ लिया, "तू मुझे जानती है?"

ललिता ने मुस्कराते हुए सिर हिलाकर जानने की बात बता दी। अब गजाधर आकर दादी के चरण स्पर्श कर उनके सामने बैठा तो किशोरी ने पुनः पूछ लिया, "तुमने अपने आने की सूचना नहीं दी। स्टेशन पर तुम्हें लेने के लिए गाड़ी भेज देते।"

"पर मांजी, किसी पराये घर में तो आ नहीं रहा था। व्यर्थ में भापा को कष्ट होता और ये चिन्ता करते रहते। गाड़ी दो घण्टा देरी से आई है।"

"पर यह देखो, सुमेर है। यह भी मेरा पोता है। यह कह रहा है कि दादी निमन्त्रण देंगी तो यहां रहने आएंगे। ये अभी होटल में ठहरे हैं।"

"मांजी, ये बड़े आदमी हैं। मैं तो इनका अनुकरण नहीं कर सकता।"

"क्यों सुमेर, कितने बड़े हो गए हो तुम? कितना रुपया पिता से

मिला है तुमको ?"

"माजी, यह बड़े-छोटे की बात नही। यह स्वाभिमान की बात है।"

"तो तुम हमको अपना नही मानते ? स्वाभिमान तो परायो से व्यवहार मे आता है। अपनों के साथ तो 'स्व' का प्रयोग व्यर्थ है। केवल अभिमान ही रह जाता है।"

इस समय गजाधर ने बात बदलकर कह दिया, "परसों एक पत्र नये मैनेजर साहब का आया था। उमीके विषय मे बात करने आया हूं। मैं आने लगा तो लक्ष्मी भी तैयार हो गई।"

"यह तो ठीक ही हुआ। बडी माजी भी यहा आई हुई हैं।"

"सत्य !" लक्ष्मी ने पूछ लिया, "तब तो मैं उनके चरण स्पर्श करने जाना चाहती हू। कहा हैं वे ?"

"साथ के कमरे मे है।"

"मैं तो एक तीर्थ मे स्नान करने आई थी। और यहा तो दो-दो तीर्थ एक ही स्थान पर एकत्रित हो गए है।"

लक्ष्मी यह कहती हुई उठी और बोली, "उनके चरण स्पर्श कर आऊं।"

शकुन्तला भी उठ खडी हुई और बोली, "मैं भी चल रही हूं, लक्ष्मी बहिन।"

दोनों स्त्रिया उठ साथ के कमरे मे चली गईं। सुमेर और गजाधर वहा रह गए। गजाधर ने कहा, "मैं भी बडी माजी के दर्शन करने जाना चाहता हूं। परन्तु लक्ष्मी और शकुन्तला पहले यह सौभाग्य बटोर लें। फिर मैं जाऊगा।

"सुनाओ सुमेर, कैसे आना हुआ ?"

"मैं सिगापुर मे अपना काम समेटकर यहा चला आया हू। भापाजी से किसी नये काम के लिए राय करना चाहता हू।"

"कितना रुपया बटोर लाए हो ?"

"इस समय पिताजी का हिस्सा दे देने के बाद भी सब सम्पत्ति कई मिलियन डालर है। अधिकाश न्यूयार्क के एक बैंक मे जमा है। जब किसी काम का निश्चय हो जाएगा तो फिर उसको यहा मगवा लूगा।"

इस प्रकार सुमेर ने अपनी वास्तविक स्थिति को बताने से अपने

को बचा लिया। गजाधर समझ गया कि सुमेर उससे अपनी आर्थिक स्थिति छिपा रहा है। इस कारण उसने बात बदल दी। "तुम्हारे पिताजी कहां हैं ?"

"वे दक्षिण अमेरिका में मांजी के पास गए हैं।"

"मैं समझता हूं, तुम्हारी मां विशेष प्रतिभा रखती हैं। तुम बाप-बेटा तो दोनों उसके सामने बुद्धू ही हो।"

सुमेर ने कह दिया, "जब मां मद्रास से भागी थी तो मैं उनको अति कुटिल मानने लगा था। परन्तु उनकी सूचना मिलने से मुझे अपनी उनके विषय में राय बदलनी पड़ी है।"

"तो अब क्या राय बना ली है ? वे दया तथा न्याय की देवी हैं न ?" किशोरी ने पूछ लिया।

" वे कुटिल तो नहीं हैं। हां, स्वार्थी जीव हैं। दुर्भाग्य अथवा सौभाग्य से पिताजी का स्वार्थ मांजी के साथ सम्बद्ध हो गया है। इस कारण पिताजी को भी माताजी के स्वार्थ का समर्थन करना पड़ गया है। माताजी के पत्र से पता चला है कि पिताजी को यह सब विदित था कि माताजी सब धन लेकर भाग गई हैं। यद्यपि पिताजी को यह पता नहीं था कि वे कहां गई हैं। वे जानते थे कि वे हिन्दुस्तान से बाहर हैं। पिताजी यह भी जानते थे कि उनको सात वर्ष तक का कारावास हो सकता है और वे इतने रुपये गबन करने के लिए यह दण्ड भोगने को तैयार थे।

"बाबाजी से सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार के कारण ही वे कैद से छूट गए थे। माताजी ने लिखा था कि सिंगापुर से एक मेरे भागीदार के परिचित के आने पर पता चला है कि आप वहां कारोबार कर रहे हैं। मैं तो आपको अभी भी कारावास भोग रहा समझ रही थी। कुछ भी हो, यहां हमारा काम बहुत अच्छा है। आप भी यहां आ सकते हैं, बहुत आनन्द रहेगा।

"इस सूचना के पाते ही पिताजी ने मुझे नोटिस दे दिया कि मैं उनको सिंगापुर में फर्म के नाम की गुडविल दे दूं और वे रायो-डि-जिनिरिओ जाना चाहते हैं।

"मैंने कह दिया, 'मैं भी जाना चाहता हूं।'

" 'कहां ?'

"'मां ने तो बुलाया नहीं। इसलिए आपके साथ नहीं जा रहा।'

"'तो यहीं क्यों नहीं रह जाते?' पिताजी ने पूछा।

"वास्तव में मुझे अपने माता-पिता की इस स्वार्थपरता पर रोष था। माताजी लगभग दो-ढाई करोड़ रुपया लेकर भागी थीं। परन्तु मैं समझता था कि उस चोरी से हमको कुछ लाभ नहीं हुआ। इस-पर भी यदि वे मुझे बुलातीं अथवा मेरे विषय में कुछ भी पूछ-ताछ करतीं तो एक बार तो मैं वहां जाने को तैयार हो जाता।

"रही सिंगापुरवाली दुकान। मुझे सिंगापुर पसन्द नहीं। मैं तो कोई ऐसा काम करना चाहता हूं जिसका सम्बन्ध अमेरिका से हो। मैं वहां जाकर रहना चाहता हूं।"

किशोरी की रुचि इन व्यापार की बातों में नहीं थी। वह दोनों भाइयों को छोड़ बहुओं के पीछे बड़ी माजी के कमरे में जा पहुंची।

वहां रामेश्वरी बहुओं से कह रही थी कि वह खाटू वापस जा रही है। उसका यहां इस फर्म से काम समाप्त हो गया है प्रतीत होता है। आज तक इस व्यवसाय से उसका सम्बन्ध धर्मादा के नाते ही था। उसने कहा, "मैं समझने लगी हूं कि यह मोह भी झूठा था, अब वह भी छूटता जाता है।"

"पर मांजी," किशोरी ने कहा, "वहां आप क्या कर सकेंगी?"

"एक बात तो कर सकूंगी।"

"क्या?"

"भगवत्-भजन। मुझे वहां भगवान अधिक समीप प्रतीत होता है। यहां तो वह बहुत दूर दिखाई देता है।"

किशोरी ने मुस्कराते हुए कहा, "तो हमको भगवान से दूर क्यों रख रही हैं, माताजी?"

"मैं नहीं रख रही हूं। ये तुम्हारे पति हैं जो तुमको बांधकर रखे हुए हैं। वे कहते हैं कि यहां सुख-सुविधा खाटू से अधिक है। यह बात भी ठीक है। यह अन्नमय कोष यहां सुखी अनुभव करता है। मनोमय कोष भी यहां सुविधा अनुभव करता है। परन्तु किशोरी, प्राणमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोषों को तो नगरों में, विशेष कर इस नगर में, असुविधा ही प्रतीत होती है।"

लक्ष्मी ने कहा, "भाजी, ललिता के पिताजी से मैं

कर रही हूं।"

"क्या ?"

"यही कि रंगून, मद्रास और कलकत्ता का आनन्द लूट लिया है। अब किसी देहात में चलकर उसका भी रस लें। फिर देखें कि कौन-सा स्थान अधिक रसमय है।"

"और गजाधर क्या कहता है ?"

"वे फर्म के मैनेजर से बातचीत करने के लिए आए हैं।"

"अर्थात् उनसे कहने के लिए आए हैं कि किसी गांव में भी बनिये की दुकान खोल दें।" रामेश्वरी कहती-कहती हंस दी।

इसपर तो किशोरी और दोनों बहुएं भी हंसने लगीं।

शीघ्र ही लक्ष्मी ने गम्भीर होकर कहा, "नहीं, इससे कुछ लाभ नहीं हो सकता। वे अपने मन में एक योजना बनाए हुए हैं। कहते थे भापा-जी से बात करके बताएंगे।"

किशोरी ने कहा, "ठीक। सुमेर यह राय करने के लिए आया है कि वह न्यूयार्क में व्यापार चलाए अथवा नहीं और फर्म उसको क्या सहायता देगी। और गजाधर यह पूछने के लिए आया है कि राजस्थान के एक गांव में वह जाकर रहे अथवा नहीं और उसके भापा उसको क्या सहायता दे सकते हैं ?"

लक्ष्मी ने एक बात कही, "मुझे तो अपने साहब की कुछ ऐसी ही बात समझ में आई है।"

४

अब सुमेर और गजाधर भी बड़ी मांजी से मिलने चले आए।

"सुनाओ गजाधर, क्या करते रहे हो वहां ?"

"मांजी, एक तो आपके परिवार में एक सदस्य की वृद्धि की है।"

"मैं समझती हूं कि अब सब लोग अपने-अपने परिवार की वृद्धि करो। यह वड़ का पेड़ तो अब गिरनेवाला है। तुम लोग अब इसकी शाखाओं को छोड़ अपनी-अपनी भूमि पकड़ो और स्वयं पेड़ बन अपने-अपने परिवार चलाओ।"

उत्तर किशोरी ने दिया, "मांजी, जब तक आप हैं तब तक तो

नाम आपका ही होगा, भले ही बड़ के पेड़ की शाखाएं भूमि पकड़ लें।"

"देख लो। कहीं ऐसा न हो कि मूल पेड के गिरने पर ये छोटे-छोटे पेड उसके नीचे ही दब जाएं।"

"नहीं मांजी, आप चिन्ता न करें। सबकी आर्थिक स्थिति ऐसी है कि वे अपने पांव पर खडे होने योग्य हैं।"

सुमेर ने अपने माता-पिता की कथा बड़ी मां को सुनाई तो रामेश्वरी बोली, "तुम्हारी मा ने इस फर्म को एक बहुत बड़ा धक्का लगाया था परन्तु जुग्गी के व्यापारिक कौशल से फर्म वह धक्का सह गई और अब पुनः आगे बढने में सफल हो गई है।"

लक्ष्मी ने कुछ संकोच से कहा, "पर मांजी, फर्म के नये मैनेजर तो फर्म की आधारभूत नीति को ही बदल देना चाहते हैं।"

"मुझे मालूम है। परन्तु मेरा मस्तिष्क व्यापार-सम्बन्धी बातों में नहीं चलता। मैं तो व्यापार को साधन मानती हूं। यह स्वयं मे कोई उद्देश्य नहीं है।" रामेश्वरी ने अपना मत बताया।

"और उद्देश्य क्या है?" सुमेर ने पूछा।

"देखो सुमेर, मैं बताती हूं। वर्षा होती है। यदि वर्षा का सब जल खेत में ही पड़ा रहे और न तो उसमे से भूमि में जज्ब हो और न ही भगवान सूर्य उसमें से अपना भाग आकाश मे खींच ले जाएं, तो खेत मे कीचड़ हो जाए और फिर उसमें कुछ भी उपज न हो सके। यह परमात्मा का विधान है कि खेत का फालतू जल भूमि मे जज्ब होकर नीचे जाकर बहना आरम्भ कर देता है। यह जो स्थान-स्थान पर कुएं खोदे जाते हैं, उसी भूमिगत जल को बाहर निकालते हैं। इन कुओं से ही पुनः ऐसे खेतों में, जहा वर्षा नहीं होती अथवा कम होती है, सिंचाई करने के लिए जल ऊपर ले आया जाता है। यह वैश्य समाज मानव-परिश्रम से उत्पन्न धन को सोखकर भूमि के भीतर ले जाता है और फिर जहां उचित समझता है निकालकर समाज के उन क्षेत्रों की सिंचाई करने लगता है जहां धन का अभाव हो जाता है।"

गजाधर ने बताया, "फर्म के मैनेजर भी कुछ ऐसी ही बात कह रहे हैं। मैनेजर साहब ने अपनी एक विज्ञप्ति में लिखा है कि केवल कुआ खोदने से काम नहीं चलेगा। कुएं मे से जल निकालने की सामर्थ्य सबमें नहीं है। हमको तो कुएं पर पम्प लगवाना है जिससे जल स्वतः

वहां पहुंच सके जहां हम चाहते हैं।

" इस सवका अभिप्राय भी उन्होंने लिखा है। वे कहते थे, धन वैश्य समाज के पास एकत्रित हो जाता है। वे उसको वहां ले जाकर प्रयोग करते हैं जहां उनके अपने खेत हैं। सूखे के स्थान पर वे नहीं ले जाते। अतः एक नया ढंग सोचा गया है कि सब फालतू धन राज्य के पास जमा हो जाए और वह राज्य अपनी व्यापक दृष्टि से वहां पर उस धन को पम्प और पाइपों द्वारा ले जाए जहां उसकी आवश्यकता हो।"

रामेश्वरी ने कहा, " मुझे उसकी बात का ज्ञान है। वह विज्ञप्ति मेरे पास भी आई है। मैं न तो राजनीति जानती हूं और न ही पम्पों और पाइपों की विद्या। मैं एक बात समझती हूं कि जिस किसीके खेत में जल जाए वह जल ले जाने में उसका परिश्रम सम्मिलित होना चाहिए। इस संचित धन में से प्रयोग करने का अधिकार उनका हो जो उसे कुंए से निकालने का परिश्रम करें। यह धन फोकट में न मिल जाए।

" फोकट में मिलने से किसान आलसी और प्रमादी हो जाएगा और यह सबको हरामखोर बनानेवाला होगा। "

"पर मांजी !" सुमेर ने भी अपनी युक्ति लड़ाई। उसने कहा, "परमात्मा भी जब वर्षा करता है तो अनायास ही करता है। जब भगवान बिना परिश्रम के देता है तो राज्य भी अनायास ही क्यों न दे ?"

रामेश्वरी ने सुमेर की युक्ति सुनकर कहा, " अब तो सुमेर भी अक्ल की बात करने लगा है। परन्तु सुमेर, परमात्मा अनायास ही किसीको कुछ भी देता है क्या ?

" देखो, गजाधर को लक्ष्मी जैसी सुशील और सुन्दर तथा बुद्धिशील पत्नी मिली है और तुम्हारे पिताजी को भी सुन्दर और बुद्धिशील पत्नी मिली थी। फिर भी दोनों में अन्तर तो है ही। एक परिवार का धन लेकर भाग गई और दूसरी परिवार की वृद्धि में लगी है। यह अन्तर क्यों है ?

" तुम जुग्गी के घर में बरस पड़े हो और व्यापार के ढंग को समझ लाखों पैदा कर रहे हो और जुग्गी का चपरासी सीताराम अपने वेतन से अधिक के विषय में विचार कर ही नहीं सकता। यह क्यों है ?

" एक और उदाहरण लो। प्रोफेसर भट्टाचार्य यहां रहते हैं। वे काम कम से कम करना चाहते हैं और उजरत अधिक से अधिक

लेना चाहते हैं। और एक कीर्तिमोहन पण्डित हैं। वे उजरत के लिए चिन्तित नहीं और काम करने में रुचि रखते हैं। भला ऐसा क्यों है?

"और सुनोगे? जुग्गी के पिता को दस्त आने लगे थे। जुग्गी एक डाक्टर को बुला लाया। दो दिन ओषधि दी। लाभ तो हुआ नहीं परन्तु उनका बिल दवाइयों और फीसों का ढाई सौ रुपया आ गया था। बाद में जुग्गी एक कविराज को ले आया तो वे दो पुड़ियों से ठीक हो गए। जुग्गी कविराज का बिल देने के लिए गया तो उन्होंने ओषधि के मूल्य के चार आने लिए। जुग्गी ने फीस पूछी तो बोले, 'उस सन्दूकची में जो कुछ उचित समझो डाल दो।' जुग्गी ने सन्दूकची पर 'दानपात्र' लिखा पढ़ा तो उसमें तीस रुपये डालकर वैद्यजी से बोला, 'पर मैंने तो आपकी फीस के विषय में पूछा था?'

"कविराजजी बोले, 'वही तो है।'

"बताओ सुमेर, यह क्यों है?"

"मांजी, यह इस तरह है। एक बच्चे के हाथ से स्याही की दवात भूमि पर गिर पड़ती है तो स्याही हाथी, बन्दर अथवा घोड़े की तस्वीर बना देती है। एक अन्य बच्चे के हाथ से स्याही गिरती है तो वह सूर्य, चांद और तारों के चित्र बना देती है। जैसे इसमें कोई कारण प्रतीत नहीं होता वैसे ही बुद्धि के न्यूनाधिक होने में अथवा विभिन्नता में कोई कारण प्रतीत नहीं होता।"

"परन्तु," रामेश्वरी ने कहा, "भूमि पर स्याही और प्राणी की बुद्धि में अन्तर नहीं देखते तुम? स्याही से हाथी-घोड़ा बने अथवा सूर्य-चन्द्र बने, स्याही तथा भूमि में कुछ अन्तर नहीं पड़ता। परन्तु एक प्राणी कुत्ता बन गया और दूसरा उसका मालिक सुमेर बना है, तो दोनों की बुद्धि के न्यूनाधिक होने से सुख-दुःख की प्राप्ति में अन्तर पड़ता है। स्याही गिरानेवाले बच्चों में अन्तर नहीं माना जा सकता। किसीकी स्याही से हाथी-घोड़ा बने हैं अथवा चांद-सितारे बने हैं। परन्तु जिसने बुद्धि का बंटवारा किया है अर्थात् एक को कुत्ता बना दिया है और दूसरे को सुमेर सेठ, उसके विषय में विचार करना ही पड़ता है। कारण यह कि यहां बुद्धि के न्यूनाधिक होने से कुत्ते और सुमेर में सुख-दुःख में अन्तर पड़ गया है।"

"कुछ भी हो मांजी, है यह घटनावश ही। यह बंटवारा करने-

वाली है नेचर। यह 'प्योर ऐण्ड सिम्पल' (शुद्ध और सहज) घटना ही है कि मैं यह हूं और कुत्ता वह है।"

"नेचर नाम देने से क्या कोई ज़िम्मेदारी से बच जाता है? फिर यदि तुम और कुत्ता घटनावश हैं तो चोर-डाकू तुमसे सब छीन ले जाते समय तुम इसे घटनावश ले गए क्यों नहीं मान लेते? यह नेचर चोर या दयालु हो गई क्यों नहीं मान लेते?"

सुमेर समझ नहीं सका था कि यह अनपढ़, देहात में पैदा हुई, वहीं पली और बूढ़ी हुई स्त्री उसकी बात को कैसे युक्ति से काटती चली जाती है। वह टुकर-टुकर मुख देखता रह गया। इसपर रामेश्वरी ने कुछ सांस ले पुनः अपनी बात कहनी जारी रखी, "सुमेर, यहां कुछ भी घटनावश नहीं हो रहा है। सब कुछ एक नियम से बंधा हुआ चलायमान हो रहा है। वे नियम अटल हैं और एक बहुत ही योग्य न्यायकर्ता के निर्माण किए हैं। हम उसे परमात्मा कहते हैं। तुम उसे नेचर कहते हो। कोई उसे अल्लाह का नाम देता है और कोई उसे गॉड कहता है। नाम कुछ भी हो। प्रश्न एक ही है कि क्या ऊंच, नीच, जो हम देखते हैं, यह अन्धे की अन्धेरे में लाठी है अथवा एक ज्ञानवान शक्ति का ज्ञानयुक्त बंटवारा। हम मानते हैं कि यह अन्धे की अन्धेरे में लाठी नहीं है। यह निर्धन और धनी अपने-अपने पूर्वजन्म के कर्मों का फल भोग रहे हैं।"

"मांजी, यदि यह मान लें तो फिर किसी निर्धन को धन अथवा अन्न से सहायता देने की क्या आवश्यकता है?"

"यह इसलिए कि इस जन्म के बाद भी तो जन्म होना है। और जो कुछ हम इस जन्म में दे देंगे वह अगले जन्म में फलीभूत होगा। हम जो यह लोक-कल्याण का कार्य करते हैं किसी निर्धन या अपाहिज पर कृपा नहीं करते। यह तो हम अपने अगले जन्म में भी सुख-सुविधा से सम्पन्न होने के लिए ऐसा करते हैं।

"इसी कारण मैं कहती थी कि हमको एक स्वच्छ, स्वादिष्ट और शुद्ध जल का कुआं लगा देना चाहिए और जो पुरुषार्थ कर उसमें से जल निकाले वह उसे पी ले।"

सुमेर यद्यपि मांजी की बात का खण्डन नहीं कर सका था परन्तु वह माना भी नहीं था। शकुन्तला तो मांजी को युक्ति करते देख

चकित रह गई थी। उसके मन में विश्वास होता जाता था कि मांजी की वर्तमान स्थिति, उनका परिवार और उसके सुख-समृद्धि घटनावश नहीं है।

वह यह बात सुन चुकी थी कि परिवार की वर्तमान सुख-समृद्धि माजी के ढाई सौ रुपया बीज रूप में देने से ही हुई थी। यह ठीक था कि वह बीज गल-सड जाता यदि उनका लड़का सद्‌बुद्धि न रखता। इसपर भी यह सब घटनावश हो गया, इसे वह मानने के लिए तैयार नहीं थी।

उस रात सुमेर और शकुन्तला में बात पुनः इसी विषय पर चल पड़ी। बात आरम्भ हुई इस बात पर कि शकुन्तला ने पति से कहा, "आप बाबा के मेहमान बन जाइए और इस होटल में पचास रुपये रोज़ खर्च करने से बचा लीजिए।"

"पर मुझे तो किसीने कहा ही नहीं कि हम वहां चले आएं।"

"बाबाजी ने कहा तो था। आपने ही बताया था कि उन्होंने वहां आ जाने के लिए कहा था।"

"और मैंने उनसे कहा था कि यदि दादीजी आमन्त्रित करेंगी तो वहां जाऊंगा।"

"पर निमंत्रण की बात का तो आपके भाई गजाधर ने कैसा सुन्दर उत्तर दिया था। उन्होंने कहा था, 'हम किसी दूसरे के घर में तो आए नहीं जो निमन्त्रण पर आते।'

"मेरे विचार उनसे नहीं मिलते।"

"पर बात तो गजाधर की ठीक ही थी। दादी के बुलाने पर ही उनके पास जाकर रहने में कोई तथ्य है क्या?"

"नहीं शकुन्तला, उनके और मेरे दृष्टिकोण में आकाश-पाताल का अन्तर है। मैं स्वाभिमानी जीव हूं और वे हैं ठेठ बनियां। बात-बात पर पैसा बचाने के बहाने निकाल लेते हैं।"

"स्वाभिमान की बात का समाधान भी दादीजी ने कर दिया था। उन्होंने कहा था कि 'अपना' शब्द तो पराये के मुकाबले में प्रयुक्त होता है। अपनों-अपनों में 'स्व' शब्द का प्रयोग निरर्थक है। इसे निकाल दें तो आपका स्वाभिमान केवल अभिमान रह जाएगा। यह तो बहुत ही बुरी बात है।"

"शकुन्तला, तुम सिंगापुर में तो बहुत ही भली-चंगी दिखाई देती थीं परन्तु यहां आते ही तुम्हारी बातें बदल गई हैं। पहले भी खाटू में यही हुआ था। असल बात यह है कि मैं बड़ी मांजी को पिछली पीढ़ी की एक गली-सड़ी वस्तु मानता हूं।"

"परन्तु आप उनकी एक भी बात का उत्तर तो दे नहीं सके थे।"

"यह इसलिए नहीं कि उनकी बात का उत्तर नहीं है। यह केवल इसलिए कि मैं व्यर्थ में उनको वृद्धावस्था में दुःखी करना नहीं चाहता था।"

"ओह, तो अब बता दीजिए कि आप क्या कहते हैं। देखिए, मैं तो एक पिछली सदी की गली-सड़ी वस्तु नहीं। मुझे ही समझा दीजिए।"

"मैंने बताया तो था कि यह धनी और निर्धन होना, सुन्दर और कुरूप होना, और इन्सान और कुत्ते-बिल्ली होना सब घटनावश है। इसमें परमात्मा-आत्मा की अथवा कर्म और कर्मफल की बात नहीं है।"

"यह जो कुछ आप संसार में देख रहे हैं, उसको ही गलत बता रहे हैं।"

"जो कुछ संसार में हो रहा है, वह ठीक है। ऐसा ही होना था और हो रहा है।"

शकुन्तला को यह बात समझ नहीं आई कि यदि वह अपनी सास की नकल नहीं करती तो इसलिए नहीं कि वह न्याय-अन्याय, उचित-अनुचित, धर्म-अधर्म में भेद समझकर नहीं करती वरन उसका यह न करना घटनावश है। वह अपनी भलमनसाहत और धर्मपरायणता से इन्कार नहीं कर सकी और इसको केवल घटना नहीं मान सकी। इसपर भी उसने वार्तालाप को और आगे नहीं चलाया।

५

जुग्गीमल पण्डित कीर्तिमोहन के साथ बनारस गया और वहां अपने विद्यालय की इमारत बनती देख और उसकी प्रगति को तीव्र कर लौट आया। भवन का ठेका एक निर्माण कम्पनी को दिया

हुआ था।

जब वह लौटा तो रामेश्वरी देवी से मिलने के लिए गया। रामेश्वरी देवी ने कहा, "धर्मादा समिति की बैठक बुला लो।"

"माजी, गजाधर यहां की नवीन समस्या लेकर आया हुआ है।"

"क्या समस्या है?"

"वह कहता है कि नवीन मैनेजर फर्म की नीति को बदल रहा है। यह नीति-परिवर्तन बड़ी सभा में ही करना चाहिए।"

"वह क्या नीति चाहता है?"

"यह वह बताता नहीं। वह कहता है कि कुछ है जो कम्पनी की बैठक में सब सदस्यों को ही बताएगा। उसका कहना है कि कारोबारी समिति नीति नहीं बदल सकती। वह तो कार्य करेगी। नीति का निश्चय बड़ी समिति करेगी।

"जब विष्णु ने कहा कि उसे सब बात बताए बिना बड़ी समिति बुलानी अनुचित है तो उसने कह दिया कि किसी कम्पनी में पत्तीदार होना और किसी कम्पनी की नौकरी में होना दो भिन्न-भिन्न बातें हैं। मैंने अपनी बात मैनेजर को बता दी है। नीति की बात मैं सभा में करूंगा।"

"पर जुग्गी! इसमें भी तो कुछ कारण होना चाहिए?" रामेश्वरी ने पूछा।

"अवश्य होगा किन्तु वह बताता नहीं है।"

"अच्छा, वह जाने और उसकी कम्पनी जाने। कदाचित् मैं भी अपना सब रुपया कम्पनी से निकालना चाहूंगी।"

इसपर तो जुग्गीमल भौचक्का हो मुख देखता रह गया। वह अभी इसका कारण पूछ नहीं सका था कि रामेश्वरी ने कह दिया, "पहले धर्मादा समिति की बैठक बुलाओ और फिर इस विषय में अपना मत बताऊंगी।"

जुग्गीमल समझने लगा था कि कम्पनी टूटनेवाली है। इसपर भी वह मुख से यह बात कह नहीं सका और समिति की बैठक बुलाने के विचार पर पूछने लगा, "मांजी, कब बुलाई जाए यह बैठक?"

"बताया तो था, मंगलवार के दिन। आज रविवार है। यह

इसकी बैठक बुलानी चाहिए जिससे मैं और तुम्हारे पिता बुध के दिन खाटू के लिए चल सकें। गाड़ी में हमारे लिए सीटें रिजर्व हो चुकी हैं।"

गजाधर ने बड़ी सभा बुलाने की बात विष्णुसहाय से कही थी। जुग्गीमल अभी गजाधर से नहीं मिला था। जुग्गीमल प्रातःकाल घर पहुंचा था और गजाधर अपनी पत्नी को लेकर दार्जिलिंग भ्रमण के लिए गया हुआ था। जाने से पहले वह कम्पनी के मैनेजर से कह गया था कि उससे मद्रास की ब्रांच का चार्ज ले लिया जाए और वह अब वहां नहीं जाएगा। छुट्टी के बाद वह कहीं अन्यत्र जाना चाहेगा।

विष्णुसहाय इसका कारण नहीं जान सका था। जुग्गीमल का विचार था कि गजाधर बड़ी मां को कारण बता गया होगा। परन्तु वहां एक नई बात का पता चला कि वे भी कम्पनी से पृथक् होना चाहती हैं। इस नूतन स्थिति का वर्णन उसने अपनी पत्नी से किया तो वह बोली, "क्या यह अच्छा नहीं होगा कि हम भी अब व्यापार से पृथक् हो अपना जीवन किसी तीर्थस्थान पर व्यतीत करें और कम्पनी के झगड़े से छुट्टी ले लें ?"

"और यह धर्मादा का काम ?"

"इसका कम्पनी से सम्बन्ध नहीं होना चाहिए।"

"तो रुपया कहां से आएगा ? कम्पनी के पास इस समय पचानवे लाख रुपया है।"

"उसका एक पृथक् ट्रस्ट बना दिया जाए। इसका कम्पनी से सम्बन्ध न रखा जाए।"

"तो यह बात माताजी ने कही है ?"

"नहीं, यह मैं विचार कर रही हूं। बात इस प्रकार सूझी कि एक दिन सुमेर और माताजी में विष्णुसहाय की विज्ञप्ति पर विवाद छिड़ गया था। उसमें विष्णुसहाय की इस बात पर विचार व्यक्त किए गए थे। उन विचारों की बात सुन मैं दो निर्णयों पर पहुंची हूं। एक तो यह कि दान देनेवाले का दान के संचालन से सम्बन्ध नहीं होना चाहिए। यह निर्णय मैंने इस कारण लिया है कि दान देनेवाले बुद्धिमानों की धर्मबुद्धि को विचलित करते रहेंगे। दानकार्य चलाने के लिए ब्राह्मण प्रकृति के लोग होने चाहिए। न क्षत्रिय, न वैश्य।"

"तो तुम्हारा अभिप्राय है कि डाक्टर घोष और डाक्टर भट्टाचार्य को यह काम करने के लिए दे देना चाहिए ?"

"जी नहीं । वे लोग शूद्र प्रवृत्ति के सिद्ध हुए थे । उन दोनों को अपने वेतन की अधिक चिन्ता थी और इस कार्य से होनेवाले कल्याण की कम । वेतन की चिन्ता और कार्य को गौण माननेवाले तो शूद्र ही होते हैं ।"

"तो फिर योग्य ब्राह्मण मिलने कठिन ही होंगे ।"

"हां, कठिन तो हैं । परन्तु इस कारण अयोग्यों को और शूद्रों को धर्म और कल्याण-कार्य पर लगा दिया जाए यह तो कोई युक्ति नहीं ।"

यह एक नई समस्या थी । वह नहीं जानता था कि क्या होगा धर्मादा समिति में । इसपर भी मांजी का आदेश था कि मंगल के दिन समिति बुलाई जाए । वह बुलाई गई ।

बुलाया तो कीर्तिमोहन, सतीशचन्द्र घोष और निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य को भी था परन्तु आया था केवल कीर्तिमोहन ही । विष्णुसहाय, जुगीमल, रामेश्वरी देवी, मोहिनी देवी और सूर्यप्रसाद—समिति के पांचों सदस्य उपस्थित थे ।

बात रामेश्वरी देवी ने शुरू की, "मैं कलकत्ता से जा रही हूं और जाने से पूर्व धर्मादा समिति की योजना के विषय में जानना चाहती हूं ।"

इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "इस समिति की आठ बैठकें हो चुकी हैं । उनमें केवल एक बात का निर्णय हो सका है । वह यह कि दर्शन विद्यालय बनारस में चलाया जाए । उस विद्यालय में क्या पढ़ाया जाए वह पण्डित कीर्तिमोहनजी ने बताया है । परन्तु वहां के पाठ्यक्रम के विषय में मेरी सम्मति यह है कि वहां के लिए एक गवर्निंग काउंसिल बना दी जाए । वह निर्णय किया करेगी । यह गवर्निंग काउंसिल किस प्रकार निर्मित होगी, यह निश्चय नहीं हो सका है । शेष अभी तक कुछ भी निश्चय नहीं हो पाया ।"

जुगीमल ने कहा, "जहां तक मैं समझा था, एक सामान्य योजना परिकल्पित की जा चुकी है । वह योजना यह है कि हमें आधारभूत शिक्षा संस्कृत में दर्शनशास्त्रों की देनी है और इस आधारभूत शिक्षा से शिक्षित विद्यार्थी ज्ञान-विज्ञान सीखेंगे ।

"इस सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो भी साधन हो वह जुटाना चाहिए।"

इसपर विष्णुसहाय का उत्तर था कि इस सामान्य योजना पर विचार करने के लिए कलकत्ता के दो प्रसिद्ध विद्वानों को बुलाया गया था और वे इस योजना को अव्यावहारिक बता गए हैं। अतः वह योजना अभी विचाराधीन है।"

"मैं कम्पनी का धन किसी भी योजना पर तब तक व्यय नहीं होने दूंगा जब तक उसकी उपयोगिता विद्वानों द्वारा मान्य न हो जाए।"

कीर्तिमोहन ने समिति के अध्यक्ष की स्वीकृति से अपनी बात कही, "मैं जानना चाहता हूं कि विद्वान किसको कहते हैं। क्या कोई संगीताचार्य दर्शन विद्यालय पर सम्मति दे सकता है? यही बात उन दो महापण्डितों की है। वे दर्शनशास्त्र का अ-आ भी नहीं जानते। वह संस्कृत के शास्त्रों को काला अक्षर भैंस बराबर ही समझते हैं। अतः उनका कहना कि इस योजना से कल्याण नहीं होगा, अशुद्ध था। उनको अधिकार नहीं कि वह इस योजना पर ठीक टिप्पणी करते।"

"तो कौन इसपर राय दे सकता है?"

"यह योजना देश के ग्यारह दर्शनशास्त्रियों ने बनाई थी।"

"वे जो निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य से दशांश आय भी नहीं रखते थे?"

"पर सेठजी," कीर्तिमोहन ने कहा, "किसीकी योग्यता उसके वेतन से नहीं आंकी जाती। आय भाग्य का चक्कर है।"

"भाग्यहीन की योग्यता भी दुर्भाग्य की सूचक होगी।" सूर्यप्रसाद ने हंसी-हंसी में कह दिया।

इस विवाद को बन्द कराने के लिए रामेश्वरी देवी ने कहा, "मैं चाहती हूं कि इस विषय पर पहले भी और आज भी पर्याप्त विवाद हो चुका है। यदि योजना की उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता पर बहस न कर सम्मति यह ली जाए कि जुग्गी की योजना चलानी चाहिए अथवा नहीं तो अधिक ठीक होगा।"

इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "मांजी, प्रस्ताव यह है कि दर्शन विद्यालय तो चले शेष आगे की बात विचाराधीन रखी जाए।"

"ठीक है," रामेश्वरी ने कहा, "इसपर मत लेकर निश्चय कर

लिया जाए।"

मत लिए गए। तीन मत इसके पक्ष में थे। केवल जुग्गी का मत इसके विपरीत ग्राया। पक्ष मे मत देनेवाला विष्णुसहाय, मोहिनी और सूर्यप्रसाद थे। रामेश्वरी ने कुछ भी मत नही दिया।

इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "हमने दर्शन विद्यालय की इमारत के लिए साठ हज़ार स्वीकार किया था। ग्रब भापाजी का यह प्रस्ताव ग्राया है कि लागत ग्रस्सी हज़ार तक चली जाएगी। ग्रतः मैं प्रस्ताव करता हू कि बीस हज़ार और स्वीकार किया जाए।"

किसीने ग्रापत्ति नही की और यह भी निश्चय हो गया। इसपर समिति की बैठक समाप्त हुई। रामेश्वरी ने ग्रपने कमरे मे जाकर किशोरी को बुलाया। वह ग्राई तो उससे कहा, "किशोरी, कलम-दवात और कागज लेकर एक पत्र लिखो।"

किशोरी समझ नही सकी कि किसको पत्र लिखा जा रहा है। परन्तु माजी की बातो मे मीन-मेख निकालने का स्वभाव न रखने से किशोरी उठी, ग्रपने कमरे मे गई और कलम, दवात तथा कागज़ ले ग्राई।

रामेश्वरी ने लिखाया :

" ग्रादरणीय मैंनेजर, जुग्गीमल एण्ड कम्पनी।

" मैं ग्रापकी कम्पनी की हिस्सेदारी से पृथक् होना चाहती हू। मेरा कम्पनी से लेना-देना निश्चय कर जो बनता है वह ले-दे लिया जाए। मैं ग्राज की तारीख मे यह नोटिस देती हू कि मेरा जो कुछ बनता है, उसका हिसाब और चैक तीन मास के भीतर मेरे पास खाटू भेज दिया जाए। —रामेश्वरी।"

किशोरी ने लिख तो दिया, परन्तु माजी का मुख देखती रह गई। रामेश्वरी ने लिखा पत्र उसके हाथ से लेकर हस्ताक्षर कर दिए और कहा, "जुग्गी को कहो कि ग्रपने बाबा को गाड़ी मे बैठा तनिक कलकत्ता की सैर करा दे। मैं समझ रही हू कि हम पुन: इस नगर मे ग्रानेवाले नहीं हैं।"

किशोरी देख रही थी कि मांजी बहुत नाराज़ मालूम होती हैं। इसपर भी उसने कुछ पूछा नही, और चुपचाप उठ ग्रपने कमरे मे जा ग्रपने पति से पूछने लगी "क्या हुग्रा था धर्मादा समि[illegible]?"

"इस सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो भी साधन हो वह जुटाना चाहिए।"

इसपर विष्णुसहाय का उत्तर था कि इस सामान्य योजना पर विचार करने के लिए कलकत्ता के दो प्रसिद्ध विद्वानों को बुलाया गया था और वे इस योजना को अव्यावहारिक वता गए हैं। अतः वह योजना अभी विचाराधीन है।"

"मैं कम्पनी का धन किसी भी योजना पर तव तक व्यय नहीं होने दूंगा जव तक उसकी उपयोगिता विद्वानों द्वारा मान्य न हो जाए।"

कीर्तिमोहन ने समिति के अध्यक्ष की स्वीकृति से अपनी वात कही, "मैं जानना चाहता हूं कि विद्वान किसको कहते हैं। क्या कोई संगीताचार्य दर्शन विद्यालय पर सम्मति दे सकता है? यही वात उन दो महापण्डितों की है। वे दर्शनशास्त्र का अ-आ भी नहीं जानते। वह संस्कृत के शास्त्रों को काला अक्षर भैंस वरावर ही समझते हैं। अतः उनका कहना कि इस योजना से कल्याण नहीं होगा, अशुद्ध था। उनको अधिकार नहीं कि वह इस योजना पर ठीक टिप्पणी करते।"

"तो कौन इसपर राय दे सकता है?"

"यह योजना देश के ग्यारह दर्शनशास्त्रियों ने वनाई थी।"

"वे जो निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य से दशांश आय भी नहीं रखते थे?"

"पर सेठजी," कीर्तिमोहन ने कहा, "किसीकी योग्यता उसके वेतन से नहीं आंकी जाती। आय भाग्य का चक्कर है।"

"भाग्यहीन की योग्यता भी दुर्भाग्य की सूचक होगी।" सूर्यप्रसाद ने हंसी-हंसी में कह दिया।

इस विवाद को वन्द कराने के लिए रामेश्वरी देवी ने कहा, "मैं चाहती हूं कि इस विषय पर पहले भी और आज भी पर्याप्त विवाद हो चुका है। यदि योजना की उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता पर वहस न कर सम्मति यह ली जाए कि जुग्गी की योजना चलानी चाहिए अथवा नहीं तो अधिक ठीक होगा।"

इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "मांजी, प्रस्ताव यह है कि दर्शन विद्यालय तो चले शेप आगे की वात विचाराधीन रखी जाए।"

"ठीक है," रामेश्वरी ने कहा, "इसपर मत लेकर निश्चय कर

लिया जाए।"

मत लिए गए। तीन मत इसके पक्ष में थे। केवल जुग्गी का मत इसके विपरीत आया। पक्ष मे मत देनेवाला विष्णुसहाय, मोहिनी और सूर्यप्रसाद थे। रामेश्वरी ने कुछ भी मत नही दिया।

इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "हमने दर्शन विद्यालय की इमारत के लिए साठ हजार स्वीकार किया था। अब भापाजी का यह प्रस्ताव आया है कि लागत अस्सी हजार तक चली जाएगी। अतः मैं प्रस्ताव करता हू कि बीस हज़ार और स्वीकार किया जाए।"

किसीने आपत्ति नही की और यह भी निश्चय हो गया। इस-पर समिति की बैठक समाप्त हुई। रामेश्वरी ने अपने कमरे मे जाकर किशोरी को बुलाया। वह आई तो उससे कहा, "किशोरी, कलम-दवात और कागज़ लेकर एक पत्र लिखो।"

किशोरी समझ नही सकी कि किसको पत्र लिखा जा रहा है। परन्तु माजी की बातों में मीन-मेख निकालने का स्वभाव न रखने से किशोरी उठी, अपने कमरे मे गई और कलम, दवात तथा कागज ले आई।

रामेश्वरी ने लिखाया :

"आदरणीय मैनेजर, जुग्गीमल एण्ड कम्पनी।

"मैं आपकी कम्पनी की हिस्सेदारी से पृथक् होना चाहती हू। मेरा कम्पनी से लेना-देना निश्चय कर जो बनता है वह ले-दे लिया जाए। मैं आज की तारीख मे यह नोटिस देती हूं कि मेरा जो कुछ बनता है, उसका हिसाब और चैक तीन मास के भीतर मेरे पास धादू भेज दिया जाए। —रामेश्वरी।"

किशोरी ने लिख तो दिया, परन्तु मांजी का मुख देखती रह गई। रामेश्वरी ने लिखा पत्र उसके हाथ से लेकर हस्ताक्षर कर दिए और कहा, "जुग्गी को कहो कि अपने बाबा को गाड़ी मे बैठा तनिक कलकत्ता की सैर करा दे। मैं समझ रही हूं कि हम पुन. इस नगर मे आनेवाले नही हैं।"

किशोरी देख रही थी कि मांजी बहुत नाराज़ मालूम होती हैं। इसपर भी उसने कुछ पूछा नही, और चुपचाप उठ अपने कमरे में जा अपने पति से पूछने लगी "क्या हुआ था धर्मादा समिति में ?"

"किशोरी, काल की गति है। शब्दों के अर्थ बदल रहे हैं और वे मानव-स्वभाव में परिवर्तन के सूचक हैं। हम बूढ़े लोग स्वभाव नहीं बदल सकते, इस कारण हमारी भाषा भी नहीं बदल रही।"

किशोरी इस उक्ति का अर्थ समझ नहीं सकी। उसने कहा, "मांजी बहुत नाराज़ मालूम होती हैं। जीवन में पहली बार मैंने उनको ऐसी मानसिक अवस्था में देखा है। और आप बच्चों की भांति बुझारतें कहने में लगे हैं।"

"क्या कहा है उन्होंने?" जुग्गीमल ने गम्भीर हो पूछ लिया।

"उन्होंने फर्म के मैनेजर के नाम एक पत्र लिखाया है कि वे फर्म में भागीदार नहीं रहना चाहतीं।"

"तो इसमें विचित्र बात क्या है? मैंने जब मैनेजरी छोड़ी थी तो ऐसी सम्भावना का विचार करके ही छोड़ी थी।"

"तो विष्णु मांजी से लड़ पड़े हैं क्या?"

"नहीं श्रीमती, यह जुग्गीमल एण्ड सन्स की फर्म मांजी से लड़ पड़ी है। सदस्यों की पिछली वार्षिक सभा में जब मैंने लोगों की रुचि अपने विपरीत देखी तो मैंने धर्मादा के काम का बहाना बना कम्पनी की मैनेजरी छोड़ दी। सदस्यों की अपने में अरुचि तो मेरे काम से अरुचि थी और मेरे काम का उद्देश्य था धर्मादा का कार्य। मैं समझ रहा था धर्मादा के काम में भी विरोध उठेगा।

"उस विरोध का श्रीगणेश उस दिन हुआ जब उन ग्यारह पण्डितों को जो वेदशास्त्र के ज्ञाता थे, धर्मादा के कार्य से पृथक् कर तीन ऐसे लोगों की समिति बनाई गई जिनको धर्मशास्त्र का ज्ञान ही नहीं था। मैं तो तब ही समझ गया था कि बात बिगड़नेवाली है। मैंने पण्डित कीर्ति-मोहन, जो पण्डितों की सभा के संयोजक थे, को इस समिति में रखने को कहा था। मेरा आग्रह था कि पण्डितों की समिति के भावों को पण्डित कीर्तिमोहन जानते हैं, अतः उनका इस नई समिति में रहना आवश्यक है। इसपर मोहिनी ने कहा कि इस नई समिति में तीन से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिए। मैंने कीर्तिमोहन पर बल दिया तो विष्णु ने अपने तीन नामों में से निरंजन सेन का नाम निकाल दिया। अन्य दो, पिछली बार समिति को यह कहकर छोड़ गए थे कि हमारी योजना अव्यावहारिक है और यह चल नहीं सकेगी। उन्हींके कथन

का आश्रय ले आज विष्णु ने पूर्ण योजना को अमान्य कर दिया है। बनारस के दर्शन विद्यालय को अभी रहने दिया गया है। परन्तु यह भी जाएगा। कारण यह कि योजना तो आरम्भ से अन्त तक जुड़ी हुई है। यदि योजना के पाव रखकर शेष ऊपर का भाग काट दिया जाए, तो पाव भी मरेंगे। वे जीवित नही रह सकते।

" माजी की रुचि हमारी कम्पनी मे इस धर्मकार्य के लाभ के कारण ही थी। जब यह नही रहा तो फिर उनकी व्यापार मे रुचि कैसे हो सकती है ? "

"और आपकी अब क्या रुचि है ?"

"मेरी रुचि अब केवल इतनी है कि यह फर्म दिन-रात एक कर निर्माण की है, इसको विनष्ट न होने दूं।"

"पर माताजी ने एक दिन यह भी तो कहा था कि व्यापार उद्देश्य नही। यह साधन है किसी अन्य उद्देश्य का। जब उद्देश्य ही नहीं रहा तो साधन को पकडे रखने का क्या मतलब है ?"

"देखो किशोरी, मैं यही कह रहा था कि शब्दों के अर्थ बदल रहे हैं। इन अर्थो के बदलने मे मानव-प्रवृत्तियों का बदलना है। अब धर्म, उद्देश्य एवं कल्याण इत्यादि शब्दों के अर्थ बदले हैं। कारण यह कि हमारी प्रवृत्ति चेतना को छोड़ जड़ता को स्वीकार कर बैठी है। उद्देश्य चेतनस्वरूप परमात्मा मे लीन होने के स्थान पर जड़ जगत् मे लीन होने की ओर हो रही है।"

एकाएक किशोरी को स्मरण आया कि मांजी ने बाबाजी को कलकत्ता की सैर कराने के लिए कहा था। उसने जुग्गीमल को माजी का सन्देश सुना दिया।

"हो जाएगा," जुग्गीमल ने कहा, "मैं समझता हूं कि हमको भी अब कुछ देर के लिए गाव में चलकर रहना चाहिए।"

"सत्य ? यह सुमति आपको माजी ने दी है क्या ?"

"मुख से तो नही कहा। परन्तु मैं समझता हूं कि उनकी आत्मा यह कह रही है।"

"तो ऐसा करिए, यहां का सब काम समेट कर चलिए, जिससे पुनः यहां आकर टिकने में रुचि न रहे।"

"अर्थात् मांजी की भांति मैं भी फर्म को छोड़ दूं ?"

"हां ।"

किशोरी की इस वात को सुन जुग्गीमल पत्नी का मुख देखता रह गया । फिर कुछ विचार कर पूछने लगा, "यह मांजी ने कहा है क्या ?"

"जी नहीं । मैं जिस विश्वास से इस नगर में आई थी, वह शिथिल पड़ रहा है । इस नगर में न तो विश्वास रहा है न ही यहां रहने की लालसा रही है ।"

"अच्छा, विचार करूंगा ।"

"आप ऐसा करिए । मुझे अभी मांजी के साथ गांव भेज दीजिए । आप वाद में विचार कर निश्चय कर लीजिएगा ।"

"मैं अपने पांव तले से मिट्टी खिसकती अनुभव कर रहा हूं ।"

"तव ठीक है, आप भी वहां चले आइएगा । कलकत्ता तो हुगली की रेत पर वना है और हमारा खाटू पत्थर की चट्टान पर है । वहां मन के महल वनाएंगे तो सुदृढ़ नींव पर होंगे ।"

"तो फिर वहां भी महल वनाना होगा ?"

"तो रहेंगे कहां पर ?"

जुग्गीमल समझ गया कि किशोरी ठीक कह रही है । आरम्भ से ही यह दोनों मांजी से युक्तियों में वातें करने का अभ्यास वना चुके थे और उन युक्तियों से वे अपने अन्तर्मन की भावनाओं को व्यक्त किया करते थे ।

६

रामेश्वरी ने अपना पत्र रजिस्टर्ड डाक से जुग्गीमल एण्ड सन्स के मैनेजर विष्णुसहाय के पास भेज दिया । यह जाने से कुछ ही घण्टे पूर्व डाकखाने में रजिस्ट्री कराया गया था । पत्र पहुंचने की स्वीकारोक्ति खाटू के पते पर मंगवाई गई थी ।

रामेश्वरी, वनवारीलाल और किशोरी और इनके साथ रामेश्वरी का नौकर नन्दू गांव जाने के लिए स्टेशन पर पहुंचे तो परिवार के वे सव लोग जो कलकत्ता में थे, उनको विदा करने स्टेशन पर पहुंचे थे । मांजी को विष्णु ने विदा होने से पूर्व यह आश्वासन दिया

कि फर्म के धर्मादा मे रखा धन, जो पिचानवे लाख के लगभग हो गया है, शीघ्र ही व्यय करने की योजना बनेगी।

रामेश्वरी ने कहा, "ठीक है। भगवान तुम सबका कल्याण करेंगे।"

जुग्गीमल सबसे पीछे गम्भीर मुद्रा मे प्लेटफार्म पर खड़ा था। जब गाडी छूटी तो उसने गाडी की खिडकी के समीप पहुच किशोरी से कहा, "मैं भी जल्दी ही आऊगा।"

"अपनी बात पर विचार कर लीजिए।"

"कर लिया है।" उसने अपनी माजी को हाथ जोड लिए और गाड़ी चल पडी।

अगले दिन विष्णु को तीन रजिस्टर्ड नोटिस मिले। एक तो रामेश्वरी देवी का था। दूसरा जुग्गीमल और तीसरा किशोरी का था। *गजाधर तथा उसकी पत्नी का नोटिस पहले ही मिल चुका* था। चारो के अक्षर भिन्न-भिन्न थे परन्तु भाव एक ही था। सबमे यही लिखा था कि हम फर्म मे पत्तीदार नही रहना चाहते।

विष्णु ने चारों नोटिस व्यावसायिक समिति मे उपस्थित कर दिए। इस समिति में विष्णुसहाय, मोहिनी, सूर्यप्रसाद, माधवप्रसाद और कृष्णकुमार थे।

समिति में माधवप्रसाद ने कहा, "इस फर्म की सस्थापक सदस्य थी बडी माजी और भापा। ये दोनो छोड रहे हैं तो इस विषय को सदस्यो की बड़ी सभा मे उपस्थित करना चाहिए।"

विष्णुसहाय ने कहा, "मैं इसकी आवश्यकता नही समझता। यह एक स्वाभाविक कर्म है। बड़े छोटो के लिए स्थान छोड़ने रहते हैं।"

"परन्तु इनमें एक छोटा भी है। गजाधर तो अभी आनेवाली पीढ़ी का है।"

"उसकी मति उसकी सुन्दर पत्नी ने विचलित कर रखी है।"

"देखो विष्णु, मैं इस सबमे किसी कल्याण की आशा नही देखता। इसलिए कहता हूं कि इनके त्यागपत्रो पर किसी प्रकार का निर्णय लेने से पूर्व यह बात फर्म की बड़ी समिति में उपस्थित करने और उनपर विचार करने का प्रस्ताव करता हू।"

"इसपर मत लिए जाएं," मोहिनी ने कहा।

"तो फिर ऐसा करो। चार के स्थान पर पांच पर मत लेने होंगे।

"हां।"

किशोरी की इस बात को सुन जुग्गीमल पत्नी का मुख देखता रह गया। फिर कुछ विचार कर पूछने लगा, "यह मांजी ने कहा है क्या ?"

"जी नहीं। मैं जिस विश्वास से इस नगर में आई थी, वह शिथिल पड़ रहा है। इस नगर में न तो विश्वास रहा है न ही यहां रहने की लालसा रही है।"

"अच्छा, विचार करूंगा।"

"आप ऐसा करिए। मुझे अभी मांजी के साथ गांव भेज दीजिए। आप बाद में विचार कर निश्चय कर लीजिएगा।"

"मैं अपने पांव तले से मिट्टी खिसकती अनुभव कर रहा हूं।"

"तब ठीक है, आप भी वहां चले आइएगा। कलकत्ता तो हुगली की रेत पर बना है और हमारा खाटू पत्थर की चट्टान पर है। वहां मन के महल बनाएंगे तो सुदृढ़ नींव पर होंगे।"

"तो फिर वहां भी महल बनाना होगा ?"

"तो रहेंगे कहां पर ?"

जुग्गीमल समझ गया कि किशोरी ठीक कह रही है। आरम्भ से ही यह दोनों मांजी से युक्तियों में बातें करने का अभ्यास बना चुके थे और उन युक्तियों से वे अपने अन्तर्मन की भावनाओं को व्यक्त किया करते थे।

६

रामेश्वरी ने अपना पत्र रजिस्टर्ड डाक से जुग्गीमल एण्ड सन्स के मैनेजर विष्णुसहाय के पास भेज दिया। यह जाने से कुछ ही घण्टे पूर्व डाकखाने में रजिस्ट्री कराया गया था। पत्र पहुंचने की स्वीकारोक्ति खाटू के पते पर मंगवाई गई थी।

रामेश्वरी, बनवारीलाल और किशोरी और इनके साथ रामेश्वरी का नौकर नन्दू गांव जाने के लिए स्टेशन पर पहुंचे तो परिवार के वे सब लोग जो कलकत्ता में थे, उनको विदा करने स्टेशन पर पहुंचे थे। मांजी को विष्णु ने विदा होने से पूर्व यह आश्वासन दिया

कि फर्म के धर्मादा मे रखा धन, जो पिचानवे लाख के लगभग हो गया है, शीघ्र ही व्यय करने की योजना बनेगी।

रामेश्वरी ने कहा, "ठीक है। भगवान तुम सबका कल्याण करेंगे।"

जुग्गीमल सबसे पीछे गम्भीर मुद्रा में प्लेटफार्म पर खड़ा था। जब गाड़ी छूटी तो उसने गाड़ी की खिड़की के समीप पहुंच किशोरी से कहा, "मैं भी जल्दी ही आऊंगा।"

"अपनी बात पर विचार कर लीजिए।"

"कर लिया है।" उसने अपनी माजी को हाथ जोड़ लिए और गाड़ी चल पड़ी।

अगले दिन विष्णु को तीन रजिस्टर्ड नोटिस मिले। एक तो रामेश्वरी देवी का था। दूसरा जुग्गीमल और तीसरा किशोरी का था। गजाधर तथा उसकी पत्नी का नोटिस पहले ही मिल चुका था। चारो के अक्षर भिन्न-भिन्न थे परन्तु भाव एक ही था। सबमें यही लिखा था कि हम फर्म मे पत्तीदार नही रहना चाहते।

विष्णु ने चारो नोटिस व्यावसायिक समिति मे उपस्थित कर दिए। इस समिति मे विष्णुसहाय, मोहिनी, सूर्यप्रसाद, माधवप्रसाद और कृष्णकुमार थे।

समिति मे माधवप्रसाद ने कहा, "इस फर्म की सस्थापक सदस्य थी बड़ी माजी और भापा। ये दोनो छोड़ रहे हैं तो इस विषय को सदस्यो की बडी सभा मे उपस्थित करना चाहिए।"

विष्णुसहाय ने कहा, "मैं इसकी आवश्यकता नही समझता। यह एक स्वाभाविक कर्म है। बड़े छोटो के लिए स्थान छोड़ते रहते हैं।"

"परन्तु इनमें एक छोटा भी है। गजाधर तो अभी आनेवाली पीढ़ी का है।"

"उसकी मति उसकी सुन्दर पत्नी ने विचलित कर रखी है।"

"देखो विष्णु, मैं इस सबमें किसी कल्याण की आशा नहीं देखता। इसलिए कहता हूं कि इनके त्यागपत्रो पर किसी प्रकार का निर्णय लेने से पूर्व यह बात फर्म की बड़ी समिति मे उपस्थित करने और उनपर विचार करने का प्रस्ताव करता हू।"

"इसपर मत लिए जाए," मोहिनी ने कहा।

"तो फिर ऐसा करो। चार के स्थान पर पांच पर मत लेने हा

मैं भी इस काम-धन्धे को छोड़ने का नोटिस देता हूं," माधवप्रसाद ने कहा।

इसपर सूर्य ने कहा, "पिताजी, आप भी लिखित नोटिस दीजिए। तब उसपर विचार किया जाएगा।"

सूर्य माधवप्रसाद का अपना बड़ा लड़का था। उसे अपने लड़के को ही युक्तियुक्त बात का विरोध करते देख क्रोध आ गया। वह उठ पड़ा, "ठीक है, आपको नियमित नोटिस दे दूंगा। इसी कारण मैं अब इस समिति में बैठने का कोई अधिकार नहीं रखता।"

इतना कहकर वह फर्म के कार्यालय से बाहर निकल गया। इसपर विष्णुसहाय ने कहा, "मैं समझता हूं। अभी समिति में चार सदस्य हैं। इस कारण समिति का काम तो तीन से भी चल सकता है।"

कृष्ण ने कहा, "अभी इन त्यागपत्रों पर विचार स्थगित कर अन्य कोई आवश्यक कार्य हो तो उसपर विचार किया जाए। माधवजी का भी त्यागपत्र आ जाए तो सबपर एकदम विचार कर लेंगे।"

"ठीक है" विष्णुसहाय ने त्यागपत्रों को फाइल में रख दिया। "अब सुमेर की एक योजना है। वह विचार के लिए उपस्थित करता हूं।" सुमेर की योजना सब सदस्यों के पास लिखकर भेजी जा चुकी थी और उसपर विचार उपस्थित किया जाना स्वाभाविक ही था।

योजना यह थी कि फर्म की एक शाखा न्यूयार्क में खोली जाए। उसका दस लाख रुपया वहां बैंकों में जमा है, उसके बल पर कारोबार चलाया जाए। कारोबार यह होगा कि वहां से मशीनें खरीदकर हिन्दुस्तान भेजी जाएं। यहां उनकी बिक्री का प्रबन्ध किया जाए। सुमेर न्यूयार्क जाकर रहना चाहता था।

कृष्ण ने कहा, "इसके बाप ने फर्म का सत्तर लाख रुपया गबन किया था, वह अभी तक वसूल नहीं किया जा सका। अब सन्तराम के लड़के को फर्म के काम पर लगाया जाए, यह मुझे पसन्द नहीं।"

विष्णुसहाय ने कहा, "लड़के का पिता के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। सेठ जुग्गीमलजी ने लड़के को पिता से अलग माना था और उसे सिंगापुर में कारोबार स्थापित करने में सहायता की थी। अब भी पिता और पुत्र पृथक्-पृथक् हैं।"

"मैं इस योजना का विरोध करता हूं," कृष्ण का कहना था।

इसपर भी तीन की सम्मति से योजना स्वीकार हो गई और इसके लिए यह निश्चय हो गया कि विष्णुसहाय सुमेर से मिले और शर्त निश्चय करे। पुन: उसे कारोबारी समिति मे उपस्थित करे।

व्यावसायिक समिति की बैठक समाप्त होने पर विष्णुसहाय त्यागपत्रो पर जानकारी प्राप्त करने के लिए जुग्गीमल के घर जा पहुंचा। जुग्गीमल अपना सामान बांध रहा था। उसका बिस्तर और सूटकेस तो बंधा रखा था। इस समय वह अपने कमरे मे बिखरे सामान को एकत्रित कर ताले लगा रहा था। विष्णु ने वहा पहुंचते ही पूछा, "भापा, कहा की तैयारी हो रही है?"

"मैं बनारस जा रहा हू।"

"अभी तो परसो वहा से आए है, इतनी जल्दी जाने की क्या आवश्यकता पड गई है?"

"मेरा अब यहा कुछ काम रहा नही। इस कारण अपना निवास-स्थान काशीजी ही बनाकर रहने का विचार कर रहा हू। अब वहां कोई उचित मकान लेने के लिए जा रहा हू।"

"पर भापा, आपने फर्म से अपनी सदस्यता छोडने का निश्चय क्यो किया?"

"मेरा पत्र मिल गया है?"

"इसीलिए तो पूछ रहा हू।"

"कारण तो स्पष्ट है। आपका काम करना छोड अब योग की ओर चल पड़ा हू।"

"पर भापा, आपके साथ बडी माजी और किशोरी का भी कारोबार से पृथक् होने का नोटिस मिला है।"

"माजी का तो मुझे पता है। परन्तु किशोरी का पता नही।"

"गजाधर और उसकी पत्नी का तो पहले ही आ चुका है।"

"तो पांच हो गए छोडनेवाले?"

"माधवप्रसाद ने भी त्यागपत्र देने की धमकी दी है।"

"पर वे तो व्यावसायिक समिति मे हैं। क्या आज वे आए नही?"

"आए थे, पर रूठकर चले गए हैं।"

"क्यो रूठ गए हैं?"

"वे चाहते थे कि आपके त्यागपत्र सब सदस्यों की बडी सभा

में उपस्थित होने चाहिए।"

"इसमें कोई युक्ति तो है नहीं।"

"उनकी युक्ति यह थी कि आप फर्म के मूल पुरुष थे। बड़ी मांजी की भी स्थिति विशेष है। अतः आपके त्यागपत्र बड़ी सभा में उपस्थित कर ही स्वीकार करने चाहिए।"

"तो व्यावसायिक समिति ने यह स्वीकार नहीं किया?"

"इतना स्वीकार हुआ है कि आपके त्यागपत्रों पर भी अभी विचार न किया जाए। जब माधवप्रसादजी का त्यागपत्र आ जाए तो सबपर इकट्ठे ही विचार कर लिया जाएगा।"

"यह तो ठीक नहीं हुआ।"

"क्या ठीक नहीं हुआ?"

"यही कि इस साधारण-सी बात के लिए बड़ी सभा बुलाने की आवश्यकता अनुभव हुई है और फिर व्यावसायिक कमेटी ने यह स्वीकार किया नहीं।"

"पर भापा, मुझे कुछ ऐसा पता चला है कि मांजी यह सब उपद्रव कर रही हैं।"

"यह किस प्रकार पता चला?"

"पता नहीं चला। यह मेरा अनुमान है।"

"तो पता करो। विष्णुजी, उपद्रव एक गम्भीर आरोप है और इसका पता करना चाहिए।"

"मेरा यह भी अनुमान है कि आपको भी मांजी ने त्यागपत्र देने के लिए कहा है।"

"यह अनुमान तो आपका गलत है। मांजी ने किशोरी को कुछ कहा हो तो मैं नहीं जानता। कम से कम किशोरी ने मुझे कुछ नहीं बताया।"

"दादीजी का बड़ी मांजी के साथ चला जाना ही यह प्रकट करता है कि दोनों ने एक राय होकर नोटिस दिए हैं।"

"यह तो विष्णुजी उनसे पता करना। मैं अपने विषय में ही बता सकता हूं कि मैंने यह कार्य स्वतन्त्र रूप से विचार कर किया है।"

"आप अपना विचार बदल लें तो फर्म को बहुत सुविधा रहेगी।"

"बहुत कठिन है। जीवन-कार्य को बदलना पड़ेगा।"

"परन्तु इससे तो बनारस के विद्यालय का कार्य चलने में कठिनाई हो जाएगी।"

"क्या कठिनाई होगी ?"

"उसके चालू खर्च के लिए धन मिलना कठिन हो जाएगा और आपके अतिरिक्त कार्य करनेवाला हममें कोई है नहीं।"

"यह सब बात विचारणीय है। परन्तु क्या मेरा फर्म में भागीदार बने रहने का इस फर्म से धन मिलने में कोई सम्बन्ध है ?"

"सम्बन्ध स्वाभाविक ही है। जो जिस कार्य में रुचि लेता है यदि वही न रहे तो रुचि कम हो जानी स्वाभाविक ही है।"

"तो ऐसा करिए, यह सब बात व्यावसायिक समिति में विचार कर मुझे लिख दीजिए, जिससे मैं अपने नोटिस पर पुनरावलोकन करने पर बाध्य हो जाऊं।"

"गजाधर आपके प्रभाव में है। उसका काम मद्रास में बहुत अच्छा था। एकाएक उसने एक मास की छुट्टी मांगी। छुट्टी दी तो वह यहां चला आया और यहां से दार्जिलिंग जाकर नोटिस भेज दिया।"

"उसपर अपने प्रभाव को मैं जानता नहीं। हां, यदि वह मेरे रहते यहां आया तो मैं उससे इस विषय पर बातचीत करूंगा।"

"मैंने उसे तार देकर यहां बुलाया है और मैं चाहता हूं कि जाने से पूर्व आप उससे मिल लें।"

"देखिए, यत्न करूंगा। वैसे मेरा कल जाने का विचार था। कहते हो तो एक-दो दिन और ठहर जाता हूं।"

विष्णुसहाय को माधवप्रसाद के फर्म छोड़ने का नोटिस मिला तो माधवप्रसाद के पुत्र सूर्यप्रसाद का व्यावसायिक समिति से त्यागपत्र मिल गया। उसने लिखा था कि वह इस समिति में कार्य नहीं कर सकता।

विष्णुसहाय अपनी माता मोहिनी के पास पहुंचा तो उसने कहा, "मैं समझती हूं कि ठीक ही हो रहा है। इतना बड़ा काम, जिसमें पन्द्रह-सोलह करोड़ प्रतिवर्ष का व्यापार होता है, एक नियन्त्रण में न रहने-वाली बात होती जा रही है।"

"तो इसको टूटने दूं ?"

"इन चार लोगों के छोड़ने से तो यह टूटेगी नहीं।"

विष्णुसहायने मुस्कराते हुए कहा, "तो आपका अभिप्राय है कि कुछ और त्यागपत्र मंगवा लूं।"

"देखो विष्णु, बड़ी सभा बुला लो। उसमें बड़ी माताजी का नोटिस उपस्थित कर दो। इसपर बहुत लोग छोड़ देंगे। बस फिर फर्म टूट जाएगी।

"सब अपना-अपना काम करेंगे। हम भी कोई काम कर लेंगे।"

"पर मां! इसमें तुमको क्या कष्ट हो रहा है?"

"मैं यह देख रही हूं कि मेहनत तो तुम करते हो और लाभ घर के बहत्तर प्राणी उठा रहे हैं।

"तीस के लगभग तो पत्तीदार हैं। इनमें सोलह-सत्रह ही तो कर्मचारी हैं। शेष तो घर बैठे ही खाते हैं।"

विष्णुसहाय, जो इङ्गलैण्ड में रहता हुआ अधकचरा समाजवादी हो आया था, कुछ इसी ढंग पर समझने लगा था। यद्यपि वह स्वयं भी लाखों रुपयों का लाभ उठा रहा था और उसकी मां मोहिनी और पिता रामस्वरूप भी काम नहीं करते थे। मोहिनी जब से पैदा हुई थी, तब से ही जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म के लाभ का उपयोग कर रही थी। बचपन में भत्ते के रूप में और विवाह होने पर पत्तीदार के रू[p] में। उसका पति विवाह के समय सट्टे के बाज़ार के उतार-चढ़ाव में तैरता-डूबता जीवन निकाल रहा था। विवाह के समय उसे भी फर्म का पत्तीदार बना लिया गया और उसे सट्टे का स्वाद विस्मृत हो गया। इसपर भी उसने फर्म का कर्मचारी बनना स्वीकार नहीं किया।

मोहिनी को अपने और अपने पति के बिना काम किए लाख रुपयों का लाभ लेने से तो संकोच हुआ नहीं, परन्तु परिवार के कु[छ] अन्य सदस्यों को बिना किसी प्रकार का परिश्रम का लाभ लेते दे[ख] दुःख होने लगा था।

विष्णुसहाय से भी जब मोहिनी ने यह कहा कि शेष घर [के] ही लाभ में भाग लेते हैं तो उसे भी अपने घर के लोगों का पता नहीं चल[ा।] उसकी दूसरों के लड़के-बहुओं और दामादों पर ही नज़र गई। उ[सने] कहा, "ठीक है। इन हरामखोरों को निकाल बाहर करूंगा।"

गजाधर दार्जिलिंग गया तो वहा आराम से रहते हुए उसने अपना हिसाव-किताव देखा। उसके अपने पास इस समय दस लाख नकद हो गया था। साथ ही कम्पनी के सरक्षित खाते मे और पूंजी में उसका बत्तीसवां भाग था। इतना ही उसकी पत्नी का था। सब मिलाकर वे दोनों तीस लाख के मालिक थे। इनको यह समझ आया था कि सादा जीवन व्यतीत करें तो तीन-चार सौ रुपये मासिक मे वे आनन्द से रह सकते हैं। शेष रुपया किसी कारखाने के हिस्से मे लगा दें और अपना जीवन सामाजिक सेवा मे व्यतीत करें।

इसी विचार से उन्होंने त्यागपत्र भेजे थे। उसे विष्णु का तार आया परन्तु वह पन्द्रह दिन दार्जिलिंग मे रहकर ही कलकत्ता वापस लौटा। उसका विचार था कि अभी बडी माजी वही होंगी। पिछले पाच मास से वे वहा पड़ी थी। परन्तु कलकत्ता मे पहुच उनको पता लगा कि बड़े सेठजी, बडी माजी और दादी तो गाव चली गई हैं और बाबा, छोटे सेठ, कलकत्ता मे उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

गजाधर सामान उठवा फर्म की ऊपरी मंज़िल पर बाबा के कमरे में पहुचा तो उसको बन्द पा वह चौकीदार से, जो उसका सामान उठाए ऊपर आया था, पूछने लगा, "सीताराम, सेठानीजी कहा हैं?"

"बाबू साहब, आपके लिए कमरे खुले हैं। सेठजी कहीं घूमने के लिए गए हैं। वे आजकल प्राय दक्षिणेश्वर जाया करते हैं। सेठानीजी बड़ी माजी के साथ गाव चली गई हैं।"

गजाधर समझने लगा था कि सेठ, उसके बाबा, फर्म के कारोबार से सर्वथा पृथक् हो गए हैं। इसी कारण समय निकालने के लिए दक्षिणेश्वर चले जाते होंगे। वे पति-पत्नी अपने कमरो में गए और अभी यात्रा की थकावट ही दूर कर रहे थे कि जुग्गीमल ने कमरे के बाहर से आवाज़ दे दी, "गजाधर, आ गए हो।"

गजाधर उठकर बाहर आ गया और बाबा के चरण स्पर्श कर उनको भीतर ले गया।

"भापा, माजी गाव चली गई हैं?"

"हां।"

"और आप नहीं गए ?"

"मैं भी जानेवाला था परन्तु यहां कारोबार में भूचाल आ गया है और सब कुछ टूट-फूटकर टूक-टूक होता दिखाई दे रहा है।"

"क्या हुआ है ?"

"तुमने फर्म छोड़ने का नोटिस दिया है। बड़ी मां और तुम्हारी दादी ने भी त्यागपत्र का नोटिस दे दिया है। उसके उपरान्त मैंने भी अपना विचार छोड़ने का लिख दिया है। मेरे पीछे माधव और सूर्य ने त्यागपत्र दे दिए। अब सुना है कि तुम्हारे पिता के रंगून से और बम्बई, कानपुर से भी इसी प्रकार के त्यागपत्र आए हैं। अगले सोमवार को बड़ी सभा बुलाई गई है और उसमें वे सब विचारणीय त्यागपत्र उपस्थित होंगे। पहले तो मैं इस विचार से ठहरा था कि सबको समझा-बुझाकर फर्म के चलते रहने के लिए यत्न करूंगा। परन्तु अब विचार बदल गया है और मैं चाहता हूं कि फर्म बन्द कर उसपर रिसीवर बैठा दूं।"

"यह तो बहुत ही भयंकर समाचार है, भापा !"

"है भी और नहीं भी है।"

"दोनों किस प्रकार ?"

"देखो गजाधर, मांजी इस कारोबार में रुचि ले रही थीं तो केवल धर्मकार्य में व्यय करने के लिए। जब उन्होंने देखा कि व्यापार की मुख्य बात ही विलुप्त हो रही है तो उनकी व्यापार में रुचि नहीं रही। वे इस फर्म को छोड़कर क्या करेंगी, मैं यह नहीं जानता।

"किशोरी ने त्यागपत्र क्यों दिया है यह भी मैं नहीं जानता। सम्भव है, वह भी मांजी के विचार से सहमत हो गई हो। जाने से पूर्व उसने अपने त्यागपत्र के विषय में मुझे बताया नहीं था।

"माधवप्रसाद और सूर्यप्रसाद ने तो विष्णु के व्यवहार से रुष्ट होकर त्यागपत्र दिया है। रही बात तुम्हारे पिता इत्यादि के छोड़ने की। वह तो वे स्वयं ही बता सकेंगे।"

"भापा, मैं अपनी बात बताता हूं। मैं अभी मद्रास में ही था कि विष्णुजी का एक पत्र आया कि बम्बई में खटाऊजी मिल्ज का कारोबार बिक रहा है, हमें उसे ले लेना चाहिए। मैं बम्बई जाकर उनसे बात करूं।

"मैं बम्बई गया। पता चला कि खटाऊजी की तीन मिलें हैं। तीनों बिक रही हैं। पूछ-ताछ करने पर पता चला कि तीनों मिलों पर पन्द्रह लाख रुपया लागत लगी है। परन्तु युद्ध के कारण बढ़े हुए दाम हो गए हैं अस्सी लाख रुपये। साथ ही मिलों के स्पेयर पार्ट्स के दाम तो बहुत ही अधिक हो गए हैं। इङ्गलैण्ड से स्पेयर पार्ट्स आ नहीं रहे। स्वेज के बन्द हो जाने के कारण और एटलांटिक में जर्मन पनडुब्बियों की तबाही के कारण यह हुआ है। अमेरिका से स्पेयर पार्ट्स आ रहे हैं परन्तु वे उतना अच्छा काम नहीं करते जितना अंग्रेजी सामान करता था।

"इस कारण मैंने अपनी सम्मति यह भेजी कि इस समय इन मिलों को नहीं लेना चाहिए। युद्ध के उपरान्त नई मिलें लगवानी चाहिए। परन्तु सम्मति के विपरीत वे मिलें अस्सी लाख पचहत्तर हजार में खरीद ली गईं। मुझे किसीने यह बताया कि विष्णु को इस व्यापार में रिश्वत दी गई है। पांच लाख उसको मिला है। इस सूचना की जांच की जा सकती थी। परन्तु मैंने व्यर्थ की मगजपच्ची करने से पहले विष्णुजी से बात करनी चाही।

"मैं कारोबार से छुट्टी ले यहां आ गया। एक दिन उनसे बात हुई तो उन्होंने यह कहा कि यह पारिवारिक व्यवसाय अव्यावहारिक नियमों पर चल रहा है। इसमें बहुत-से लोग हैं जो काम कुछ नहीं करते और बड़े-बड़े लाभ डकार रहे हैं। मैं उन सबको निकाल बाहर करना चाहता हूं।

"विष्णुजी की इस बात का रहस्य समझने में मैं उनके विपरीत रिश्वत की जांचवाली बात भूल गया। उनके पूर्ण वार्तालाप पर दार्जिलिंग में बैठ मैं विचार करता रहा हूं और इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि विष्णुजी स्वयं अयोग्य व्यापारी हैं और अपनी अयोग्यता को छिपाने के लिए योग्य लोगों के विधि-विधान में दोष निकालने लगे हैं।

"हमारा परिवार है। सब एक ही मूल से उत्पन्न हुए हैं और जैसे माता-पिता बच्चों के किसी प्रकार के लाभदायक काम न करने पर भी उनको खाने-पीने को देते हैं वैसे ही परिवार के पुरखा ने भी यह विधि-विधान बनाया है कि घर के योग्य सदस्यों की योग्यता का फल

परिवार के प्रत्येक सदस्य को मिले। जैसे पेड़ का मूल भूमि से भोजन खींचता है और पेड़ के पत्ते-पत्ते तक उस भोजन को पहुंचाता है। यही मैं इस पारिवारिक व्यवसाय में हो रहा देख रहा था।

"विष्णुजी ने यह कहा था कि काम न करनेवालों को निकाल बाहर कर देंगे। इसका मैंने यह अर्थ निकाला कि वे हमारे परिवार के रीति-रिवाज का उल्लंघन करनेवाले हैं। अतः मुझे उससे पृथक् हो जाना चाहिए। मैंने लक्ष्मी से बात की तो वह मुझसे सहमत हो गई। लक्ष्मी ने कहा मांजी में सबसे श्रेष्ठ बात उसे यही प्रतीत हुई कि वे परिवार के सदस्यों में परस्पर विभेद नहीं करती थीं। एक बार उन्होंने कहा था कि यदि सुमेर और सन्तराम मेरे परिवार के अंग हैं तो आप और आपके पति भी तो मेरे परिवार के अंग हैं। एक को हानि पहुंचाकर दूसरे का कल्याण तो मैं कर ही नहीं सकती।

"यह भावना विष्णुजी में नहीं देखी। वे तो हम सबको ऐसे समझ रहे हैं जैसे बाजार में चलते-फिरते कुछ लोग इकट्ठे हो कहीं डाका डाल रहे हैं।

"इसलिए हम दोनों ने इस व्यवसाय में रहना ठीक नहीं समझा।"

इसपर जुग्गीमल कुछ विचार कर कहने लगा, "विलायत जाने से पूर्व विष्णु ऐसा नहीं था। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी संगति वहां अच्छे लोगों से नहीं रही। इसीसे वह कुछ ऐसी बातें करने लगा है जैसी हम यहां विचार भी नहीं सकते।

"उदाहरण के रूप में मैं अभी व्यावसायिक समिति में ही था तो यह बोला, 'इतना अधिक धन रखना बहुत पाप है।'

"मैंने समझाने का यत्न किया, 'धन रखना पाप नहीं, धन को अधर्मयुक्त उपायों से कमाना पाप है। धन को अधर्मयुक्त ढंग पर व्यय करना पाप है।'

"इसपर वह बोला, 'धर्म-अधर्म, का निर्णय कौन करेगा?'

"मेरा सहज उत्तर था, 'वेदशास्त्र और फिर सरकार।'

"'यह धन सरकार लेकर स्वयं व्यय करेगी तो धर्म होगा। किसी एक सेठ-साहूकार का अधिकार नहीं कि वह व्यय करे।'

"मुझे यह बात समझ नहीं आई थी। मैं अब समझा कि वह बिल्लियों और बन्दरवाला किस्सा है। जब बिल्लियां अपनी बेसमझी

से समझ नहीं सकी कि रोटी कैसे बांटें, तो बन्दर को पंच बना लिया। इसी प्रकार यह मूर्ख बन्दर को धर्म-कर्म में पंच बनानेवाला है। बन्दर न्याय करेगा अथवा अन्याय करेगा, यह विचार तो पीछे होता जब बटवारा हो जाता। पहले तो यह विचारणीय है कि यदि बन्दर ने अन्याय किया है तो दोनों बिल्लियां मिलकर भी उसको न्याय करने के लिए बाध्य नहीं कर सकेंगी। सरकार की शक्ति इतनी अधिक है कि हम सब लोग मिलकर भी सरकार की बुद्धि को सन्मार्ग पर नहीं लगा सकते।"

"यह बात तो भापा, मुझको भी विष्णुजी ने कही थी। परन्तु साथ ही यह भी कहा था कि जब राज्य जनता का होगा तब सरकार से बलशाली जनता होगी।

"परन्तु मैं तो इसको भी गलत समझता हूं। जब एक बार सरकार के हाथ में सेना और पुलिस चली गई तो फिर जनता भी उसका कुछ कर नहीं सकेगी।"

"मैं तो एक बात कहता हूं। हमने धन पैदा करते समय किसी प्रकार के कानून का विरोध नहीं किया। इस कारण जो कुछ हमारे पास बचा है वह हमारे परिश्रम और व्यावसायिक बुद्धि का ही परिणाम है। अत. हमको उसे धर्मयुक्त ढंग पर व्यय करने का अधिकार है। व्यय पर बन्धन शास्त्रों का है और कमाई पर बन्धन सरकार का।"

"देखो भापा, मैं तो अब इस कारोबार में रहूंगा नहीं।"

"ठीक है। परन्तु यदि कोई योग्य प्राप्ता (रिसीवर) नियुक्त नहीं हुआ तो आधी शताब्दी का प्रयास धूल में मिल जाएगा।"

"तो भापा, तुमको प्राप्ता नियुक्त कर दें?"

"नहीं, मैं तो यह विचार किए हुए हूं कि तुमको नियुक्त कर दिया जाए।"

"मैं तो इस झंझट से बाहर रहना चाहता हूं। अब इसमें मुकदमे-बाज़ी होगी।"

इसपर जुगीमल विचारमग्न हो गया। कुछ विचार कर उसने कहा, "गजाधर, मुकदमेबाज़ी से बचने का उपाय ही यह है कि तुम इस कार्य में आगे आ जाओ। यदि तुम इसमें मेरे सहायक हो जाओ तो मैं इस मुकदमेबाज़ी से बचने का उपाय कर सकता हूं।"

"क्या ?"

"यह अभी नहीं बताऊंगा । यह मेरा रहस्य है । परन्तु उसको कार्यान्वित करने के लिए तुम्हारा और परिवार के कुछ अन्य सही दिमागवाले सदस्यों का सहयोग चाहिए ।"

"पर भापा, सहयोग देने से पूर्व सब ये चाहेंगे कि योजना बता दी जाए ।"

"पहले तो तुमको मुझपर विश्वास करना पड़ेगा । यदि विश्वास नहीं तो बात चल नहीं सकती ।"

गजाधर विचार कर रहा था कि भापा के मन में कुछ बात है जिसके समय से पूर्व प्रकट होने से बात बन नहीं सकेगी । वह कुछ देर बाद बोला, "मैं तो आपपर अगाध विश्वास रखता हूं । परन्तु मैं दूसरों के विषय में विचार कर रहा था ।"

"देखो, तुम कह रहे थे कि मैं 'प्राप्ता' बन जाऊं । यह तब ही हो सकेगा जब अधिकांश सदस्य मुझपर विश्वास रख सकेंगे । वह विश्वास तो बिना यह जाने ही होगा कि मैं क्या करनेवाला हूं ।

"बस यही मैं चाहता हूं । चार-पांच लोग मेरा कहा बिना मीन-मेख निकाले माननेवाले हों और बहुसंख्यक मुझे 'प्राप्ता' बनाने के पक्ष में हों, तो मैं ऐसी योजना चला सकता हूं कि मुकदमे की नौबत नहीं आएगी ।"

"यदि ऐसा हो सके तो ठीक है ।"

"तो देखो गजाधर, 'शठे शाठ्यम् समाचरेत्' नीति का वचन है । आजकल सुमेर यहां आया हुआ है और सुना है कि सुमेर और विष्णु में गहरी छन रही है । इससे मैं कुछ वैसी ही नीति अपनाने का विचार कर रहा हूं ।"

"हां, तो भापा, आदेश दो, क्या किया जाए ?"

"प्रत्यक्ष रूप में यह कहो कि विष्णु व्यवस्थापक है और प्राप्ता भी उसीको बनाना ठीक होगा । यह तुम अपनी आयु के पांच-छः सदस्यों से कहलाओ परन्तु उनको इस बात पर तैयार कर लेना चाहिए कि वे करें वह जो मैं कहता हूं ।"

"यह तो हो जाएगा । मैं आज ही इस बात के लिए एक गुट तैयार करता हूं ।"

गजाधर ने यत्न किया और सूर्य, सुभाष, माधव के दोनों लड़के इस काम के लिए तैयार हो गए। सुमेर का भाई माणिक और इन्द्रा का दामाद गिरीश भी तैयार हो गया। गजाधर और ये सब विष्णु के पास पहुंचे। विष्णु अपने कार्यालय में बैठा था। गजाधर सबका प्रवक्ता था। विष्णुसहाय ने इनको आया देखा तो उसे विस्मय हुआ। उसने पूछा, "आओ गजाधर, सबके मिलकर आने का क्या प्रयोजन है?"

"हम आपसे एक राय करने के लिए आए हैं।"

"किस विषय में ?"

"अपनी फर्म के विषय मे।"

"अच्छा बताओ।"

"यह तो अब निश्चय है ही कि फर्म टूटेगी।"

"तुमने ही तो इसका श्रीगणेश किया है। सबसे पहला त्यागपत्र तुम्हारा आया था।"

"भाई साहब, इसका केवल एक अर्थ है कि मैं इतना दूरदर्शी था कि जो कोई नहीं देख रहा था वह मैं सबसे पहले जान गया था। मैं तो मद्रास से चला ही इसी प्रयोजन से था। अतः मैं वहां अपने सहायक मिस्टर अय्यर को सब बातों का चार्ज देकर ही आया हूं।"

"मैं तो यह समझा था कि तुमने बड़ी माजी के भड़काने पर ही यह त्यागपत्र दिया है।"

"विष्णुजी, आप मुझसे आयु में तो बड़े हैं परन्तु आपका यह अनुमान गलत है। मैं स्वतन्त्र बुद्धि का व्यक्ति हूं। देखिए, मैं नई पीढ़ी का नवयुवक हूं। और मैं पुराने विचार के लोगों से सहमत नहीं हो सकता।"

"तो आप क्या चाहते हैं ?"

"यह तो निश्चय ही है कि हमारी फर्म खण्डित होगी। अतः अब जो प्रश्न हमारे मस्तिष्क में है, वह इसको समाप्त करने के लिए किसीको 'प्राप्ता' नियुक्त करना है। आप किसको चाहते हैं ?"

"पहले तो आप लोग बताइए कि आप लोग किसको 'प्राप्ता' नियुक्त करना चाहते हैं।"

"हम तो यह निश्चय करके आए हैं कि आपको 'प्राप्ता' नियुक्त किया जाए।"

"मेरे विरुद्ध तो ये सब त्यागपत्र आ रहे हैं। भला मैं कैसे 'प्राप्ता' बन सकता हूं ?"

"हमने यह योजना बनाई है कि आपको बनाया जाए। आप इनकार न करें तो हम अपना कार्य आरम्भ करें।"

"मुझे फर्म की सेवा करने से भला कैसे इन्कार हो सकता है। परन्तु एक बात है।"

"क्या।"

"वह यह कि रिसीवर को पूर्णाधिकार होना चाहिए। साथ ही मेरे नाम का प्रस्ताव करने से पूर्व यह विश्वास कर लेना कि बहुमत मेरे पक्ष में होगा।"

"आपका बहुमत हो जाएगा।"

"मुझको बता जाना कि कौन-कौन मेरे पक्ष में हैं।"

"बता देंगे।"

"तब मैं तैयार हो जाऊंगा।"

८

इसके उपरान्त गजाधर निरन्तर विष्णु से मिलता रहा और उसे अपनी योजना की गतिविधि से अवगत करता रहा। जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म से तीस सदस्य थे। गजाधर का कहना था कि उसने आधे से अधिक सदस्यों को उसके पक्ष में कर लिया है। इसके साथ ही गजाधर ने उन सदस्यों के नाम भी बताए जिन्होंने अपनी यह सम्मति प्रकट की है कि विष्णुसहाय ही प्राप्ता होने के योग्य हैं।

विष्णुसहाय गजाधर की इस प्रगति से सन्तुष्ट था और वह अपने भविष्य के कारोबार की योजनाएं बनाने लगा था। एक दिन उसने गजाधर को पृथक कमरे में बैठाकर पूछा, "गजाधर, इस फर्म के टूट जाने पर तुमने क्या कारोबार करने का निश्चय किया है ?"

"मैं तो अब कारोबार करना नहीं चाहता। मेरी रुचि तो केवल इस बात में है कि किसी ऐसे योग्य प्राप्ता की नियुक्ति हो जाए जो शीघ्रातिशीघ्र मेरे और मेरी पत्नी का हिसाब सबसे पहले कर दे और हमको नकद धन दे दे।"

"मैं तो तुम्हारे लिए एक अति आकर्षक योजना बना रहा था। मैं जानता हू कि हमारी सबसे बड़ी ब्राच कलकत्ता की है और उससे छोटी बम्बई है। कलकत्ता की शाखा तो मैं अपने लिए रखना चाहता हू और बम्बई की ब्राच मैं तुमको देने का विचार कर रहा था।"

"नहीं, भाई साहब ! मैं अब कारोबार नही करूगा। मैं नकद धन चाहता हू।"

"नकद लेकर क्या करोगे ? वह एकदम देना भी तो कठिन हो जाएगा।"

"मैं तो रुपया लेकर किसी सम्पति मे लगा दू गा और उस सम्पत्ति की आय से शेष जीवन अध्यात्म की खोज मे लगाना चाहूगा।"

"सम्पत्ति में क्या आय होगी ? अधिक से अधिक चार-पाच प्रतिशत का लाभ होगा। व्यापार और उद्योग में तो लाभ की मात्रा बीस से चालीस प्रतिशत तक हो सकती है।"

"यह ठीक है, विष्णुजी, परन्तु मैं अब इस ओर रुचि नही रखता।"

"तुम्हारे फर्म के हित में प्रयास के लिए मैं तुम्हे पुरस्कृत करना चाहता था।"

"तो वह इस प्रकार कर सकते हैं कि मुझे मेरा भाग तुरन्त दिलवा दीजिए।"

विष्णु गम्भीर विचार मे लीन हो चुप रहा। फिर उसने धीरे से कहा, "अच्छी बात है, जैसा तुम चाहोगे वैसा ही होगा।"

पत्तीदारो की सामान्य सभा के लिए लोग आने लगे थे। जिस दिन सभा होनी थी उस दिन प्रातः काल गजाधर और सूर्यप्रसाद बहुत घुलमिलकर विष्णुसहाय से योजना बना रहे थे। तीस में से लगभग बीस आदमियों के नाम गजाधर अपने पास एक पर्चे में से पढ़कर सुना रहा था और कह रहा था, "ये सब इस बात पर सहमत हो गए है कि फर्म भग करने पर विष्णुसहाय को प्राप्ता बनाया जाए।"

"मैं इन सबसे पृथक्-पृथक् मिल चुका हूं और सबसे वचन ले चुका हूं कि फर्म को भंग कर देना चाहिए और आपको प्राप्ता बना देना चाहिए।"

सूर्यप्रसाद ने बताया, "जितने ४० से ऊपर की आयु के सदस्य हैं, मैं उनसे मिला हू और वे सब इस बात पर सहमत हो रहे हैं कि

यदि फर्म नहीं टूटती तो इसको व्यावसायिक संस्थान बनाए रखने के स्थान पर औद्योगिक संस्थान बना दिया जाए।"

"मैंने सुना था कि बड़ी मांजी भी आ रही हैं।"

"हां, उनके आने की सूचना तो थी परन्तु वे अभी तक पहुंची नहीं। न ही उनके पहुंचने का दिन-समय निश्चित है।"

"मैं उनसे ही डरता हूं। उनका प्रभाव परिवार के सदस्यों पर बहुत अधिक है। भावुकता में ही लोग उनका समर्थन करने लगते हैं।"

"तो सभा किस समय आरम्भ होगी ?" गजाधर का प्रश्न था।

"मध्याह्नोतर तीन बजे आरम्भ होगी और मैं समझता हूं कि सभा आधे घण्टे से अधिक नहीं चल सकेगी।"

"हां," गजाधर ने कहा, "आप लम्बी बातें करने की स्वीकृति नहीं देंगे तो सभा समाप्त हो जाएगी।"

कुछ सदस्य तो कार्यालय के ऊपर उन घरों में ठहरे थे जिनमें जुग्गीमल रहता था। पांच कमरों का सेट था। वे सब जुग्गीमल के अधीन थे। परन्तु अब फर्म के सदस्यों के लिए वे खोल दिए गए थे। गजाधर तो अब एक होटल में चला गया था। कुछ सदस्यों के सम्बन्धी कलकत्ता में थे। लड़कों तथा लड़कियों की ससुराल यहीं थीं। जुग्गीमल के अधिकांश बच्चे कलकत्ते में ही विवाहे गए थे।

इसपर भी दो दिन से जुग्गीमल से मिलने के लिए सदस्य उसके कमरे में आते रहते थे

सभा ठीक तीन बजे आरम्भ होनी थी। विष्णुसहाय गजाधर के साथ सभा-भवन में पौने तीन बजे पहुंच गया था। सदस्य एक-एक, दो-दो कर आने लगे थे। विष्णुसहाय के समीप फर्म का मुख्य लेखाकार कम्पनी की पुस्तकें लिए बैठा था। विष्णुसहाय देख रहा था कि न तो बड़ी मांजी के आने के विषय में किसीको विदित था और न ही जुग्गीमल और माधोप्रसाद वहां आए थे। इससे वह सुख अनुभव कर रहा था। रह-रहकर वह सामने दीवार के साथ लटक रहे क्लाक में समय देख रहा था। वह ठीक तीन बजे सभा की कार्यवाही आरम्भ कर देना चाहता था। और यदि सम्भव हो सके तो जुग्गीमल इत्यादि की अनुपस्थिति में ही सब एजेण्डा समाप्त कर देना चाहता था।

जब तीन बजने में एक मिनट रह गया तो विष्णुसहाय ने गजाधर

से कहा कि वह ठीक तीन का घंटा बजते ही कार्य आरम्भ कर दे।
"जी, आप निश्चिन्त रहिए, मैं सब कुछ के लिए सतर्क हूं।"
आखिर क्लाक ने तीन का घंटा बजाया और उसकी ध्वनि बन्द होते ही गजाधर उठा और कहने लगा·
"आज की सभा के अध्यक्ष श्री विष्णुसहाय की आज्ञा ···"
वह आगे कह नही सका। कृष्ण ने कहा, "गजाधर, ठहरो। आज की सभा का अध्यक्ष अभी निश्चित नही हुआ।"
"यह प्रथा है कि फर्म का जनरल मैनेजर ही जनरल सभा का अध्यक्ष होता है।"
"ठीक है। परन्तु यह सभा साधारण एजेंडे पर विचार करने के लिए नही है। यह सभा फर्म को चालू रखा जाए अथवा इसे भग किया जाए, इसपर विचार करने के लिए है। जो सदस्य बाहर से आए हैं उनको यह बताना है कि फर्म भग करने का विचार क्यों आया। और इसे बताने मे मैनेजर पर आरोप हैं। अत. हम उसीको इस सभा का अध्यक्ष स्वीकार नही कर सकते।"
"तो मतदान हो जाए।" विष्णु समझ रहा था कि उसके पक्ष मे लोग अधिक होंगे ही, अतः वह उस दिन की सभा का अध्यक्ष भी निर्वाचित हो जाएगा।
परन्तु गजाधर ने कृष्णचन्द्र की इस आपत्ति को नही माना और उसने फर्म के प्रबन्ध के आधुनिक ढग पर चलाने का श्रेय विष्णु को देना आरम्भ कर दिया और इसीमे उसने पाच मिनट लगा दिए। इस अवधि में जुग्गीमल, भवानीप्रसाद, सूर्यप्रसाद, निर्मला इत्यादि पाच सदस्य सभा-भवन मे आकर वहा बैठ गए, जहा विष्णुसहाय और मुख्य लेखाकार बैठे थे।
गजाधर के बैठ जाने पर कृष्ण ने कहा, "गजाधर ने विष्णुसहाय-जी की बहुत योग्यता से वकालत की है। परन्तु मेरा तो यही कहना है कि यह सभा ऐसी है जिसमे विष्णुसहाय के काम की आलोचना होनेवाली है। इस कारण इस सभा का अध्यक्ष कोई अन्य होना चाहिए। विष्णुसहायजी ने भी इस विषय पर मतदान लेने में रुचि प्रकट की है। अतः मैं उसका स्वागत करता हू और चाहता हूं कि मत-दान हो जाए। मतदान का विषय यह होना चाहिए कि सभा के

सभापति विष्णुसहायजी हों अथवा जुग्गीमलजी ।"

गजाधर पुनः उठा और बोला, "जी नहीं । मेरी सम्मति यह है कि पहले यह निश्चय हो जाए कि आज इस सभा का अध्यक्ष चुना जाए अथवा फर्म का मैनेजर ही अध्यक्ष हो ।"

जुग्गीमल ने कहा, "ठीक है। इसपर मतदान हो जाए और यह मतदान गुप्त हो ।"

"इसका क्या प्रयोजन है ?" विष्णुसहाय ने पूछ लिया ।

"देखो विष्णु," जुग्गीमल ने कहा, "मैं तुमसे आयु, अनुभव और ज्ञान में बड़ा तथा सब परिवार का पुरखा होने के कारण तुमसे अधिक प्रभाव रखता हूं। मैं चाहता हूं कि कोई मेरे बड़े होने के कारण तुम्हारे विपरीत राय न दे । इस कारण गुप्त मतदान की बात कह रहा हूं ।"

भवानीप्रसाद ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और कहा, "अभी तक ऐसी सभा नहीं हुई जिसमें कभी मतभेद हुआ हो और मतदान हुआ हो। यह नई बात है और हम सदस्यों को स्वतन्त्रता से अपने मत का प्रयोग करने की सुविधा होनी चाहिए ।"

अतः एक मतपेटी बगल के कमरे में ताला लगाकर रख दी गई। ताली विष्णुसहाय के पास रख दी और मुख्य लेखाकार को उस पेटी पर निरीक्षण करने के लिए नियुक्त कर दिया गया । सबको खाली परचियां बांटी गईं और गजाधर ने सबको समझा दिया कि परची पर किसीको अपना नाम नहीं लिखना चाहिए। परची पर केवल यह लिखना होगा कि आज की सभा के लिए नया अध्यक्ष चुना जाए अथवा नहीं । यदि वे केवल इतना भी लिखेंगे कि चुनना है अथवा नहीं चुनना है, तो भी बात समझ में आ जाएगी ।

गजाधर ने यह भी कह दिया कि उस कमरे में पेंसिल रखी है। परची पर लिखकर और उसे बिना लेखाकार को दिखाए सन्दूकची के सूराख में डाल देना होगा ।

तीस सदस्यों में से दो सदस्य अनुपस्थित थे। एक रामेश्वरी देवी और दूसरी किशोरी देवी । शेष अट्ठाईस सदस्य उपस्थित थे और मतदान के उपरान्त अट्ठाईस परचियां सन्दूकची में से निकालकर पढ़ी गईं। पच्चीस परचियां नये चुनाव के पक्ष में थीं और तीन परचियां

चुनाव न कराने के पक्ष मे ।

विष्णुसहाय समझ रहा था कि तीन मत तो उसके घर के ही थे । इसका अर्थ वह यह समझा कि गजाधर और उसके साथियो में से किसी-ने भी उसके अध्यक्ष बने रहने के पक्ष मे मत नही दिया । उसने गजाधर की ओर प्रश्नभरी दृष्टि से देखा तो उसने कह दिया, "मैंने तो चुनाव न करने के पक्ष में मत दिया है ।"

"परन्तु तुम्हारे साथियो ने ?"

"मैं नही जानता । कदाचित् इस चुनाव मे उन्होंने आपको आगे लाना उचित नही समझा । परन्तु प्राप्ता के लिए वे सहमत थे ।"

विष्णु चुप रहा । परन्तु वह विचार कर रहा था कि कदाचित् उसके पिता ने उसके पक्ष मे सम्मति नही दी ।

६

यह पता चलते ही कि सभा के अध्यक्ष का नया चुनाव होगा, माधवप्रसाद ने कहा, "मैं अपना पहला प्रस्ताव दुहराता हू । सेठ जुग्गी-मल आज के अध्यक्ष हो ।"

जब इसका किसीने विरोध नही किया तो जुग्गीमल ने सदस्यो की हाजिरी तथा कार्यवाही का रजिस्टर पकडकर अपने सामने रख लिया और लेखाकार को अपने समीप बैठा लिया ।

जुग्गीमल ने लेखाकार को कहा, "त्यागपत्र पढ़कर सुना दीजिए ।"

लेखाकार ने एक फाइल उठाई । उसमें लगे त्यागपत्र पढ़कर सुनाने आरम्भ कर दिए । सबके सब त्यागपत्र बिना कारण बताए दिए गए थे । केवल एक त्यागपत्र था जिसपर कारण लिखा था । यह था जुग्गीमल का । वह भी एक पत्र द्वारा पीछे लिखकर भेजा गया था । इस पत्र मे जुग्गीमल ने लिखा था :

"प्रिय विष्णुसहायजी ! मैंने त्यागपत्र मे कारण इसलिए नही लिखा कि मैं विचार करता हू कि हमारी व्यावसायिक समिति मेरे कार्य छोड़ने के कारण जानती है । परन्तु पता चला कि मेरा, मांजी का तथा अन्य सदस्यों के त्यागपत्र साधारण सभा मे उपस्थित [illegible] हैं अतः मैंने यह अपने साथ न्याय करना समझा है कि मैं [illegible]

कार्य का कारण भी लिख दूं।

"पहले मांजी के विषय में बताना चाहता हूं। वे कारोबार में भाग इस कारण लेती थीं कि उनकी रुचि धर्मादा में थी। उनका विचार था और अब भी है कि कारोबार में मुख्य कार्य धर्मादा निकालना है। जो कुछ भी अपना पेट भरने से बचे वह धर्म के कार्य में व्यय होना चाहिए और इसीकी प्रेरणा देने के लिए वे कारोबार की उन्नति में रुचि रखती थीं। और मेरा विचार है कि उनकी इस सद्भावना का ही परिणाम है कि हमारे कारोबार में अभूतपूर्व उन्नति हुई।

"उनका त्यागपत्र तब आया जब वे धर्मादा के धर्मकार्य में व्यय किए जाने में अरुचि देखने लगीं।

"यह बात उन्होंने अपने एक पत्र में मुझे लिखी तो मैंने अपने त्यागपत्र में उनकी बात का उल्लेख करना उचित समझा है। साथ ही मेरा मन कहता है कि इस व्यवसाय में अब वह उन्नति और प्रगति नहीं रहेगी जो अभी तक होती रही है। जो इस व्यवसाय का बीज था, वही जब नहीं रहा तो पेड़ की शाखायें समय पाकर सूख जाएंगी।

"अतः मैंने भी त्यागपत्र दिया है और इस धर्मविहीन व्यवसाय में रहना उचित नहीं समझता।"

विष्णुसहाय ने इसके उत्तर में कहा, "इसके सम्बन्ध में मैं एक बात बताना चाहता हूं।"

सेठजी ने उसको बात कहने की स्वीकृति दे दी। विष्णुसहाय कहता गया, "धर्म एक मन की भावना का प्रश्न है। मन की भावनाएं ज्ञान और शिक्षा के अनुसार बनती हैं। बड़ी मांजी की शिक्षा-दीक्षा हमसे भिन्न है। जिस काम में वे धर्मादा का धन व्यय करना चाहती हैं वह मुझ एम० ए० पास को पसन्द नहीं आया। मैंने और बहुसंख्यक धर्मादा समिति के सदस्यों ने उनके ढंग को स्वीकार नहीं किया। इस कारण बड़ी मांजी के रुष्ट होने का कोई कारण नहीं है।"

"वे रुष्ट नहीं हैं। परन्तु वे इस व्यवसाय में रहना नहीं चाहतीं, जिसमें व्यय करने के लिए धर्मादा के अर्थ पर विचार होने लगा है। उन्होंने धर्मादा में से कुछ वापस भी नहीं मांगा। भविष्य में वे और मैं किसी ऐसे व्यवसाय में भाग नहीं लेना चाहते जिसमें धर्मादा का प्रयोग अधर्मयुक्त कार्यों में होने लगे।"

इसपर माधवप्रसाद ने उठकर कहा, "मैंने भी अपने त्यागपत्र में कारण नहीं बताया। परन्तु मैं बताना चाहता था कि विष्णुसहायजी ने बड़ी माताजी का त्यागपत्र बिना बड़ी सभा में उपस्थित किए स्वीकार करने का यत्न किया तो मैंने भी इस फर्म में रहना उचित *नहीं समझा।*

"मैं समझता हू कि हम लोग इस फर्म मे पत्तीदार बिना एक भी पैसा अपने पास से दिए हो गए थे। जब भी परिवार मे कोई बच्चा पैदा होता है तो पैदा होने के दिन से उसको भत्ता मिलने लगता है। जब वे बच्चे सज्ञान होने लगते हैं अथवा उनका विवाह हो जाता है तो उसमे बिना एक भी पैसा लिए उसको कारोबार में पत्तीदार बना लिया जाता है। उसके भाग का धन सुरक्षित कोष मे से दिया जाता है। घर में दामाद अथवा बहुओं को व्यवसाय मे सम्मिलित करने के लिए उनकी स्वीकृति मात्र ली जाती है। जब वे स्वीकृति दे देते हैं तो उनको भी पत्तीदार बना लिया जाता है। उनसे भी कारोबार के लिए एक पैसा भी डालने के लिए नहीं कहा जाता। ऐसी स्थिति में यदि यह कहा जाए कि यह सब बड़ी माजी की कृपा का ही फल है तो गलत नहीं। अत. मैंने यह समझा था कि मूल के उच्छेद हो जाने से पेड ही सूखनेवाला है। इस कारण मैंने माजी का पत्र बड़ी सभा मे उपस्थित करने का हठ किया। विष्णुजी ने और बहुमत से व्यावसायिक समिति ने मेरी बात स्वीकार नहीं की तो मैंने भी त्यागपत्र दे दिया।"

माधवप्रसाद ने आगे कहा, "मैं समझता हू कि जिस संस्था मे धर्मबुद्धि नहीं रहती, वह सस्था फल-फूल नहीं सकती, अत. इस फर्म को समाप्त कर देना चाहिए और इस संस्था के स्थान पर सब सदस्यों को नई फर्म बनाने का अवसर मिलना चाहिए। प्रत्येक फर्म अपने कारबार का उद्देश्य और नियम-उपनियम बनाएगी और उसके लाभ-हानि की उत्तरदायी स्वय होगी।"

अब गजाधर ने कहा, "यदि सब लोग अपने त्यागपत्र वापस लें तब यह फर्म चल सकती है परन्तु बड़ी माजी तथा छोटी माजी तो यहा हैं नहीं और उनको इस समय समझाया भी नहीं जा सकता कि वे फर्म से अपना त्यागपत्र वापस ले लें। अतः यह फर्म अब

ही पड़ेगी ।

"मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि इस फर्म का काम समेट दिया जाए।"

इसपर जुग्गीमल ने भी कह दिया, "त्यागपत्र वापस लेने का तो अब प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। कारण यह कि व्यवसाय का उद्देश्य सबके मन में एक नहीं रहा और अब व्यवसाय सांझा नहीं रह सकता।"

इस बात का भी किसीने विरोध नहीं किया। यह प्रस्ताव भी स्वीकार हो गया। अब गजाधर ने प्रस्ताव रखा कि कार्य को समेटने के लिए एक प्राप्ता नियुक्त होना चाहिए। मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि श्री विष्णुसहायजी प्राप्ता नियुक्त किए जाएं।"

इसपर माधवप्रसाद ने इस प्रस्ताव का विरोध करने के लिए खड़े होकर कहा, "जैसा कि मैंने पहले बताया है, हममें से किसी भी सदस्य ने इसमें अपने पास से एक पैसा भी पूंजी के रूप में डाला नहीं है। हमको इतने वर्ष तक इसमें से लाभ मिलता रहा है। यह लाभ का धन वेतन से अतिरिक्त रहा है। वेतन तो इसमें लगाए परिश्रम का मूल्य रहा है। लाभ पृथक् मिला है। वह जो मिला सो तो हमने लिया और उसका भोग किया परन्तु मूल पूंजी में हमने एक पैसा भी नहीं लगाया। अतः उसपर किसी भी सदस्य का अधिकार नहीं। वह पूंजी जहां से आई है वहीं चली जानी चाहिए।

"मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि व्यवसाय की पूंजी हमारे पिता सेठ जुग्गीमलजी की है। उसमें से जो कुछ भी वे अपनी सन्तान को देते रहे हैं, यह उनकी कृपा का सूचक था। अतः शेष पर उनका ही अधिकार है।

"अतएव मेरा प्रस्ताव है कि यह सब व्यवसाय उनका है, उनको ही मिल जाना चाहिए। यदि उनको इसमें से कुछ किसीको देना होगा तो देंगे, यदि नहीं देना होगा तो नहीं देंगे।"

इसपर विष्णुसहाय ने पूछ लिया, "तो आप उनको प्राप्ता नियुक्त करने का प्रस्ताव करते हैं ?"

माधवप्रसाद जो अभी तक खड़ा ही था अपने प्रस्ताव का अर्थ समझाने के लिए कहने लगा, "जी नहीं। मैं यह नहीं कह रहा। जुग्गीमल एण्ड सन्स व्यवसाय है सेठ जुग्गीमल का। वे इस व्यवसाय

में अपनी सन्तान को व्यवसाय के लाभ में भागीदार मान उनके लाभ में से भाग देते रहे हैं। परन्तु उन्होंने न तो अपनी सम्पत्ति का अभी तक बटवारा किया है और न ही किसी प्रकार की लिखत-पढ़त की है। इस कारण जो कुछ उन्होंने अभी तक दिया है वह हमको उनकी कृपा का सूचक ही मानना चाहिए। यह फर्म उनकी है और उनके ही पास है। उनको प्राप्ता नियुक्त करने का कोई कारण नहीं।"

इसपर कुछ सदस्य तो भौचक्के हो मुख देखते रह गए। विष्णुसहाय ने कहा, "भापा, माधवप्रसाद ने यह एक नया विचार उत्पन्न किया है। मैं इसको मानने के लिए तैयार नहीं हूं।"

माधवप्रसाद जो अभी तक खड़ा ही था कहने लगा, "मेरा यह विचार विष्णुसहाय के लिए नया हो सकता है परन्तु यह असत्य नहीं है। मैं पूछता हूं कि विष्णुसहाय ने इस व्यवसाय का पत्तीदार बनने में कितना धन लगाया था ?"

"यह तो मेरे पिता ही बता सकते हैं।"

"ठीक है, मैं लाला रामस्वरूप से पूछना चाहता हूं कि उन्होंने इस व्यवसाय में भागीदार बनने के लिए कितनी पूंजी लगाई थी ?"

"मैंने सेठजी की लड़की मोहिनी से विवाह किया तो मुझे व्यवसाय में पत्तीदार बना लिया गया। अर्थात् पत्तीदारी दहेज के रूप में थी।"

"कोई लिखित प्रमाण है ?"

"मुझसे कुछ लिखाया गया था।"

"क्या लिखाया गया था ?"

"वह तो मुझे अब स्मरण नहीं। तीस वर्ष से भी अधिक हो गए हैं।"

"जो कुछ दामादों से लिखाया जाता था उसकी नकल मेरे पास है। वह यह है। लिखाया जाता था—'मैं, निम्न हस्ताक्षरकर्ता, जुगलकिशोर एण्ड सन्स की फर्म के लाभ का हिस्सेदार बनना स्वीकार करता हूं। इससे मेरी यह जिम्मेदारी हो जाती है कि इस फर्म की हानि के समय मैं इसकी हानि में भी जिम्मेदार हूंगा। इस जिम्मेदारी के कारण कारोबार में सम्मति देने का मैं अधिकार रखूंगा।'..."

"इस लेख से यह प्रकट नहीं होता कि लाभ में हिस्सा लेनेवाला फर्म का मालिक भी बन गया है। हानि-लाभ की [illegible]

के लिए संचालन का अधिकार ही मिला है।

"देखिए रामस्वरूपजी, यह कुछ ऐसा ही है जैसे बैंक कुछ शर्तों पर किसीको धन देता है। परन्तु वह धन का उत्तराधिकारी नहीं हो जाता।"

इसपर विष्णुसहाय ने कह दिया, "यह सब मिथ्यावाद है। मैं सब सदस्यों से कहता हूं कि इस युक्ति को स्वीकार न किया जाए।"

इसपर गजाधर फिर उठा और उसने माधवप्रसादजी को बैठाकर कहा, "मैं चाहता हूं कि इसी बात पर मतदान हो जाए। प्रश्न यह है कि इस फर्म को समेटने के लिए प्राप्ता नियुक्त किया जाए अथवा नहीं।"

इसपर इन्द्रा के पति कृष्ण ने कहा, "मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं। कारण यह कि हम फर्म को समेट नहीं रहे, वरन् यह उस व्यक्ति को वापस दे रहे हैं जिन्होंने इसका लाभ हममें बांटना स्वीकार किया था।"

इसपर विष्णु ने अपनी इङ्गलैण्ड में प्राप्त शिक्षा का प्रदर्शन करते हुए कहा, "इसी कारण तो मैं कहता हूं कि सम्पत्ति समाज की है, यह किसी व्यक्ति की नहीं। समाज की ओर से इसको हस्तगत करने के लिए राज्य है। अतः यह फर्म अब राज्य के अधीन हो जानी।"

जुग्गीमल ने इस बात का उत्तर नहीं दिया। उसने कह दिया, "गजाधर के प्रस्ताव का यह रूप होना चाहिए—यह फर्म समेट दी जाए अथवा इसके पूर्व स्वामी को वापस कर दी जाए।

"जब यह निश्चय हो जाए कि इसको समेटना ही चाहिए तो फिर आगे दूसरी बातें होंगी। मेरा अभिप्राय यह है कि इसका प्राप्ता कौन हो?"

"तो इसपर मतदान हो जाए।" गजाधर का कहना था।

इस बार पुनः मतदान गुप्त रूप से हुआ। फर्म को समेटने के पक्ष में दस और विरोध में अठारह मत आए।

इसके उपरान्त यह प्रस्ताव रखने की आवश्यकता नहीं समझी गई कि इसका प्राप्ता कौन हो। जुग्गीमल ने कहा, "यह निश्चय हुआ कि जुग्गीमल एण्ड सन्स की फर्म इसके मूल स्वामी को लौटा दी जाए।

अतः मैं इस फर्म का पुन. स्वामी हू।

"मैं आज की सभा को स्थगित करता हू और भविष्य मे अथवा आज दिन तक हुए लाभ के वितरण के विषय मे आगामी नीति कल प्रात.काल तक घोषित कर दूंगा।

"यदि उस घोषणा पर किसीको कोई आपत्ति हो तो वह मेरे पास इसकी शिकायत कर सकता है। मैं यत्न करूगा कि उसकी बात को समझकर उससे न्याय करूं।

"यदि तब भी सन्तोष न हो तो बड़ी माजी से इस विषय पर अपील की जा सकती है। मैं उसे परिवार की प्रीवी कौंसिल मानता हूं और मेरे लिए वहां का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा।"

"पर मैं यह जानना चाहता हू कि यदि आपको यही कुछ करना था तो फिर त्यागपत्र क्यो दिया था, और बड़ी माताजी यदि इसमे अन्तिम निर्णय देनेवाली थीं तो उन्होंने भी त्यागपत्र क्यों दिया था?" यह विष्णुसहाय की आपत्ति थी।

उत्तर जुग्गीमल ने दिया, "माताजी ने, मैंने और किशोरी ने त्यागपत्र तो उस प्रबन्ध से दिए थे जो हमने निर्माण किया था। आपने हमारे त्यागपत्र व्यावसायिक समिति में स्वीकार नहीं किए। यदि कर देते तो हम उसी समय कह देते कि हम उस समिति को विघटित करते हैं। हम स्वयं बड़ी सभा बुलाकर यही कुछ करते जो हमारे त्यागपत्र स्वीकार किए बिना हुआ है।

"हां, तो यही जो अब हुआ है, इस प्रकार हुआ है जैसे कलकत्ता के कार्यालय को चलाने के लिए चालीस के लगभग कर्मचारी नियुक्त हैं। उनसे मैंने कह दिया है कि उनको सेवा से मुक्त किया जाता है। उनका वेतन अथवा जो कुछ भी उनका बनता है वह कल घोषित कर दिया जाएगा। यदि उनको मेरे निर्णय पर कुछ आपत्ति हो तो वे पृथक्-पृथक् मिलकर निश्चय कर सकते हैं।

"ये कर्मचारी भी तो फर्म के लाभ में भाग लेते थे। उनको वेतन तो परिश्रम का मूल्य मिलता था। परन्तु उस बोनस को लेने से वे इस बात के अधिकारी नहीं हो जाते कि फर्म को समेटने के अधिकारी मान लिए जाएं।

"यही बात परिवार के सदस्यों की है।"

"तो आपने सब कर्मचारियों की छुट्टी कर दी है ?"

"हां, उनको अपने भविष्य के विषय में जानने के लिए कल बुलाया है ।"

इसपर विष्णु गम्भीर विचार में डूब गया । वह कुछ देर तक मौन बैठा रहा । जुग्गीमल लेखाकार से कह रहा था, "इस सभा की कार्यवाही जैसे हुई है और जैसी आपने लिखी है वह सबको सुना दीजिए ।"

लेखाकार सभा की कार्यवाही लिख रहा था और वह उठकर सबको उस दिन की कार्यवाही सुनाने लगा । इस समय एकाएक विष्णु उठा और सभा-भवन से बाहर निकल गया ।

लेखाकार अभी कार्यवाही सुना ही रहा था कि विष्णु पुनः वहां लौट आया और सभा की कार्यवाही में दखल दे बोला, "कार्यालय पर डाका पड़ा है ।"

जुग्गीमल ने सूर्य और गजाधर को कहा, "विष्णु को पकड़कर बैठा दो । जरा इसको भी सुनने दो कि इस सभा में क्या-क्या और कैसे निर्णय हुए हैं ।"

दोनों युवकों ने पकड़कर विष्णुसहाय को बैठा दिया । जुग्गीमल ने कहा, "जब यह बात समाप्त हो जाएगी जो इस समय चल रही है, तब आपकी बात भी सुन ली जाएगी ।"

लेखाकार ने जब पूर्ण कार्यवाही सुना दी तो जुग्गीमल ने पूछा, "इसमें कुछ गलत बात तो नहीं लिखी गई ?"

मोहिनी ने कहा, "पिताजी, यह तो घोर अन्याय हो रहा है ?"

"देखो मोहिनी, यह न्याय अथवा अन्याय जो कुछ भी है, इसी सभा में हुआ है । इस समय तो मैं यह पूछ रहा हूं कि लेखाकार ने जो बात लिखी है वह ठीक है, कोई गलत बात तो नहीं लिखी ?

"रही बात अन्याय की, उसके लिए पहले मुझे समझाओ, यदि मैं न समझ सकूं तो बड़ी मांजी हैं ।"

"और पुलिस में क्यों न जाएं ?" विष्णुसहाय ने कह दिया ।

"हां, वह द्वार भी खुला है । यह अब आपके निश्चय करने का है कि आपको क्या करना चाहिए ।"

इतना कह जुग्गीमल ने सभा को कह दिया, "यहां सभा में आने

से पूर्व मैंने कार्यालय मे ताले लगवा दिए थे। बैंकों को तार दे दिए हैं कि विष्णुसहाय ऑपरेटर नहीं रहा। जब नया ऑपरेटर नियुक्त किया जाएगा उसकी सूचना दे दी जाएगी।

"मैंने ब्राचों को भी सूचित कर दिया है कि बिना आगे के आदेश के सब सौदे बन्द कर दिए जाए। रुपयों का लेन-देन बन्द कर दिया जाए।

"यह मैंने उसी अधिकार से किया था जो आपने अभी बहुमत से स्वीकार किया है।"

१०

सभा विसर्जित हुई तो सब सदस्यों ने कार्यालय के बाहर आधे दर्जन लठैत खड़े देखे। अधिकांश सदस्य इस सतर्कता से सन्तुष्ट थे।

आरम्भ में तो जुग्गीमल ने यह विचार बना लिया था कि उसे अपना भाग लेकर फर्म से पृथक् हो जाना चाहिए। परन्तु जब गजाधर ने बम्बई की खटाऊ मिल के लेने की बात और उस सौदे मे से रिश्वत खा जाने का अपना सन्देह व्यक्त किया तो जुग्गीमल की व्यापारिक बुद्धि सजग हो गई और वह योजना बनाने लगा।

गजाधर ने यह भी कहा था कि फर्म टूटने पर मुकदमेबाज़ी आरम्भ हो जाएगी। इस सब वार्तालाप का परिणाम ही यह था कि जुग्गीमल ने अपना अधिकार फर्म मे पहचाना और फिर उस अधिकार का प्रयोग किया।

साधारण सभा के पूर्व ही उसने पहले बड़ी आयु के सदस्यों से मिलना शुरू किया और उनको फर्म का इतिहास बताकर अपने अधिकार का औचित्य बताया। अन्त में उनकी सम्मति से ही, जब विष्णु सभा का प्रबन्ध कर रहा था, वह पूर्ण कारोबार पर अधिकार करने की योजना चलाता रहा था।

गजाधर गुप्त रूप मे तो जुग्गीमल से मिलकर योजना के चलने में सहायक हो रहा था और प्रत्यक्ष में वह विष्णुसहाय से मिलकर उसको भ्रम मे रखने का यत्न कर रहा था कि सदस्य उसके अनुकूल हैं और उसके मन की बात चल रही है।

गजाधर की योजना में सूर्य और माणिक बहुत सहायक हुए थे। सभा के उपरान्त विष्णु अपने मकान को चला तो गजाधर वहां खड़ा विचार कर रहा था कि अब वह विष्णु पर चल रहे भ्रम को चलता रहने दे अथवा उसको अपने वास्तविक रूप का ज्ञान करा दे। विष्णु ने गजाधर से कहा, "गजाधर, अभी आ जाओ मेरे घर में। तुमसे एक विषय में राय करनी है।"

"भैया, मैं आ रहा हूं। तुम चलो।"

विष्णु और मोहिनी इत्यादि गए तो गजाधर ने सेठजी से कहा, "मैं आपसे एक बात करना चाहता हूं।"

"किस समय ?"

"फर्म के विषय में घोषणा से पूर्व।"

"तो रात भोजन के उपरान्त आ जाना।"

गजाधर इन दिनों अपनी पत्नी और बच्चों के साथ एक होटल में रह रहा था। लक्ष्मी भी सभा में उपस्थित थी। वह तो तुरन्त होटल को भाग जाना चाहती थी। बच्चे वहां अकेले थे।

गजाधर उसे होटल में भेज स्वयं विष्णु के घर जा पहुंचा। मोहिनी अपने परिवार के साथ एक मकान में रह रही थी। वह सभा में सब युक्तियां और परिणाम जानकर मन ही मन विचार करने लगी थी कि उसने और उसके लड़के ने जो कुछ किया है उससे क्या लाभ हुआ है। मार्ग में चलते हुए उसने विष्णु से कहा, "मैं समझती हूं कि हमसे कुछ सैद्धान्तिक भूल हुई है।"

"तो ऐसा प्रतीत होता है कि तुमने भी हमारी योजना के विपरीत मत दिया है।"

"नहीं विष्णु, दोनों बार ही मैंने तुम्हारी योजना के अनुसार ही मत दिया था। परन्तु मैं अब विचार करती हूं कि हमारा पक्ष अशुद्ध था।"

"क्या भूल थी इसमें ?"

उत्तर विष्णु के पिता रामस्वरूप ने दिया। उसने कहा, "तुमने यह किसलिए कह दिया कि सम्पत्ति समाज की है और समाज की ओर से राज्य इसे हस्तगत करने का अधिकार रखता है ?

"भला आज के उपस्थित विषय से इसका क्या सम्बन्ध था ? विशेष रूप में जब यहां राज्य अंग्रेजों का है और वे हमारे देश और

समाज की उन्नति नही चाहते ?"

"पिताजी, उस समय मुझे यह बात स्मरण नही रही कि हम विदेशियो के अधिकार मे हैं।"

"जानते हो, यह मतिभ्रम किस कारण उत्पन्न होता है ?"

"किस कारण होता है ?"

"यह क्रोध का परिणाम होता है। यह शास्त्र मे लिखा है कि पहले आसक्ति उत्पन्न होती है, फिर आसक्ति से कामना उत्पन्न होती है। कामना से क्रोध और क्रोध से मोह और मोह से मतिभ्रम उत्पन्न होता है।

"इतनी मोटी बात कि इस देश मे समाज का प्रतिनिधि राज्य नहीं है परन्तु तुमने यह कह दिया। इसी कारण मैंने दूसरे मतदान मे तुमको मत नही दिया।"

"पिताजी, आपने जुग्गी को मत दिया है ?"

"हां, पहली बार तो तुमको मत दिया था। परन्तु जब देखा कि तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है तो फिर तुमको मत नहीं दिया।

"देखो, मैं एक बात और बताता हू। मैंने जुग्गीमल एण्ड सन्स की नौकरी नही की। मैं समझता था कि श्वसुर की नौकरी करके मैं उसके अधीन हो जाऊगा।

"इसपर भी मैंने उस शर्त पर हस्ताक्षर किया था जो माधव-प्रसाद ने पढकर सुनाई थी। मैं समझता हूं कि वह ठीक कह रहा था कि जुग्गीमल ने कम्पनी के लाभ-हानि मे कुछ को सम्मिलित किया था, उसके स्वामित्व मे नही।"

"परन्तु यह तो कोर्ट निश्चय करेगा कि कौन स्वामी है ?"

"तुम फिर क्रोध में बात कर रहे हो। यह अंग्रेज़ी सरकार एक हिन्दू परिवार की भावनाओं के विषय मे क्या जानती है ?

"मैं तो यह विचार कर रहा हू कि यदि स्वराज्य हो गया और उसमे तुम जैसे अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे अधिकारी बन गए तो भला वह एक हिन्दुस्तानी परिवार की बातों को क्या समझेगा ?"

"स्वराज्य हो जाने पर भी जुग्गीमल जैसों को मनमानी करने दी जाएगी क्या ?" विष्णु ने उद्विग्न हो पूछ लिया।

"मैं तो यह समझता हू कि तुम जैसे धर्म और न्याय से अनभिज्ञ

अधिकारी का अधिकार नहीं कि किसी भी परिवार के परस्पर सम्बन्धों में हस्तक्षेप करें ?"

"तो राज्य क्या करे ?"

"राज्य पुलिस रखकर चोर और डाकुओं से भले लोगों की रक्षा करे और सेना रख विदेशों से देश की रक्षा करे।"

"परन्तु जब देश में शान्ति हो और कोई युद्ध न हो रहा हो तो राज्य बेकार बैठा रहे ?"

मोहिनी की हंसी निकल गई। उसने कहा, "विष्णु, तुम कुछ अनर्गल बात नहीं कर रहे क्या ? राज्य कोई बन्दर है कि यदि वह बेकार हो तो दूसरों का घर उजाड़ने में लग जाए ?"

रामस्वरूप भी इस उक्ति पर हंसने लगा। इस समय उनकी गाड़ी घर के द्वार पर जा पहुंची थी। वे गाड़ी से उतरकर मकान में चढ़ गए। उनके कमरे मकान की दूसरी मंजिल पर थे।

विष्णु पिता और माताजी को भी अपने मत के विपरीत देखकर परेशानी अनुभव कर रहा था।

वे अभी बैठे अपने-अपने मन के भावों को समझ ही रहे थे कि गजाधर आ गया।

"आओ गजाधर।" विष्णु ने उसे अपने समीप बैठा लिया।

जब गजाधर बैठ गया तो विष्णु ने पूछा, "तुमने अपना मत किधर दिया था ?"

"पहले मतदान में तो मैंने आपके हित में मत दिया था। परन्तु दूसरी बार आपके विपरीत दिया था।"

"तुम बहुत बड़े बेईमान प्रतीत होते हो।"

"भैया विष्णु, यह तुम क्रोधवश कह रहे हो। कुछ शान्ति से विचार करोगे तो तुमको अपनी बात गलत प्रतीत होगी।"

"तुमने मुझको मत नहीं दिया ?"

"मैंने तुम्हारे हित में मत दिया है।"

"अर्थात्, तुम मेरा सभा का प्रधान न बनाया जाना मेरे हित में समझते थे ?"

"बिल्कुल।"

"मैं यह समझ नहीं सका।"

"इसीलिए तो कहता हू कि शान्तचित्त होकर विचार करोगे तो स्वयं भी इसी परिणाम पर पहुंचोगे ।

"यदि आपकी अध्यक्षता मे यह सब निश्चय होता तो आपकी क्या स्थिति होती, तनिक विचार करिए । अभी तो आपके हाथ खुले हैं ।"

"और दूसरे मतदान मे तुमने मेरे विपरीत मत क्यो दिया ?"

"उस समय तक मुझे माधवप्रसादजी की बात में तथ्य प्रतीत होने लगा था। मुझे ज्ञात है कि मैंने फर्म की पूजी में एक पैसा भी दिए विना लाखों रुपये इनके लाभ मे से लिए हैं ।"

"तुम तो बहुत ही भयकर जीव हो ।"

"इसमे भयकरता कैसे आ गई ?"

"तुम मत तो मेरे विपरीत दे आए हो और मुझसे कहते हो कि मेरे हाथ खुले हैं। अर्थात् मैं मुकदमा कर सकता हू ।"

"हां भाई साहव, परन्तु यदि आपकी बुद्धि ठिकाने होगी तो आप सरकारी अदालत में मुकदमा नही करेंगे ।"

"तो कहां करूंगा ?"

"घर की अदालत में। मेरा कहना है कि कल बावाजी की घोषणा सुन लो । फिर यदि उसमें कुछ आपत्ति हो तो उनसे बात कर लेना । चाहो तो एक-दो अन्य सदस्यों को साथ रख लेना । यदि बाबा नहीं माने और आपकी माग आपको ठीक प्रतीत हुई तो फिर खाटू की यात्रा करना और वहा न्याय हो जाएगा ।"

विष्णु अभी गजाधर की बात पर विचार कर ही रहा था कि मोहिनी बोल उठी, "गजाधर ठीक कहता है । उतावली और क्रोध मे कोई कार्य सफल नहीं होता ।"

विष्णु के विस्मय का बड़ा कारण उसकी मा और पिता का भी उसके विचार का विरोध करना था ।

वह समझता था कि सभा में निर्णय होने के पूर्व ही बाबा ने कार्यालय और बैंक के खातों पर अधिकार जमा लिया है। यह कानून के विपरीत है और वह दावा कर सकता है । यही बात वह सभा-भवन से आते हुए पूर्ण मार्ग मे विचार करता आ रहा था। वह पुलिस में रिपोर्ट करने का निश्चय कर चुका था। परन्तु अब उसकी मां ने भी उसके निश्चय

का विरोध किया था। अतः उसने गजाधर का विचार छोड़ पहले अपनी मां से ही बात करना उचित समझा।

उसने पूछा, "मां, तुम भी यह नहीं चाहती थीं कि मैं बाबा पर मुकदमा करूं ?"

"किस बात का मुकदमा करोगे ?"

"यही कि बाबा ने कार्यालय और बैंकों के खातों में अनधिकार अधिकार जमा लिया है।"

"अधिकार तो उनको मिल गया है। तुम्हारे पिता ने भी तुम्हारे नाना को अधिकार देने में सहयोग दिया है।"

"यही तो मैं समझ नहीं सका कि पिता ने पुत्र के विपरीत मत क्यों दिया ?"

इसपर रामस्वरूप, जो अब तक चुपचाप दूसरों की बातें सुन रहा था, बोल उठा, "पहले तुम बताओ कि तुम अपने बाबा के विपरीत क्यों हो गए हो ?"

"उनका व्यवहार गलत है।"

"तुम्हारे व्यवहार में क्या और क्यों ठीक है ?"

"मुझे सभा ने मैनेजर बनाया था और···"

"और क्या ? वह भी बता दो।"

"और यह कि इतने वर्षों तक फर्म के लाभ में से भाग देकर मुझे फर्म के मालिकों में स्वीकार किया था।"

"लाभ में से भाग देने के कारण तुम पूंजी के स्वामी नहीं हो सकते। हम कर्मचारियों को लाभ में से भाग देते हैं इसपर भी वे मालिक नहीं हो सकते।

"देखो विष्णु, जहां तक तुम्हारी मैनेजरी का सम्बन्ध है वह सभा ने दी थी और सभा ने ही समाप्त कर दी। जहां तक स्वामित्व का सम्बन्ध है, जिसने बनाई थी उसने समाप्त कर दी।"

"अब मुझे क्या करना चाहिए।"

"तुममें बल-बुद्धि है। तुम स्वतन्त्र रूप से पुरुषार्थ कर कोई काम चलाओ। जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म के लिए उसके मालिक के निश्चय की प्रतीक्षा करो। उसके बाद विचार कर लेना।"

बात समाप्त हो गई। गजाधर ने कहा, "देखो भैया, हम लोग

जिस दिशा में विचार कर रहे थे वह मिथ्या दिशा थी। ज्यों ही हमको पता चला तो हमने दिशा बदल ली। यही हुआ है।"

"अच्छी बात। यदि नाना की घोषणा ठीक न हुई तो फिर क्या करोगे?"

"मेरे विचार से तो वे यदि हमको जो दे चुके हैं उसके उपरान्त एक पाई भी न दें तो भी समझता हूं कि उनका निर्णय ठीक है।

"यदि परिवार के साथ कुछ अन्याय हुआ तो विचार कर लेंगे। उनसे ऊपर अभी एक अदालत तो इस संसार में अभी भी विद्यमान है। मेरा अभिप्राय बड़ी माजी से है। उनकी सहानुभूतिपूर्ण बुद्धि पर मुझे विश्वास है।"

११

जुग्गीमल ने व्यवसाय के सम्बन्ध में अपनी नीति घोषित कर दी। वह नीतिपत्र के रूप में सब सदस्यों को मिल गई। उस पत्र में सेठजी ने लिखा :

"जब कम्पनी का काम विस्तार कर रहा था तो माजी की सम्मति से यह निश्चय किया गया था कि परिवार के सब सदस्यों को इस व्यवसाय में सम्मिलित कर लिया जाए।

"अतः यह योजना बनी थी कि पूर्ण लाभ का पचास प्रतिशत पूंजी बढ़ाने में सुरक्षित रखा जाए और शेष पचास प्रतिशत को सदस्यों में बांट दिया जाए। जो सदस्य व्यवसाय में कार्य करे, उनकी योग्यता के अनुसार उनको पृथक् वेतन भी दिया जाए। यह वेतन तो खर्चे में सम्मिलित था। साथ ही बच्चों को दिया जानेवाला भत्ता भी खर्चे में सम्मिलित होता था। सब प्रकार के खर्चे निकालकर ही लाभ मांपा जाता था।

"इस बात का पालन किया गया और पिछले चालीस वर्ष से लाभ की राशि हम बांटते रहे हैं। इस लाभ में भागीदारों की संख्या तीस हो गई है। भत्ता पानेवाले अल्पायु सदस्यों की संख्या बयालीस से अधिक है।

"इस व्यवसाय का बीज डालनेवाले ने व्यवसाय को धर्मकार्य का साधन माना था। अर्थात् यदि धर्मकार्य न हो तो व्यवसाय

वश्यक हो जाता है।

"धर्म का निर्णय करने के लिए स्मृति में लिखा है कि वेद के ज्ञाता, स्मृतिशील, वेद के ज्ञाता साधुओं का आचरण अथवा ऐसे ही लोगों का आत्म-सन्तोष ही धर्म है। अभिप्राय यह कि वेद से अनभिज्ञ लोगों की व्यवस्था धर्मविपरीत भी हो सकती है।

"वर्तमान स्थिति में जुग्गीमल एण्ड सन्स के लाभ के पत्तीदारों की ऐसे धर्म के लिए रुचि नहीं रही और व्यवसाय, जो धर्मकार्य का साधन-मात्र था, व्यर्थ प्रतीत होने लगा है और फर्म के मालिकों ने इस संस्था को व्यर्थ मानकर समेट देने का विचार किया है।

"इस संस्था में मूल पूंजी बड़ी मांजी ने डाली थी। उनके आदेश से ही उनके पुत्र ने इस कार्य को आज से कुछ मास पूर्व तक चलाया है। अतः रामेश्वरी देवीजी के पुत्र सेठ जुग्गीमल ने इस फर्म को बन्द कर देने का निश्चय कर यह सूचना भेज दी है।

"वर्तमान स्थिति यह है कि इसकी पूंजी में तेरह करोड़ रुपया लगा हुआ है। वह धन सेठ जुग्गीमल की सम्पत्ति है। वे इससे कोई और व्यवसाय चलाएंगे जिसका उद्देश्य धर्मकार्य होगा।

"इससे धर्मादा ९० लाख रुपये के लगभग है। वह धर्म-कर्म के लिए नकद उपरलिखित है। पिछले वर्ष तक परिवार के सदस्यों को लाभ की राशि बांटी जाती रही है। इस वर्ष के तीन मास व्यतीत हो चुके हैं और इतने काल में वितरण होनेवाला लाभ प्रति सदस्य एक लाख रुपये के लगभग होगा। यह राशि ठीक-ठीक गणना कर और प्राप्ति कर बता दी जाएगी।

"पूंजी का प्रयोग किस व्यवसाय में और किन शर्तों के साथ हो सकेगा, उसके लिए योजना बनाकर विचार कर लिया जाएगा। यह सब सम्पत्ति सेठ जुग्गीमल की अपनी पैदा की हुई है। अतः इसको कम करने अथवा इसका प्रयोग करने का सेठ जुग्गीमल को पूर्ण अधिकार है।"

इसके नीचे सेठ के अपने हस्ताक्षर हुए थे।

यह विज्ञप्ति दिन के ग्यारह बजे मिल गई थी। इसके उपरान्त जो सदस्य अभी तक कलकत्ता में टिके थे, जुग्गीमल से मिलने के लिए आने लगे।

सबसे पहले मिलने आनेवालो मे गजाधर और सूर्यप्रसाद थे। दोनो ने प्रसन्नता प्रकट की और जुग्गीमल को अपने मन के भाव बताए तो उसने कहा, "इस पूजी के रुपयो को मैं कई कारोबारो में लगाना चाहता हू। परन्तु उन कारोबारो को लिमिटेड कम्पनियों के रूप मे चलाऊगा। मैं चाहता हू कि परिवार के वे सब सदस्य जो कारोबार चलाना चाहें, प्राइवेट लिमिटेड कम्पनिया बना लें और उनको कुछ शर्तों के साथ इस पूजी मे से ऋण दिया जाएगा।

"परन्तु इससे पूर्व मैं एक पिछले कारोबार को समेटने के लिए प्राप्ता नियुक्त करना चाहता हू। बताओ गजाधर, करोगे यह कार्य ?"

"कार्य की शर्त क्या होगी ?"

"वेतन डेढ हज़ार रुपया मासिक। समेटने के कार्यालय का खर्चा वसूली के छः प्रतिशत के भीतर होगा। वसूली का अर्थ उस धन से है जिसको नकद करना है। फर्म मे पडे माल, मशीनरी और ग्राहकों से वसूल करने योग्य नकद मे परिवर्तित करना।"

"कितनी अवधि मे यह कार्य समाप्त हो जाना चाहिए ?"

"तीन से छः मास के भीतर। इसमे यह भी हो सकता है कि यदि परिवार के कुछ लोग कम्पनी लिमिटेड कराकर कोई कारोबार लेना चाहें तो वे ले सकेंगे। प्राप्ता से वह धन प्राप्त समझा जाएगा और उसपर छः प्रतिशत कमीशन मिलेगा जो इस नई कम्पनी को ऋण के रूप मे मिल जाएगा।"

"मुझे स्वीकार है। कब से काम आरम्भ होगा ?"

"मैं तो आज से ही यह काम आरम्भ करना चाहता हू। जिन ग्रावो को कारोबार रोकने का आदेश दिया है, उनसे सम्पर्क बनाकर वहां की आदेय (Assets) पर अधिकार पाना है।"

"मुझे नियुक्ति और अधिकार-पत्र दोनों ही दे दीजिए।"

इसी समय मोहिनी अपने पति और पुत्र के साथ यहा आ गई। उसने आते ही पूछा, "हम इस घोषणा का विरोध लिखकर करें अथवा मौखिक।"

"पहले मौखिक बातचीत कर लो। यदि उसपर सन्तोष न हुआ तो लिखकर बात हो सकती है।"

"यह बताइए कि पूंजी में जो पचास प्रतिशत लाभ का जमा

होता रहा है, उसपर सदस्यों का अधिकार क्यों नहीं ? हम चाहते हैं कि वह भी इस वर्ष के लाभ के साथ बांट दिया जाए ।"

"जब भी किसी सदस्य को कम्पनी में सम्मिलित किया जाता था, उसको यह शर्त बता दी जाती थी कि लगभग पचास प्रतिशत पूंजी में जाएगा । वह धन बांटने का लाभ नहीं ।"

"यह पूंजी अब किसकी सम्पत्ति है ?"

"इसकी मालकिन बड़ी माताजी हैं । मैं उनका कारिन्दा हूं । जैसा वे कहेंगी तदनुसार कार्य किया जाएगा ।"

"इसमें आपकी कोई योजना नहीं है ?"

"मेरी योजना कुछ नहीं है । हां, मांजी का इस रुपये के लिए एक अस्थायी आदेश है। वह आदेश यह है कि इस रुपये से चलने-वाला व्यापार धर्मकार्य के लिए होगा । कार्यकर्ता के अपने निर्वाह तथा सुख-सुविधा के लिए निकालकर शेष धर्मार्थ व्यय किया जाएगा । अभी तक मैंने उस आदेश का पालन इस प्रकार किया है कि कर्मचारियों का वेतन तो खर्चे में डाला है। लाभ का निश्चित प्रतिशत धर्म की वृद्धि के लिए देकर शेष परिवार के सदस्यों की सुख-सुविधा के लिए व्यय करता रहा हूं ।

" परन्तु अब योजना बदल रहा हूं। सैद्धान्तिक रूप में आदेश का पालन करते हुए यह पूंजी परिवार के सदस्यों को पूंजी के रूप में ऋण या कुछ शर्तों पर मिल सकेगी । इसपर छः प्रतिशत व्याज होगा और तीन प्रतिशत धर्मादा होगा । साथ ही तीन प्रतिशत सरमाया की वृद्धि के लिए होगा ।"

"तो हम भी कम्पनी बनाकर ऋण ले सकेंगे ?" मोहिनी का प्रश्न था।

"हां, तुम लोग प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी बना लो । अभी जो शर्तें बताई हैं, तदनुसार रुपया मिल जाएगा ।"

"तो यह आपका बैंक होगा अथवा बड़ी माताजी का ।"

"यह माताजी का बैंक है । मैं तो स्वयं एक कम्पनी बनाकर माताजी से ऋण लेने का विचार कर रहा हूं ।"

"कोई चालू शाखा भी हम ले सकते हैं अथवा नहीं ?"

"नाम नहीं मिलेगा । अपने नाम से कम्पनी बनाइए । इस

विषय में विस्तृत विवरण गजाधर से ज्ञात करो। इस कार्य के लिए उसको नियुक्त किया जा चुका है।"

"मैं तो नाम की गुडविल भी लेना चाहता हूं।" विष्णुसहाय ने कहा।

"वह नहीं मिल सकती।"

इतनी बात कर मोहिनी इत्यादि चल दिए। जुग्गीमल ने कम्पनी के केन्द्रीय कार्यालय को खुलवाया और वहां गजाधर को बैठा उसको काम के लिए अधिकार-पत्र दे दिया।

गजाधर ने सेठजी के नाम से सब शाखाओं को तार भेज दिए। उन तारों में प्रबन्धक नियुक्त करने की सूचना थी। ये भी जुग्गीमल के परिवार के ही सदस्य थे। प्राय वे ही लोग थे जो पहले किसी न किसी शाखा के अध्यक्ष रह चुके थे। इतना किया गया था कि जो जहां पहले कार्य करता था वहां उसे नहीं भेजा गया। उस दिन सायंकाल तक लखनऊ, मद्रास, बम्बई, जबलपुर, कोलम्बो, कराची, दिल्ली और रंगून का प्रबन्ध कर दिया गया था। कुछ प्रबन्धक अपने-अपने निश्चित स्थानों को जा भी चुके थे।

अगले दिन बहुत प्रातःकाल सेठजी, गजाधर और बैंकों के नाम अस्थायी कार्यवाही रोकने की आज्ञा मिल गई। कार्यवाही रोकने के लिए प्रार्थना करनेवाला विष्णुसहाय था।

सेठ जुग्गीमल अभी अपने पूजा-पाठ से उठा ही था कि कचहरी का नोटिस मिल गया और उससे कहा गया कि वह अगले दिन सब-जज के न्यायालय में उपस्थित होकर बताए कि अस्थायी आज्ञा को क्यों न स्थायी कर दिया जाए?

जुग्गीमल ने नोटिस लिया और गजाधर के होटल में टेलीफोन मिलाकर उसे इसका समाचार दिया। गजाधर ने बताया कि उसको भी इस प्रकार की आज्ञा प्राप्त हुई है।

जुग्गीमल ने गजाधर को अपने पास बुला लिया जिससे कि किसी वकील का प्रबन्ध किया जा सके।

चतुर्थ परिच्छेद

सुमेर सिंगापुर से अपने पिताजी से झगड़कर आया था। उसका पिता सिंगापुरवाली कम्पनी के नाम की गुडविल मांगता था। कम्पनी पूर्ण रूपेण सुमेर के रुपयों से चल रही थी। यह रुपया कुछ तो उसको जुग्गीमल ने और कुछ उसके श्वसुर ने दिया था। जुग्गीमल की फर्म से लाभ में मिला और उसके साथ चोरी का सारा धन, यहां तक कि शकुन्तला के आभूषण भी सुमेर की माता राधा लेकर दक्षिण अमेरिका भाग गई थी।

सिंगापुर का कार्य एक लाख रुपये की पूंजी से चालू किया गया था। सेठ भगीरथ ने जुग्गीमल से पूछा था, "आप इस लड़के को अपने पांव पर खड़े होने में क्या सहायता दे सकते हैं ?"

"बात यह है कि मैंने इसके और इसके माता-पिता के लिए बहुत कुछ किया है। अब भी एक करोड़ रुपये के लगभग इसकी मां लेकर

सन्तराम ने कहा, "सुमेर, यह काम अब तुम करो। और मुझ इसके छोडने का क्या देते हो ?"

"आपको मैं माताजी के पास तक पहुंचने का खर्चा दे सकता हूं।"

"नही, मैं इसमे आधा भाग अपना मानता हू।"

"पर पिताजी, रुपया मेरा लगा है, मेहनत मैंने की है। फिर आपको आधा भाग किसलिए दिया जाए ?"

"तो मैं कल दुकान पर ताला लगवा दूंगा।"

"पर आप क्या चाहते हैं और किसलिए चाहते हैं ?"

"मैं तो तुम्हारी मा के पास जा रहा हू। इस कारण तुम यह दुकान करो और मुझे दो लाख रुपया दे दो जिससे मैं अपना हक दुकान से उठा लू।"

इसपर बहुत झगडा हुआ। अन्त मे यह निश्चय हुआ कि दुकान किसीके हाथ बेच दी जाए और जो मिले आधा-आधा बाट लिया जाए। दुकान का माल और गुडविल बेच दी गई। कुल साढे तीन लाख रुपया मिला और पौने दो लाख रुपया लेकर सन्तराम अपनी पत्नी के पास चला गया। इस झगडे मे फैसला कराने में शकुन्तला का विशेष हाथ था।

शकुन्तला ने इस निर्णय के उपरान्त पूछा, "अब क्या करेंगे ?"

"मैं अमेरिका मे किसी कारोबार के लिए जाना चाहता हूं।"

"किसी अच्छे काम के लिए इतने धन से तो काम नही चलेगा।"

"तो मैं कलकत्ता जाकर किसी परिवार के आदमी को साझीदार बनाना चाहूंगा।"

"ठीक है, चलिए।" शकुन्तला का विचार था कि वहा जुग्गीमल से उसको सुमति मिलेगी।

परन्तु वहां मिला विष्णुसहाय। विष्णुसहाय न्यूयार्क मे कोई उद्योग चलाने के लिए तैयार हो गया। परन्तु उसके और सुमेर के बीच अभी बातचीत हो ही रही थी कि रामेश्वरी, किशोरी और जुग्गीमल के त्यागपत्र पहुंच गए। इसके बाद कुछ दिनों में ही दस से अधिक त्यागपत्र और आ पहुचे। इसमे विवश हो विष्णुसहाय को सब सदस्यों की साधारण सभा बुलानी पड़ी।

इसके बुलाने मे एक मास लग गया। शकुन्तला को जब ...

पता चला कि बड़ी मां ने रूठकर फर्म से त्यागपत्र दे दिया है तो उसके मन में विष्णुसहाय के विषय में सन्देह होने लगा कि वह कोई अच्छा व्यक्ति नहीं हो सकता। वह समझ रही थी कि जिस व्यक्ति की बड़ी मांजी से नहीं पट सकती, वह अच्छा हो ही नहीं सकता।

अतः उसने एक दिन अपने पति से कह दिया, "यहां होटल में रहते हुए आज पन्द्रह दिन हो गए हैं। चार सौ रुपया प्रति सप्ताह होटल का बिल बन जाता है और ऊपर का खर्चा अलग हो रहा है। पिछले पन्द्रह दिन में हमने पन्द्रह सौ के लगभग रुपया व्यय किया है। बताइए, इतना व्यय करके आपने क्या पाया है?"

"मेरी विष्णुजी से बातचीत हो गई है। वे पांच लाख रुपया लगाएंगे, मैं दो लाख लगाऊंगा। इसके अतिरिक्त मैं फर्म में काम करूंगा और आधे-आधे हानि-लाभ के हकदार होंगे।"

"तो काम कब आरम्भ होगा?"

"काम तो आरम्भ हो जाता परन्तु बड़ी मांजी ने एक अड़ंगा लगा दिया है। उन्होंने जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म से त्यागपत्र दे दिया है। इस कारण बात पूर्ण होने में कुछ समय लग जाएगा।"

"उस कम्पनी का इससे क्या सम्बन्ध है?"

"विष्णुजी उस कम्पनी के साथ मेरी सांझेदारी करवाना चाहते हैं। इस समय तो बड़ी मांजी आदि के त्यागपत्रों का झगड़ा है। इनका निर्णय होने के उपरान्त ही विष्णुसहाय कुछ निश्चय कर सकेंगे।"

"तो क्या वह आपको कम्पनी के साथ पत्तीदार बनाना चाहता है?"

"हां, परन्तु केवल मात्र न्यूयार्क की शाखा का।"

"मैं समझती हूं कि यह ठीक नहीं हो रहा है। यदि फर्म को पता चला कि विष्णु आपके साथ सांझेदारी कर रहा है तो सब लोग विष्णु के खिलाफ हो जाएंगे और वह स्वयं भी कर्ता की पदवी से हटा दिया जाएगा।"

"वह कहता है कि उसने अपना रसूख बहुत ज़बरदस्त बना रखा है। वह और उसके माता-पिता, तीन हिस्सेदार तो वे स्वयं हैं। फिर उसकी बहिनें और उनके घरवाले, चार मत उनके हैं। सुना है, गजाधर, सूर्यप्रकाश और माणिक भी विष्णु की बात का समर्थन

कर रहे हैं। कलकत्ता मे ही उसके दस मत हैं। वह कहता था कि उसका साथ और लोग भी देंगे और उसकी स्थिति बहुत ही सुदृढ है।"

"मुझे तो कुछ दाल मे काला प्रतीत होता है।"

"तुम्हारे मस्तिष्क में बडी माजी का प्रभाव जमा हुआ है। यही कारण है कि तुम भयभीत प्रतीत होती हो।"

"मेरी बुद्धि भी तो यही कहती है। आपके पिता ने फर्म का एक करोड़ रुपया तक चुरा लिया था। उस समय आप भी उनके साथ थे। भले ही फर्मवालो ने आपको कैद नही कराया था परन्तु वह बात उनको भूल गई क्या ? मुझे विश्वास नही होता।"

"पैसेवालों की एक बात तुम नहीं जानती। वह यह कि धन के लोभ में ये सब कुछ भूल जाते हैं। मैंने जो सुनहरा चित्र न्यूयार्क के काम का बनाया है उससे चकाचौंध हो ये सब पिछली बातें भूल जाएंगे। साथ ही मैंने यह बात इनके मन मे बैठा रखी है कि मैं बेईमान नहीं हूं।"

शकुन्तला उस समय तो चुप रही परन्तु उसके मन मे सशय बना रहा। इसके उपरान्त जुग्गीमल एण्ड सन्स के सदस्यों की साधारण बैठक हुई और उसमें विष्णुसहाय का तख्ता उलट गया।

अगले दिन विष्णुसहाय और उसके माता-पिता सेठ जुग्गीमल से मिले और प्रत्यक्ष रूप मे तीनो सन्तुष्ट लौटे। परन्तु उसके उपरान्त विष्णुसहाय ने सुमेर के होटल मे फोन करके कहा, "मैं लच के लिए तुम्हारे होटल मे आऊगा और उस समय यहा की बात बताऊगा।"

सुमेर को विदित था कि विष्णुसहाय पदच्युत हो चुका है और जुग्गीमल ने कम्पनी को पूर्ण रूपेण अपने हाथ मे लेकर यह कहा है कि अगले दिन वह कम्पनी के भविष्य के विषय में बताएगा।

सुमेर ने शकुन्तला को यह समाचार नही बताया था। उसे शकुन्तला को यह बताते हुए लज्जा लग रही थी कि उसकी भविष्य-वाणी सत्य सिद्ध हुई है। जब विष्णुसहाय ने कहा कि वह उसके साथ दोपहर का भोजन करेगा और उस समय सब बात बताएगा तो वह समझा था कि जुग्गीमल ने कोई ऐसी योजना बनाई है जिससे विष्णु-सहाय को अधिकार पुनः मिल गए हैं। इससे वह प्रसन्न था।

किन्तु जब भोजनोपरान्त विष्णुसहाय ने पुनः [illegible]

वास्तविक स्थिति बताई तो सुमेर की सब आशाओं पर पानी फिर गया। वह गम्भीर विचार में डूबा हुआ सोचने लगा कि यह तो एक सर्वथा नवीन स्थिति बन गई है कि पूंजी सेठ जुग्गीमल की और लाभ सदस्यों का। वह इस निर्णय को असंगत और कानून के विपरीत मानने लगा था।

शकुन्तला भी उस समय वहीं पर बैठी दोनों भाइयों की बात सुन रही थी। विष्णुसहाय के फर्म के अध्यक्ष पद से हटाए जाने के कारण वह मन ही मन प्रसन्न हो रही थी। इसपर भी वह गम्भीर होकर बैठी थी और यह जानने के लिए उत्सुक थी कि उसके पति के मन पर इस परिवर्तन की क्या प्रतिक्रिया होती है।

सुमेरचन्द आंखें मूंद देर तक विचार करता रहा। उसने एकाएक आंखें खोलीं और बोला, "भैया, मैं इस स्थिति पर सन्तुष्ट नहीं हूं। इसपर भी मैं यह नहीं चाहता कि उतावली में कोई बात की जाए। इस कारण मैं आपको आपके घर पर मिलूंगा। आपके पिताजी से भी राय करूंगा।"

इस प्रकार उसने शकुन्तला के सामने बात करने से स्वयं को बचा लिया। तदनन्तर इधर-उधर की बातें होने लगीं। दो बजे के लगभग विष्णु गया तो सुमेर ने शकुन्तला से कहा, "मैं समझता हूं कि मुझे तुरन्त जुग्गीमल से मिलना चाहिए।"

"किसलिए ?"

"वह अपनी सम्पत्ति को अधिक से अधिक लाभवाले स्थान पर लगाना चाहेगा। इसी विषय में मैं अपनी योजना उसको बताना चाहता हूं।"

पति के इस मानसिक परिवर्तन पर शकुन्तला प्रसन्न थी। इसपर भी उसने कुछ कहा नहीं और विष्णु के जाने के पांच मिनट बाद ही सुमेर भी होटल से निकल विक्टोरिया गाड़ी में बैठ विष्णु के घर जा पहुंचा। विष्णु को उसके इतनी जल्दी आ जाने पर विस्मय हुआ। सुमेर ने विस्मय का निवारण कर दिया। उसने बताया, "जो मैं कहने के लिए आया हूं वह स्त्रियों के सामने कहने का नहीं है।"

"अच्छा, तो कहो।"

"आप कुछ रकम जेब में लेकर मेरे साथ चलिए। किसी अच्छे

वकील से बात करनी होगी।"

"मुझे कुछ आशा नही।"

"मुझे बहुत आशा है। हा, उस आशा की दिशा दूसरी है। मैं चाहता हूं कि सब ब्रांचों और मुख्य कार्यालय पर अस्थायी स्थगन आदेश लागू करा दिया जाए और फिर इसको कुछ लम्बा करने का उपाय किया जाए। इस काल मे मैं आपकी ओर से सुलह की शर्तें तय करने लगूगा। मुझे पक्का विश्वास है कि इस तरीके से लाखों का लाभ होगा।"

विष्णु सुमेर को इतना समझदार युवक नही समझता था। इस कारण वह विस्मय से उसका मुख देखता रह गया। इसपर सुमेर ने अपनी बात को और प्रभावयुक्त बनाने के लिए कहा, "विष्णुजी, मुकदमे कचहरी से निर्णय कराने के लिए नही किए जाते। यह तो बातचीत करने के लाभ की स्थिति को प्राप्त करने के लिए किए जाते हैं।"

विष्णु की समझ मे बात आ गई। उसने कह दिया, "मैं अब समझा हू कि बाबा ने सभा में निर्णय करने से पहले कार्यालय पर अधिकार किसलिए किया था?"

"हा, तो अब चलो। समय बहुत कम है। हमे इसी समय कुछ करना चाहिए।"

विष्णु भीतर गया। नोटों का एक बण्डल जेब मे डाल सुमेर के साथ चल पडा। विष्णु सुमेर को शान्ताकुमार सेन वकील के पास ले गया। वकील सेशन कोर्ट मे था। वहा उसको पूर्ण स्थिति से अवगत कराकर, वही पर ही एक संक्षिप्त-सा प्रार्थनापत्र लिख वे सब-जज की अदालत में जा पहुचे।

सब-जज बिना इंजन्कशन जारी किए नोटिस देने के लिए राज़ी नही हुआ। परन्तु सेन साहब ने जब यह बताया कि करोडो रुपयों की सम्पत्ति के इधर से उधर हो जाने का डर है तो सब-जज राज़ी हो गया कि एक दिन के लिए वह ऐसा करने पर तैयार हो सकता है। हर हालत मे कल पूर्ण वृत्तान्त कोर्ट मे आ जाना चाहिए।

इसपर मिस्टर सेन ने बताया, "ठीक है। कल हम आपको भली प्रकार समझा सकेंगे कि स्थायी स्थगन क्यों आवश्यक है।"

हुक्म जारी हुआ तो उसी समय हुक्म की नक़लें लेकर के

ओर से कलकत्ता और बाहर की ब्रांचों तथा उनके बैंकों के नाम भेज दिया गया कि अगली आज्ञा मिलने तक जुग्गीमल एण्ड सन्स फर्म में कोई लेन-देन न किया जाए।

देखते-देखते एक घण्टे में दो सहस्र रुपया व्यय हो गया परन्तु काम बन्द की आज्ञा जारी हो गई और उसमें कहा गया कि अगले ही दिन उपस्थित होकर दोनों पक्ष अपना औचित्य सिद्ध करें जिससे कि तुरन्त स्थिति का निश्चय किया जा सके।

अगले दिन यह हुक्म जुग्गीमल को मिला तो वह स्तब्ध रह गया। उसने गजाधर को टेलीफोन कर अपने घर पर बुला लिया और फिर अपने वकील के पास गए। वकील ने कहा, "अब यह मुकदमा चला है तो शीघ्र ही समाप्त नहीं होगा। कम से कम आज तो यह हुक्म उठ नहीं सकता।"

इसपर भी एम० एम० बनर्जी ने साधारण सभा का प्रस्ताव और उसकी व्याख्या लिखकर एक जवाबी दावा तैयार किया और उसे टाइप कराकर अदालत में जा पहुंचे।

इस समय तक सुमेरचन्द सब-जज से उसके मकान पर मिल चुका था और उसकी जेब गरम कर चुका था। परिणाम यह हुआ कि पहले तो सब-जज अदालत में ही ग्यारह बजे से पहले नहीं आया और जब आया तो उस दिन के अन्य मुकदमों को पहले शुरू कर दिया। मध्यान्ह के भोजनोपरान्त उसने जुग्गीमल एण्ड सन्स वाला मुकदमा लिया।

२

जुग्गीमल की ओर से जवाबी दावा प्रस्तुत किया गया तो विष्णु-सहाय के वकील ने कहा, "इस जवाबी दावे की नकल मिलनी चाहिए और इसका जवाबुल जवाब देने के लिए अवसर मिलना चाहिए।"

जज ने इसके लिए तीन दिन की तारीख दे दी। अदालत में सुमेर जान-बूझकर नहीं आया था। उसने विष्णु से कह दिया था कि यदि यह पता लग गया कि मैं आपकी ओर से सहायता कर रहा हूं तो फिर मैं आपका पक्ष बाबा और बड़ी मांजी के सम्मुख नहीं ले जा सकूंगा।"

विष्णुसहाय को यह विश्वास हो चुका था कि वह मुकदमा जीत नही सकता। अत. वह सुलह की शर्तें करने के लिए किसीको रहने देना चाहता था। इस कार्य के लिए सुमेर उसे उपयुक्त व्यक्ति प्रतीत हुआ था।

सुमेर पिछले दिन रात के नौ बजे होटल से लौटा था और शकुन्तला के सामने उसने यही प्रकट किया था कि वह बाबा से मिलकर आया है। वे और गजाधर किसी काम पर गए थे, इस कारण उनकी घर पर प्रतीक्षा करनी पड़ी। जब वे सायंकाल छ. बजे आए तो भेंट हुई। उन्होंने वचन दिया है कि तनिक फर्म का प्रबन्ध अपने हाथ मे ले लें, फिर उसकी योजना पर विचार करेंगे।

शकुन्तला को उस दिन अपने पति की बातें बहुत ही आशाजनक प्रतीत हो रही थी। वास्तव मे सुमेर तो जुग्गीमल से मिलने के लिए गया ही नही था। वह तो विष्णुसहाय को लेकर अदालती प्यादे के साथ नोटिस को बैंकों और जुग्गीमल तक पहुचाने में तथा ब्राचो के बैंकों को तार देने मे ही व्यस्त रहा था।

शकुन्तला ने कहा, "आप गजाधर की भाति फर्म की नौकरी क्यों नही कर लेते ?"

"यदि वे मेरा रुपया फर्म में लगाकर मुझे कम्पनी के स्वामित्व में सांझीदार बना लें तो मैं नौकरी के लिए भी यत्न करूगा।"

अगले दिन उसने शकुन्तला को गजाधर की पत्नी लक्ष्मी के पास भेजा। सुमेरचन्द का शकुन्तला से यह कहना था कि वह गजाधर की पत्नी से अच्छे सम्बन्ध बना लेगी तो उसकी योजना के सफल होने की आशा बढ जाएगी।

सुमेर ने शकुन्तला को यह नही बताया कि गजाधर के पास भी लेन-देन न करने की आज्ञा पहुच चुकी है। अतः शकुन्तला उस दिन हो रही कार्यवाही को न जानते हुए लक्ष्मी के पास पहुच गई।

लक्ष्मी को गजाधर ने उस दिन मिले नोटिस का समाचार बता रखा था। परन्तु उसमें सुमेर का नाम नही था। उसने भी केवल विष्णुसहाय का नाम ही बताया था।

शकुन्तला पहुंची तो दोनों बडे स्नेह से मिली। लक्ष्मी को उसने बधाई दी कि गजाधर फर्म का प्राप्ता नियुक्त हुआ है।

लक्ष्मी ने कहा, "ललिता के पिता इस प्रकार का काम पसन्द नहीं करते थे। परन्तु परिवार और बाबा के उपकार का अनुभव करते हुए वे कृतज्ञता के नाते बाबा के कहने का इन्कार नहीं कर सके।

"परन्तु इस विष्णु ने तो एक नया झगड़ा आरम्भ कर दिया है।"

"क्या ?"

लक्ष्मी ने संक्षेप में स्थगनादेश की बात बता दी।

"इससे क्या होगा ?"

"व्यर्थ में धन और जीवन का व्यय होगा। वे कह रहे थे कि यह मुकदमा वर्षों तक भी चल सकता है। इसपर भी विष्णुजी जीत नहीं सकते।"

शकुन्तला को अपनी सास की बात स्मरण हो आई। उसने भी मुकदमा चलने के समय यह कहा था कि मुकदमा जीता नहीं जा सकता। परन्तु इससे दूसरे पक्ष को तंग कर उससे अच्छी शर्तों पर सुलह की जा सकती है। यही बात अब विष्णु के मुकदमे में समझ आ रही थी। उसकी सास की चाल तो चल नहीं सकी थी परन्तु विष्णु की चाल चल गई थी। इसपर वह गम्भीर बैठी रही।

लक्ष्मी ने कहा, "ललिता के पिता कचहरी गए हुए हैं। वे आएंगे तो पता चलेगा कि कैसी आपत्ति उठाई गई है और उसका क्या उत्तर दिया गया है।"

इसपर शकुन्तला ने कहा, "कल परमेश्वरी के पिता अपने बाबा से मिलने के लिए गए थे और उनसे अपने उनके साथ कारोबार करने की बात कर आए थे। वे कह रहे थे कि सेठजी ने आश्वासन दिया है कि फर्म का काम जम जाने पर वे उनके प्रस्ताव पर विचार करेंगे।"

"जहां तक मुझे पता है सेठजी स्वयं तो कोई कारोबार करेंगे नहीं। हां, वे यह यत्न करनेवाले हैं कि परिवार के दो-दो, तीन-तीन सदस्य मिलकर छोटी-छोटी कम्पनियां बना लें और उनकी पूंजी में वह अपने धन से सहायता देंगे, अर्थात् बहुत सस्ते ऋण पर धन देंगे।"

शकुन्तला वहां दो घण्टे बैठी रही और फिर दोपहर के भोजन के समय अपने होटल में जा पहुंची। सुमेर वहीं पर था। मुन्ना दाई के पास था। सुमेर ने बताया, "बाबा से मिलने के लिए गया था पर वे घर पर और कार्यालय में भी नहीं मिले।"

इसपर शकुन्तला ने विष्णु की ओर से किए गए मुकदमे की बात सुना दी। सुमेर सब कुछ जानता था परन्तु उसने स्वयं को सर्वथा अनभिज्ञ बताते हुए पूछ लिया, "तुमको यह किसने बताया?"

"लक्ष्मी ने। विष्णु ने बहुत बदमाशी की है। इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा।"

"यह भी लक्ष्मी ने बताया है?"

"जी नहीं। यह मैं कह रही हूं।"

"तुम मुकदमों के विषय में क्या जानती हो?"

"आपकी माताजी तो जानती थी न। यदि वे देश से भाग न जाती तो वे भी पति के साथ जेल में डाल दी गई होती।"

"उसमें और वर्तमान अवस्था में अन्तर हो गया है। किसी कारण से गजाधर हमसे पहले अदालत में पहुंच गया था। वर्तमान अवस्था में विष्णु पहले पहुंचा है। इस कारण वह अपने उद्देश्य में सफल होगा।"

"मैं तो पहले और पीछे की बात पर विचार नहीं कर रही। मैं तो धर्म और अधर्म की बात पर विचार कर रही हूं। अधर्म कभी भी विजयी नहीं हो सकता।"

"शकुन्तला, तुम समझती हो कि मेरी माताजी ने अधर्म का कार्य किया था? परन्तु वे सफल तो हुई हैं। एक करोड़ के लगभग फर्म का रुपया वे हजम कर चुकी हैं।"

"अभी कहानी का अन्त नहीं आया। अधर्म का धन फलेगा नहीं।"

"बहुत ज्योतिष लगाने आरम्भ कर दिए हैं।"

शकुन्तला देख रही थी कि उसका पति विष्णु के साथ सहानुभूति प्रकट करने लगा है। उसने समझा कि चढ़ते सूर्य को प्रणाम करने-वाला यह लोभी जीव फिर विष्णु में चढ़ता हुआ सूर्य देखने लगा है। उसने अपना कर्तव्य मान लिया कि वह अपने पति पर यह लक्षित करने का यत्न करती रहेगी कि विष्णु चढ़ता सूर्य नहीं परन्तु डूबता हुआ है। साथ ही वह पूर्वाभिमुख भी नहीं खड़ा है, वह तो पश्चिमा-भिमुख खड़ा है।

इसपर भी उसने अभी चुप रहना उचित समझा। सायंकाल

सुमेर जुग्गीमल से मिलने के लिए गया। जाते हुए उसने कहा, "मैं तनिक बाबाजी से मिलने के लिए जा रहा हूं।"

"मैं कई दिन से घूमने के लिए नहीं जा सकी।"

"तुम एक गाड़ी पकड़ झील तक घूमने चली जाया करो।"

"परन्तु अकेले घूमने में भी कोई स्वाद है?"

"मैं दिन-रात तुम्हारी संगत में रहता हूं। देखो, परमेश्वरी और इसकी दाई को भी साथ लेती जाओ। मुझे इस मुकदमे का समाचार सुनकर उनसे मिलने जाना चाहिए। तुम गजाधर की पत्नी को भी साथ ले जा सकती हो।"

सुमेर जुग्गीमलजी के मकान पर जा पहुंचा। गजाधर वहीं था। सुमेर का विचार था कि गजाधर सीधा कचहरी से यहीं आया होगा और वह होटल में अभी अपनी पत्नी से मिलने नहीं गया होगा। इस-पर भी उसे बताना चाहिए कि उनपर मुकदमे का समाचार उसको विदित है। उसने बैठते हुए पूछ लिया, "बाबा, सुना है कि विष्णु ने किसी प्रकार का झगड़ा प्रारम्भ कर दिया है।"

गजाधर ने मुस्कराते हुए पूछा, "तो विष्णुजी ने तुमको बताया नहीं?"

"मैं उससे तीन-चार दिन से मिला ही नहीं। हां, वह स्वयं कल मध्यान्ह के समय भोजन करने मेरे पास आया था और तब तो वह यही बता रहा था कि वह बाबा के व्यवहार से सन्तुष्ट है।"

"पर सुमेरजी, कल सायंकाल तो आप उसके साथ घूम रहे थे?"

सुमेर स्तब्ध रह गया। वह समझ नहीं सका कि गजाधर ने उसको किस प्रकार देख लिया। वास्तव में गजाधर ने उसको कहीं देखा नहीं था। यह तो उसका अनुमान ही था। यह अनुमान उसने शकुन्तला के इस कथन से लगाया था कि उसका घरवाला सेठजी से मिलने के लिए कार्यालय में आया था और सेठजी गजाधर के साथ कहीं गए हुए थे। यथार्थ बात यह थी कि पिछले दिनों वह सब ब्रांचों के कार्यालयों को भविष्य में किए जानेवाले कार्य के विषय में तार दे रहा था, वहां पर भेजे जानेवाले अध्यक्षों को अधिकार-पत्र दे रहा था और मध्यान्होत्तर तीन बजे से रात के दस बजे तक वह कार्यालय में ही बैठा यह सब प्रबन्ध कर रहा था।

जब लक्ष्मी ने यह बताया कि शकुन्तला आई थी और बता रही थी कि जब उसके पति मिलने आए थे वह तथा सेठजी पिछले दिन कहीं गए हुए थे। गजाधर को विस्मय हुआ था। अब सुमेर को देख उसको एक बात सूझी कि अवश्य ही वह कहीं गया होगा, जहां के बारे में उसने अपनी पत्नी को नहीं बताया। शकुन्तला को विष्णु के मुकदमे का ज्ञान नहीं। इससे सम्भव यही प्रतीत होता है कि वह कल विष्णु के यहां गया है और विष्णु के साथ 'अस्थायी स्थगन' आज्ञा निकलवाने में घूमता रहा है।

इस अनुमान की उसने परीक्षा कर ली और सुमेर के घबराए हुए मुख को देख समझ गया। सेठजी भी गजाधर के प्रश्न का आशय समझ गए थे। वे देख रहे थे कि गजाधर यह जानने का यत्न कर रहा है कि इस मुकदमे में सुमेर का कितना हाथ है। सेठजी ने सुमेर के मुख पर आश्चर्य के लक्षण भी देखे थे। इसपर उन्होंने एक और बात कही, "यह तो विष्णु ने बताया है कि उसकी पूर्ण योजना सुमेर की राय से बनी है।"

इसपर तो सुमेर घबराया और चुपचाप उठ जूता पहनकर सेठजी की बैठक से बाहर निकल गया। वहां से वह सीधा विष्णुसहाय के घर पहुंचा। विष्णुसहाय के घर में झगड़ा हो रहा था। मोहिनी और रामस्वरूप ने जब से यह समाचार सुना था कि उनके लड़के ने अपने बाबा पर मुकदमा किया है तो वे क्रोध से लाल-पीले हो रहे थे।

जब सुमेर उनकी बैठक में पहुंचा तो मोहिनी कह रही थी, "तुमने आज बाबा पर मुकदमा किया है तो कल हमपर भी करोगे क्या?"

"यदि आप उचित व्यवहार नहीं करेंगी तो करना ही पड़ेगा।"

"देखो विष्णु," रामस्वरूप ने कहा, "उचित और अनुचित का निर्णायक कौन हो सकता है?"

"सरकार की ओर से नियुक्त न्यायाधीश।"

"पर उससे पहले तुम्हारी आत्मा क्यों नहीं?"

"वही तो कह रहा हूं कि बाबा ने अन्याय किया था।"

"जरा अपनी आत्मा की बात बता दो कि तुम्हारे साथ क्या अन्याय हुआ है। अरे मूर्ख, जब तुम पैदा हुए थे, उसी दिन से बाबा की फर्म की ओर से तुमको पचास रुपया मासिक भत्ता मिलने लगा था। तुम्

जानते हो कि मैं फर्म की नौकरी नहीं करता। मैं अपना स्वतन्त्र कार्य करता हूं। इसपर भी तुम्हारे बाबा तुमको भत्ता देते थे। जब तुम स्कूल में भर्ती हुए तो वह भत्ता एक सौ रुपया हो गया। जब कालेज में गए तो तुम्हारा भत्ता दो सौ रुपया मासिक हो गया। तुमने पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी तो तुमको कम्पनी में नौकरी मिल गई। पांच सौ रुपया वेतन हो गया। साथ ही तुमको फर्म के लाभ में हिस्सेदार मान लिया गया। मैं भी और तुम्हारी माता भी हिस्सेदार थे। परन्तु हममें से किसीने भी एक पैसा उस पूंजी में जमा नहीं किया। बताओ, तुम इसको न्याय समझते हो अथवा अन्याय ?"

"मैं उनका पोता हूं। मेरा स्वाभाविक अधिकार है कि मैं उनकी आय का हकदार हूं।"

"स्वाभाविक अधिकार ? वह क्या होता है ? कानून तो ऐसा नहीं है। हां, यह पिता के पुत्र पर वात्सल्य का फल हो सकता है। उनकी सम्पत्ति अपनी कमाई है। यदि वे अपनी इच्छा से कुछ देते हैं तो तुमको कृतज्ञ होना चाहिए।"

सुमेर सब कुछ सुन रहा था। परन्तु वह जो कुछ पूछने के लिए आया था उनके सामने पूछ नहीं सका। विष्णु भी उत्तर नहीं दे सका। इसपर भी उसके मुख से निकल गया "पिताजी, यह कानून गलत है। यह सोशल जस्टिस नहीं है।"

"तो अब नेचुरल जस्टिस से सोशल जस्टिस पर आ गए हो ? समाज से जाकर कहो कि तुम्हारे माता-पिता ने तुमको जन्म दिया है और वह समाज तुम्हारा भत्ता और वेतन नियत कर दे।"

विष्णु ने अब चुप रहना ही ठीक समझा। इसपर मोहिनी ने कहा, "विष्णु, हमने जिस समय से तुम्हारी करतूत का समाचार सुना है, हम यहां बैठे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम आए हो तो बताओ, इस घर में तुम रहोगे, अथवा हम। हम सामान बांधकर तैयार बैठे हैं। यह घर तुम अपना समझते हो या हमारा ?"

"घर उसका है जो इसका भाड़ा दे।"

"पिछले बीस वर्ष से भाड़ा तो मैं दे रही हूं। इसपर भी तुम मेरा मतलब नहीं समझे। मैं यह कह रही हूं कि इस घर में तुम रहोगे या हम रहेंगे ? मैं उस छत के नीचे नहीं सो सकती जिस छत के नीचे तुम

सोओ।"

"मैं तो इस घर मे रह रहा हूं। मुझे आपके साथ रहने में हानि नही प्रतीत होती। इस कारण मुझे यहा से भागने मे कोई कारण नही प्रतीत होता। आपको यहा नहीं रहना हो तो आप विचार कर लें।"

"ठीक है, हमने विचार कर लिया है।" इतना कह मोहिनी उठ टेलीफोन के पास जाकर चोगा उठा एक नम्बर मागने लगी। विष्णु और सुमेर देख रहे थे कि वह जुग्गीमल एण्ड सन्स के गेस्ट हाउस का नम्बर था। दूसरी ओर से उत्तर आया तो मोहिनी ने पूछा, "भापा, आपके मकान मे कोई कमरा खाली है?"

"............ .. ..."

"अपने लिए चाहिए।"

"...... ...."

"कुछ बात है जो इस समय टेलीफोन पर नही बता सकती।"

"...... ...."

"मैं वहा तब तक रहना चाहती हू जब तक अपने पृथक् मकान का प्रबन्ध नही हो जाता।"

".... ... ."

"मैं आ रही हू। मेरे साथ विष्णु के पिता, विष्णु के छोटे भाई-बहिन भी आ रहे हैं।"

"................"

"विष्णु नही आ रहा है। वह अपने बाल-बच्चो के साथ इसी मकान मे रहेगा।"

"................"

"हम अभी आ रहे हैं।"

३

देखते-देखते मोहिनी और उसका पति अपने दो छोटे बच्चों को लेकर और दो सूटकेस और दो अटैंची केस और चार बिस्तर तथा बच्चो के ट्रक लेकर मकान के नीचे उतर गए।

जब वे चले गए तो सुमेर ने पूछा, "विष्णुजी, इनको क्या हो गया है ?"

"तुमने उनसे क्यों नहीं पूछा ?"

"मैं तो अनभिज्ञ बना बैठा था।"

"पर वे तो जान गए हैं कि तुम मुझसे पिछले कई दिनों से मेल-जोल बनाए हुए हो।"

"सुनो, तुमने सेठजी से कहा था कि जो कुछ तुम कर रहे हो, मेरी राय से कर रहे हो ?"

"नहीं, उनका-मेरा तो आमना-सामना ही नहीं हुआ।"

"उन्होंने मुझसे यह कहा है कि तुमने स्वयं बताया है कि तुम यह मुकदमा मेरी राय से कर रहे हो।"

"नहीं सुमेर, मैंने नहीं कहा। तुमको यह बहकाने के लिए कहा गया प्रतीत होता है।"

"और गजाधर ने यह कहा है कि उसने मुझे कल तुम्हारे साथ घूमते देखा है।"

"यह हो सकता है, कल तुम और मैं साथ ही घूम रहे थे।"

"अब इस बात का सन्देह हो जाने पर मैं तुम दोनों में मध्यस्थ का कार्य नहीं कर सकूंगा।"

"तुम मेरी ओर से तो कार्य कर सकोगे ?"

"उससे वह लाभ नहीं हो सकेगा जिसकी कि मैं आशा करता था।"

"देखो सुमेर, मैं यह देख रहा हूं कि माता-पिता के यह मकान छोड़ जाने से मैं परिवार में बदनाम हो जाऊंगा और परिवार में कोई भी मेरी सहायता नहीं कर सकेगा। मैं तुमपर बहुत भरोसा करता हूं।"

"दादा, मैं तो तुम्हारे साथ हूं। मैं तो केवल यह कह रहा हूं कि अब उतने लाभ की आशा नहीं हो सकती।"

"जितना भी हो करना चाहिए।"

"तो अभी दो-तीन पेशियां होने दो। तब तक एक महीना तो गुज़र ही जाएगा। बाद में मैं अपना कार्य आरम्भ करूंगा।"

"ठीक है।"

सुमेर गया तो विष्णु अपने माता-पिता के चले जाने पर विचार करने लगा। यों तो वह एक वर्ष से ज्यादा माता-पिता और अपनी पत्नी

से पृथक् इङ्गलैण्ड मे रह आया था। परन्तु तब उनसे सुलह थी और अब झगड़ा। वह अंग्रेज़ी समाज की बात पर विचार कर रहा था। उस समाज में पुत्र जीविका अर्जन करने लगता है तो वह माता-पिता से पृथक् हो रहने लगता है। हिन्दुस्तानी समाज में तो बात उसके विपरीत थी। संयुक्त परिवार की प्रथा के कारण पुत्र तब तक माता-पिता के परिवार का अंग रहता है जब तक पिता पुत्र को पृथक् न कर दे। अर्थात् पुत्र का पिता से पृथक् होना एक अपवाद होता है, नियम नहीं। यद्यपि विष्णुसहाय इस प्रथा को मानना नहीं चाहता था, वह सयुक्त परिवार को व्यर्थ का बन्धन मानता था, परन्तु वह अपने माता-पिता के घर से चले जाने पर अपनी हानि समझने लगा था। वह इस प्रकार अभी शोकमुद्रा मे बैठा ही था कि उसकी पत्नी रेणु वहा आ गई। उसने पूछा, "अभी खाली हुए हैं या नही? आपके लिए चाय तैयार है।"

विष्णु अपनी पत्नी से व्यापार की बातचीत नही किया करता था। वह उसे इतनी बुद्धिमान नही समझता था जिससे व्यापार की पेचीदा बातें की जाए। वह एक निर्धन परिवार की लडकी थी और जब उसका विवाह हुआ था तो नियमानुसार उससे भी पूछा गया था कि वह भी परिवार के व्यापार मे, हानि-लाभ मे भागी बनेगी अथवा नही। घर मे दामादो और बहुओ के आने पर उनसे लिखा-पढी की जाती थी। परिवार की प्रथा थी कि लाभ के साथ-साथ हानि मे भी सम्मिलित होने के लिए उनसे लिखा लिया जाए।

रेणु से पूछा गया तो उसने कह दिया, "मेरी तो आपसे साझेदारी है। वह भगवान ने निश्चय की है। मुझे और किसीसे साझेदारी नही करनी।"

"पर पति-पत्नी के सम्बन्ध से व्यापार अलग चीज़ है।"

"मेरे लिए सब कुछ इसी सम्बन्ध में आ जाता है।"

"तो तुम अपने नाम से पारिवारिक व्यापार में भागीदार बनना नही चाहती।"

"आप जो हैं?"

विष्णु समझा कि वह मूर्ख लड़की है। इसपर भी रेणु में कुछ गुण थे जिसके कारण उसको पसन्द किया जाता था। घर में इतनी

हुई वह कीर्तन और संगीत बहुत ही मधुर आवाज़ में किया करती थी। इसी एक गुण के कारण वह पति और सास-श्वसुर से पृथक् गिनी जाती थी।

रेणु ने जब चाय की याद कराई तो विष्णु को स्मरण आ गया कि प्रातः दस बजे से उसने कुछ खाया-पिया ही नहीं। अतः वह उठा और पत्नी के साथ दूसरे कमरे में चला गया। वहां मेज़ पर चाय लगी थी। वे वहां बैठे तो नौकरानी ने मेज से कपड़ा उठा दिया और टी पॉट में चाय का पानी लाकर रख दिया।

रेणु ने दोनों के लिए चाय बनानी आरम्भ की और पूछने लगी, "व्यापार का काम समाप्त हो गया है लेकिन आप तो पहले से भी अधिक व्यस्त रहने लग गए हैं?"

"हां, अब नया काम ढूंढ़ने की भाग-दौड़ हो रही है न।"

"तो क्या माताजी किसी नये काम के करने से नाराज़ हैं?"

विष्णु ने पूर्ण बात बताना व्यर्थ समझ कह दिया, "हां।"

"तो वे ठीक नहीं कहतीं क्या?"

"तो खाएंगे-पीएंगे कहां से?"

"मैंने तो सुना है कि आप लखपती हैं। आपको व्यापार करने की क्या आवश्यकता है?"

"कैसे जानती हो कि मैं लखपती हूं।"

"मैं कभी-कभी आपकी बैंक की पास बुक और आपकी फिक्स्ड डिपोज़िट की रसीदें देख लिया करती हूं।"

"और कितना है उनमें?" विष्णु ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

"जहां तक मुझे स्मरण है, तीन-चार लाख तो हैं ही।"

विष्णु हंस पड़ा। रेणु हंसने का अर्थ न समझ विस्मय से पति का मुख देखने लगी। विष्णु ने गम्भीर होकर कहा "इससे तो अधिक ही है।"'

"तो फिर चिन्ता की क्या बात है? देखिए, मैं तो मन में यह कल्पना किया करती हूं कि एक दिन आप सांसारिक कामों से निवृत्त हो जाएंगे तो आप और मैं किसी देहात में एक छोटा-सा बंगला बनाकर उसमें शान्ति से रहेंगे।"

"और वहां दिन-भर क्या करेंगे?"

"इस व्यापार के अतिरिक्त और बहुत कुछ है करने के लिए। मैं प्रात.काल उठकर प्रभु का कीर्तन किया करूंगी और आप मेरे कीर्तन पर मुग्ध हो स्वयं कीर्तन करने लग जाया करेंगे। प्रात.काल के दो-तीन घण्टे तो इसमे निकल जाया करेंगे।

"तदनन्तर भोजन कर कुछ विश्राम कर हम वंसी ले मछली पकडने अपने बगले के समीप तालाव के किनारे चले जाया करेंगे। वहा जब वंसी लगा देंगे तो मछलिया फसने की प्रतीक्षा मे बैठे-बैठे मीठी-मीठी प्रेम की बातें किया करेंगे। रात को घर आएगे तो खुद खाना बनाकर भोजन करने मे बहुत अधिक स्वाद आया करेगा। मैं आपको बासुरी सुनाया करूंगी और आप मुझसे प्रेम किया करेंगे।"

विष्णु अपनी पत्नी की इस प्रकार की बातें सुनने का अभ्यस्त हो चुका था। वह भावुक पत्नी की भावुकतापूर्ण बातें सुन हसा करता था। आज भी वह खूब हसा परन्तु आज वह हसने के साथ उससे पूछने लगा, "अच्छा तो बासुरी सुनाने के बाद फिर क्या करोगी ?"

"रात का भोजन कर प्रेमपूर्वक व्यवहार करते हुए सो जाया करेंगे।"

"और फिर ?"

"फिर प्रात' नीद खुलने पर वैसा ही करेंगे।"

"नित्य एक ही प्रकार का कार्य करते हुए ऊब नही जाएगे ?"

"रोज़-रोज़ एक ही बात क्यो होगी ? न तो मैं एक ही गाना गाऊंगी, न ही बासुरी पर एक ही धुन बजाऊंगी। न ही एक मछली पकड़ी जाएगी। कभी कोई बडी पकडी जाएगी कभी कोई छोटी फिर हम गाव मे कीर्तन भी कराया करेंगे।"

"रेणु ! इसीलिए तो तुम्हे घर के लोग मूर्ख मानते हैं।"

"वे जो चाहें मानें, परन्तु आप तो नही मानते न ?"

"मानता तो मैं भी यही हूं। परन्तु तुम्हारी मूर्खता है मज़ेदार।"

"मैंने क्या मूर्खता की बात की है।"

"जिस कार्य से कुछ लाभ न हो उसमें दिल नहीं लगेगा।"

"मेरे कार्यक्रम से लाभ तो बहुत होगा। यह व्यापार भला क्य. लाभ दे सकता है ? सगीत और भजन से चित्त को शान्ति मिलती है।"

"जब जेब मे धन आता है तो मेरे चित्त को शान्ति मिल जाती है।"

"सत्य ? विना धन का भोग किए भी चित्त प्रसन्न होता है ?"

"होता तो है। जव धन आता है तो उससे जैसा चाहो भोग की आशा वन जाती है। यही आनन्द है।"

"पर उसके लिए तो आपके पास वहुत है। मैं समझती हूं कि पूरे जीवन-भर भी भोग करते रहेंगे तो चुकेगा नहीं। अव शेष धन की कमाई दूसरों को करने दो।"

"रेणु, तुमको मैं लाया तो एक वैश्य के घर से था परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि तुम किसी वंगाली मां-वाप की लड़की हो।"

"तो आपने मेरे माता-पिता से पूछा नहीं ? यह तो उनसे ही पूछने की वात थी।"

"तुम तो जानती ही हो कि मैं दरभंगा गया हुआ था। घर से रूठकर भागा हुआ आवारागर्दी कर रहा था। एक दिन एक गांव में एक मारवाड़ी दुकानदार के घर भोजन करने के लिए गया तो वहां तुम गाती-वजाती मिल गई।

"मैं तुम्हारे मीठे स्वर और नाक-नक्श पर मुग्ध था। मैंने गांव से कलकत्ता का रास्ता पकड़ा और अपनी माताजी को तुम्हारी माताजी से मिलने की वात कही तो वे राज़ी नहीं होती थीं। वहुत मिन्नत-समाजत कर उनको भेजा तो वे भी तुम्हारा भजन सुन तुम-पर मुग्ध हो गई और वात पक्की हो गई।

"उन्होंने भी नहीं पूछा कि तुम एक मारवाड़ी के घर में वांसुरी वजानेवाली कैसे वन गईं। जव से तुम आईं दो-तीन वार ही तुम्हारे माता-पिता तुमसे मिलने के लिए आए हैं और तुमको सुखी देख लौट गए हैं।"

"देखिए जी, आप धन कमाते-कमाते थकते नहीं तो मैं समझती हूं कि परमात्मा का कीर्तन और भजन सुनते-सुनते भी थकेंगे नहीं।"

"नहीं रेणु, तुम यह समझ लो कि मैं दिन-भर की भाग-दौड़ के उपरान्त जव तुम्हारे भजन सुनता हूं तो सुख अनुभव करता हूं। परन्तु मैं जानता हूं कि यदि भाग-दौड़ न करूं तो तुम्हारे भजन भी अरुचिकर लगने लगेंगे। यह भाग-दौड़ ही उनमें मिठास भरती है।"

"पर मैं तो जव इनको गाने लगती हूं तो आनन्दविभोर हो जाती हूं।"

"तभी तो कहता हूं कि तुम हमारी जात की नहीं हो।"

चाय समाप्त हो चुकी थी। उसने कहा, "आज तो आपने खूब भाग-दौड की मालूम होती है। कहे तो बासुरी सुनाऊ ?"

"नही, कोई भजन सुनाओ।"

रेणु भीतर गई और तानपूरा उठा लाई। और कमरे में रखे एक दीवान पर बैठ तानपूरे को स्वर मे करने लगी। थोड़ा स्वर ठीक किया और वह गाने लगी :

"मन कोकिला मधुर स्वर मे गा, खिल उठे फूल मधुमास आया
गुण गा मनमोहन के अब तू, मन गुण मे मेरा भरमाया॥
मन कोकिला····"

४

रेणु के तीन बच्चे थे। दो लडके और एक लडकी। सबसे बडा लडका मनमोहन पाच वर्ष का था। दूसरा लडका सुरेन्द्र चार वर्ष का था और गुड्डी, जो अभी छ मास की ही थी, लडकी थी। जब वह गाने लगी तो दोनो लडके अपने खेल छोड उसी कमरे मे चले आए थे। मनमोहन तो मा की नकल उतारने लगा था परन्तु सुरेन्द्र अभी सुनता ही था।

विष्णु के मस्तिष्क मे कश्मीर के निशात बाग का चित्र बनने लगा था। विवाह के अगले ही मास वह पत्नी सहित वहा घूमने के लिए गया था। नव यौवना सुन्दर पत्नी के साथ निशात बाग के मध्य मे बारहदरी में खडा वह सामने क्यारियो मे अनेकानेक रगो मे खिले फूलों को मन्द-मन्द वायु मे अठखेलिया करते हुए देख, जो उल्लास तब उत्पन्न हुआ था, आज वह पुन सजीव हो उठा था। रेणु सामने बैठी उस खिली गुलजार बगिया के विषय मे, जो उसने वहा देखी थी, गा रही थी। उसे अपने बच्चे ही खिलते फूल दिखाई दे रहे थे।

जब बीस मिनट तक वह वसन्त की महिमा और प्रभु का धन्यवाद गानकर चुकी तो उसने तानपूरा रख दिया और पूछा, "उकता तो नही गए ?"

"नही, दिन-भर के धूल-धक्कड़ मन से उतर रहा है।"

"तो और सुनाऊं ?"

"सत्य ? विना धन का भोग किए भी चित्त प्रसन्न होता है ?"

"होता तो है। जब धन आता है तो उससे जैसा चाहो भोग की आशा बन जाती है। यही आनन्द है।"

"पर उसके लिए तो आपके पास बहुत है। मैं समझती हूं कि पूरे जीवन-भर भी भोग करते रहेंगे तो चुकेगा नहीं। अब शेष धन की कमाई दूसरों को करने दो।"

"रेणु, तुमको मैं लाया तो एक वैश्य के घर से था परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि तुम किसी बंगाली मां-बाप की लड़की हो।"

"तो आपने मेरे माता-पिता से पूछा नहीं ? यह तो उनसे ही पूछने की बात थी।"

"तुम तो जानती ही हो कि मैं दरभंगा गया हुआ था। घर से रूठकर भागा हुआ आवारागर्दी कर रहा था। एक दिन एक गांव में एक मारवाड़ी दुकानदार के घर भोजन करने के लिए गया तो वहां तुम गाती-बजाती मिल गईं।

"मैं तुम्हारे मीठे स्वर और नाक-नक्श पर मुग्ध था। मैंने गांव से कलकत्ता का रास्ता पकड़ा और अपनी माताजी को तुम्हारी माताजी से मिलने की बात कही तो वे राजी नहीं होती थीं। बहुत मिन्नत-समाजत कर उनको भेजा तो वे भी तुम्हारा भजन सुन तुम-पर मुग्ध हो गईं और बात पक्की हो गई।

"उन्होंने भी नहीं पूछा कि तुम एक मारवाड़ी के घर में बांसुरी बजानेवाली कैसे बन गई। जब से तुम आई दो-तीन बार ही तुम्हारे माता-पिता तुमसे मिलने के लिए आए हैं और तुमको सुखी देख लौट गए हैं।"

"देखिए जी, आप धन कमाते-कमाते थकते नहीं तो मैं समझती हूं कि परमात्मा का कीर्तन और भजन सुनते-सुनते भी थकेंगे नहीं।"

"नहीं रेणु, तुम यह समझ लो कि मैं दिन-भर की भाग-दौड़ के उपरान्त जब तुम्हारे भजन सुनता हूं तो सुख अनुभव करता हूं। परन्तु मैं जानता हूं कि यदि भाग-दौड़ न करूं तो तुम्हारे भजन भी अरुचिकर लगने लगेंगे। यह भाग-दौड़ ही उनमें मिठास भरती है।"

"पर मैं तो जब इनको गाने लगती हूं तो आनन्दविभोर हो जाती हूं।"

"तभी तो कहता हूं कि तुम हमारी जात की नही हो।"

चाय समाप्त हो चुकी थी। उसने कहा, "ग्राज तो ग्रापने खूब भाग-दौड की मालूम होती है। कहे तो वासुरी सुनाऊं ?"

"नही, कोई भजन सुनाओ।"

रेणु भीतर गई और तानपूरा उठा लाई। और कमरे मे रखे एक दीवान पर बैठ तानपूरे को स्वर में करने लगी। थोड़ा स्वर ठीक किया और वह गाने लगी .

"मन कोकिला मधुर स्वर मे गा, खिल उठे फूल मधुमास ग्राया
गुण गा मनमोहन के ग्रब तू, मन गुण मे मेरा भरमाया॥
मन कोकिला · · ·"

४

रेणु के तीन बच्चे थे। दो लडके और एक लडकी। सबसे बडा लडका मनमोहन पाच वर्ष का था। दूसरा लडका सुरेन्द्र चार वर्ष का था और गुड्डी, जो ग्रभी छ· मास की ही थी, लडकी थी। जब वह गाने लगी तो दोनों लडके ग्रपने खेल छोड उसी कमरे मे चले ग्राए थे। मनमोहन तो मा की नकल उतारने लगा था परन्तु सुरेन्द्र ग्रभी सुनता ही था।

विष्णु के मस्तिष्क मे कश्मीर के निशात बाग का चित्र बनने लगा था। विवाह के ग्रगले ही मास वह पत्नी सहित वहा घूमने के लिए गया था। नव यौवना सुन्दर पत्नी के साथ निशात बाग के मध्य में बारहदरी में खडा वह सामने क्यारियों में ग्रनेकानेक रगो मे खिले फूलों को मन्द-मन्द वायु मे ग्रठखेलिया करते हुए देख, जो उल्लास तब उत्पन्न हुग्रा था, ग्राज वह पुन सजीव हो उठा था। रेणु सामने बैठी उस खिली गुलजार बगिया के विषय में, जो उसने वहा देखी थी, गा रही थी। उसे ग्रपने बच्चे ही खिलते फूल दिखाई दे रहे थे।

जब बीस मिनट तक वह वसन्त की महिमा और प्रभु का धन्यवाद गानकर चुकी तो उसने तानपूरा रख दिया और पूछा, "उकता तो नही गए ?"

"नही, दिन-भर के धूल-धक्कड मन से उतर रहा है।"

"तो और सुनाऊं ?"

"हां, बहुत कृपा होगी।"

रेणु ने फिर तानपूरा उठाया और गाने लगी :

"मनमोहन की छवि देख देख मुग्धमयी वनिता उदार। मन···
सब घर बाहर मन से बिसार, पुलकित मन के हिल उठे तार॥ मन··
लगे सुनाने मधुर बांसुरी मधुवन में मच गई गुञ्जार। मन···
नाच उठो मन मेरे बावरे देख देख प्रभु लीला अपार॥ मन···

विष्णुसहाय यह अनुभव करने लगा था कि सत्य ही वह जीवन के रस को व्यर्थ के धन-दौलत पर बलि चढ़ा रहा है। पत्नी ने जब तानपूरा रख दिया तो विष्णु ने पूछा, "अच्छा, यह बताओ कितने में हम सुखपूर्वक निर्वाह कर सकते हैं?"

"मैं तो समझती हूं कि मकान अपना हो और किसी देहात में रहना हो तो बीस-तीस रुपया मासिक पर्याप्त होगा।"

"बस?"

"तो और क्या? देखिए जी, मैं अपने बाबा के घर में रहती थी तो बाबा के घर का खर्चा मैं किया करती थी। हम तीन प्राणी थे। बाबा, मां और मैं। घर के पीछे प्रांगण में बैंगन, भिण्डी, कोहड़ा इत्यादि सब्जियां लगा लेते थे। मां तलैया से मछली पकड़ लाया करती थीं और मैं भूनकर तैयार कर देती थी। दो रुपया में बोरा-भर चावल मिल जाते थे, जो हम तीन प्राणियों के लिए छः मास तक निकल जाते थे। कपड़े के लिए हम नियम से पांच-दस रुपया प्रतिमास व्यय करते थे।"

"और बच्चों की पढ़ाई?"

"मैं भी तो पढ़ी हूं।"

"क्या पढ़ी हो?"

५

"सबसे बढ़िया विद्या, अपने प्रियतम को मोह लेने की कला। हमारे पड़ोस में एक बनर्जी बाबू, गांव के ज़मींदार, रहते थे। उनकी पत्नी सरला मुझे बंगला, हिन्दी और संगीत सिखाती थीं। स्वर में मधुरता भगवान ने दी है और उस स्वर में चेतना भर दी नलिनी

वनर्जी ने। दो गुण मिले तो एक दिन भगवान घर पधारे और मुझ माता-पिता से हर लाए।"

"पर लड़को के लिए तो इतने से काम नही चलेगा।"

"तो आप स्वय को भगवान से अधिक बुद्धिमान मानते हैं? देखिए, एक दिन की बात बताती हू। बाडीसाल के एक हमारी जात के सेठ आए थे। वे वनर्जी के घर सपत्नीक ठहरे हुए थे। सेठानीजी को मेरा सगीत पसन्द आया और मुझे अपने लडके के मनोरजन के लिए अपने घर ले चलने का विचार बना बैठी। बातचीत माताजी से होने लगी। परन्तु जव सेठानीजी को पता चला कि मैं मछली खाती ही नही वरच पकडकर छील, पोछ और भून भी लेती हू तो उनका उत्साह ठडा पड गया।

"वे मा से पूछ बैठी, 'इतना पापकर्म क्यो करती हैं आप?'

"मा समझी नही और पूछने लगी, 'कौन-सा पाप?'

"'यह मछली मारना और भूनकर खा जाना।'

"मा ने अव समझा और कहा कि इससे अनायास शरीर का पालन हो जाता है। परिणाम यह है कि हमे व्यापार मे धोखाधडी, झूठ, सत्य और अनेक प्रकार के हेर-फेर करने की आवश्यकता नही पडती। इस थोडे-से पाप से महान पापकर्मों से वच जाते हैं। मछली यहां वेदाम की मिलती है। चावल रुपये-बारह आने का लगभग एक मास चल जाता है। इतने के लिए रेणु के पिता को झूठी बही नही लिखनी पडती। किसी निर्धन को दिए गए ऋण पर ब्याज छोडने मे भी असुविधा नही होती।"

"सेठ और सेठानी बनर्जी के घर वापस चले आए और मैं आपकी प्रतीक्षा मे वासुरी बजाती रही।"

"तो तुम जानती थी कि मैं आऊगा?"

"सब लडकियो के पति आते हैं। जो भगवान की प्रेरणा से आते हैं वे इस उद्यान का मधुर प्रेममय फल पाते हैं। यही बात तो आपके विषय मे हुई है।

"आप गाव मे आए थे। बहुत थके हुए और भूख से व्याकुल हो रहे थे। आपने बाबा की दुकान पर खडे हो उनसे पूछा, 'लाला, कुछ खाने को मिलेगा?'

"आप तो अंग्रेज़ी ढंग के कपड़े पहने हुए थे, इस कारण बाबा ने कह दिया, 'भोजन का समय है, यदि सादा भोजन कर सको तो तैयार है।'

"'तो खिला दीजिए।' आपने इतना कहा तो बाबा आपको भीतर ले आए। मैं उस समय अपने संगीत का अभ्यास कर रही थी। बाबा ने आपको घर के बरामदे में बैठा भोजन करा दिया। आप भूखे थे और मछली, बैंगन, चावल रुचिपूर्वक खा गए।

"उसी रात बाबा ने मां को बताया था कि आप कलकत्ता के किसी बड़े सेठ के लड़के हैं और रेणु को विवाहने के लिए मां को भेजने की बात कह गए हैं।

"मां ने बात सुनी-अनसुनी कर दी। वे कुछ उत्साहित नहीं हुई थीं। परन्तु जब सचमुच ही आपकी माताजी आई तो बात बदली। मांजी ने हमारा घर-बाहर और घर का संक्षिप्त-सा सामान देखा। सबसे अन्त में वे रसोईघर में आई तो मुझे एक उसी दिन पकड़ी बड़ी मछली को साफ करते देख हंस पड़ीं।

"मैं प्रश्न-भरी दृष्टि से उनके मुख की ओर देखने लगी तो वे मां से बोलीं, 'तो यह गुण है तुम्हारी लड़की का जिसपर विष्णु मुग्ध हो गया है?'

"मां ने उत्तर दिया, 'यह गुण तो लड़की यहीं छोड़कर भी जा सकती है। परन्तु उसने तो कुछ और देखा था। आप बैठिए, भोजन आदि कर लीजिए, फिर वह गुण भी दिखला दिया जाएगा।'

"आपकी मां ने कहा, 'पर मैं तो यह खाती नहीं।'

"'तो आपके लिए बनर्जी बाबू के बगीचे से फल ला सकती हूं।'

"'क्या फल मिल जाएंगे?'

"'बहुत मीठे और नरम-नरम केले हैं। अमरूद हैं, अनानास हैं, इनकी चाट बना देती हूं। चावल भी साथ मिल जाएंगे।'

"आपकी माताजी चुप रहीं। उस दिन मांजी भोजन तैयार करने लगीं तो मुझसे बोलीं, 'देखो बेटा, जरा अपना तानपूरा लेकर भगवद्-भजन करो, जिससे तुम्हारी नौका पार लग सके।'

"'यह कौन हैं मां?'

"'कोई हैं। पता चल जाएगा कि क्या हैं और क्यों हैं।'

"मैं अपने कमरे मे गई और तानपूरा उठा स्वर भरने लगी तो आपकी माताजी कमरे मे आकर सामने बैठ गईं। मैंने गाया था—

"प्रभु मेरे अवगुण चित न धरो।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो ही नीर भरो।
सब मिलकर इकसार भई, जब सागर मे उतरो।
अब मेरे अवगुण चित न धरो।

"मैं गाती रही, माताजी सुनती रही। मैं आखे मूदे गा रही थी और विचार कर रही थी कि ये भी कोई बाडीसालवाली सेठानी जैसी ही होगी।

"जब गा चुकी और तानपूरा नीचे रखा तो वे बोली, 'इधर आओ, बेटी।'

"मैं उनके सामने खडी हो गई। मैं उनके मुख को देख विस्मित-सी पूछने लगी, 'आपके गालो पर ये आसू कैसे हैं?'

"परन्तु मेरे वाक्य पूरा करने से पहले ही उन्होने मेरी बाह पकड़कर मुझे अपने पास बैठा लिया और गले से लगाकर बोली, 'देखो बेटा, मैं तुमको अपने घर ले चलने का विचार कर रही हू। पर एक वचन दो, तभी यह करूगी।'

"मैं विचार कर रही थी कि ये मछली खाना छोडने की बात कहेंगी। मुझे तो उसके छोडने मे कुछ भी बाधा का भास नही होता था। जब पेट भरने के लिए कुछ अन्य वस्तु मिलने लगेगी तो उसको खाना आवश्यक नही रह जाता।

"परन्तु वे बोली, 'ऐसा एक गीत नित्य प्रात.काल मुझे सुनाना होगा।'

"मैंने माजी के चरण स्पर्श किए तो उन्होंने मेरा माथा चूमकर कह दिया, 'तुम मेरी बहू हो गईं। ठीक है न?'

"यह हुई थी प्रतिज्ञा पूरी। आप तो यहा भी मछली ही खिलाते रहे हैं। यद्यपि आप उससे बढिया सागभाजी खरीद सकते थे परन्तु आप खाते हैं तो मैं भी खा लेती हू। इस घर मे इसकी वह आवश्यकता नही जो बाबा के घर मे थी।"

"परन्तु रेणु, मुझे तुम्हारी वह बीस-तीस रुपये मासिक में गुजारा करने की योजना पसन्द नही।"

"देखिए न! कम खर्चे में निर्वाह करने से कितने पापकर्मों से बचा जा सकता है?"

"तो तुम समझती हो कि मैं कोई महान पापकर्म कर रहा हूं।"

"जी नहीं। मैं यह नहीं समझती। पर मैं यह तो समझ रही हूं कि मांजी रूठकर चली गई हैं।"

"वे अपने पिता के घर गई हैं।"

"किसलिए?"

"उनकी माताजी अपनी ससुराल गई हुई हैं और बाबा को खाने-पीने का कष्ट हो रहा था।"

"पर वे यहां आ सकते थे।"

"वे पुराने विचार के व्यक्ति हैं, लड़की के घर आकर नहीं रह सकते।"

"तो मुझे एक बात करनी होगी।"

"क्या?"

"उनको नित्य प्रातःकाल संगीत सुनाने के लिए उनके निवास-स्थान पर जाना होगा।"

"हां, हां, तुम जा सकती हो।"

"तो अपनी गाड़ी के कोचवान को कह दें कि प्रातः चार बजे गाड़ी यहां ले आया करे।"

विष्णु अनिश्चित मन मुख देखता रह गया। इस मौन पर रेणु ने कहा, "मैंने उनको नित्य प्रातःकाल भजन सुनाने का वचन दे रखा है।"

"अच्छी बात है, तुम्हारे जाने का प्रबन्ध कर दिया जाएगा।"

वास्तव में इस गाने-बजाने में लीन और भावुक स्त्री से न तो इसकी सास और न ही इसके पति ने व्यापार की बातें कभी की थीं। रेणु भी अपने पति को सन्तुष्ट रखने और सास को संगीत सुनाने में ही जीवन सार्थक कर रही थी। व्यापार में हलचल उसको ऐसी लगती थी जैसे कमरे में बैठे को बाहर सड़क पर चल रही ट्राम गाड़ी की गड़गड़ाहट लगती हो। कमरे में बैठा व्यक्ति जब इस नाद का अभ्यस्त हो जाता है तो फिर वह इस शोर को सुनता हुआ भी अपने कार्य लीन रहता है। यही बात इस घर में रेणु की हो गई थी।

मोहिनी के रूठकर जाने का ज्ञान उसको था परन्तु क्यों रूठकर गई है और किससे रूठकर गई है, यह वह नही जानती थी।

६

मोहिनी के चार बच्चे थे। विष्णु सबसे बड़ा था। उससे छोटी लड़की थी श्यामा। जब उसका विवाह हुआ तो वह अपने पति के साथ जापान चली गई। वह जुग्गीमल के कारोबार में सम्मिलित नही हुई और न ही उसका पति हुआ। मोहिनी के दो और बच्चे थे। एक था बनारसीदास। उसकी आयु पन्द्रह वर्ष की थी। मैट्रिक पास कर उसने पढ़ना-लिखना छोड़ दिया था। उसके लिए कोई स्वतन्त्र कारोबार करने का विचार किया जा रहा था। बनारसीदास से छोटा एक और लड़का था। इसकी आयु दस वर्ष की थी। वह स्कूल की पाचवी श्रेणी में पढ़ता था।

मोहिनी और उसके घरवाले रामस्वरूप के इन दोनो बच्चो के साथ जुग्गीमल के मकान में पहुचते ही उनके लिए कमरों का एक सेट खोल दिया गया।

वे जब मकान में सामान रख चुके तो जुग्गीमल आया और पूछने लगा, "विष्णु से लड़ आई हो, मोहिनी?"

"जी।"

"क्यो, क्या हुआ?"

"वह अपने नाना से झगडा करने लगा है। हम उससे सम्पर्क नही रखना चाहते। भापा, हम शीघ्र ही कोई अपना मकान लेकर उसमे रहने लगेंगे।"

"देखो मोहिनी, तुम विष्णु से सुलह रखो अथवा झगडा करो, मेरे लिए तो तुम अपनी लड़की ही हो। और जब तक मेरे पास यह मकान है, तुम इसमें रह सकती हो। बाद में भी जहा मैं रहूगा, वहां तुम्हारे लिए भी व्यवस्था हो सकती है।"

"भापा! आजकल सुमेर विष्णु से बहुत मेल-जोल रखे हुए है। हमारा विचार है कि यह झगडा उसने ही आरम्भ कर दिया है।"

"इसकी चिन्ता तुम न करो। मैं यत्न क...

इस मुकदमे को समाप्त करा दूं। ईश्वर ने चाहा तो शीघ्र ही हमें सफलता मिलेगी।"

जुग्गीमल ने मोहिनी के लिए भोजन की व्यवस्था कर दी और फिर स्वयं घूमने चला गया। गजाधर सेठजी से राय कर कहीं गया हुआ था। मोहिनी के बच्चे स्कूल में पढ़ते थे और अपने-अपने ट्रंक खोल पुस्तकें निकाल पढ़ाई करने लगे।

जुग्गीमल का रसोइया उनके लिए चाय ले आया तो पति-पत्नी दोनों बैठकर चाय पीने लगे। रामस्वरूप ने पत्नी से कहा, "मैं आशंका कर रहा था कि तुम्हारे पिता हमसे झगड़ा करेंगे।"

"पर मुझे तो उनसे इसी प्रकार के व्यवहार की आशा थी जैसा वे कर रहे हैं। मैं जब अपने पूर्ण जीवन का अवलोकन करती हूं तो एक बात बड़ी मां और भापाजी में देखती हूं। वैसे तो दान-दक्षिणा परिवार से बाहर भी चलती रहती है परन्तु परिवार में तो उन्होंने प्यासों को जल पिलाने में कभी भी संकोच नहीं किया।"

"मैं तो विष्णु के व्यवहार से लज्जा का अनुभव कर रहा हूं। जब कल हम यह बात समझ गए थे कि हमको अपने पुरुषार्थ और योग्यता से बहुत अधिक मिल गया है तो विष्णु भी यह समझ गया था। फिर यह क्या हुआ कि व्यर्थ का झगड़ा खड़ा कर दिया उसने?"

"मुझे सन्देह है कि यह सब सुमेर ने ही कराया है।"

"सुमेर तो विष्णु से कम पढ़ा-लिखा और कम अनुभवी है। फिर भी विष्णु उसकी बात में दोष नहीं जान सका। परन्तु मैं उसको क्या दोष दूं। दो दिन पहले हम भी तो इसी ढंग पर सोच रहे थे। हम भी तो विष्णु को प्रोत्साहन दे रहे थे कि वह फर्म को समाप्त कर दे और उसकी सर्वोत्तम ब्रांच को अपने नाम करा ले।

"किन्तु हम तो बात को समझकर पीछे हट गए थे और साधारण सदस्यों की सभा में भी हमने विष्णु के विपरीत सम्मति दी थी।"

मोहिनी मुस्कराई और बोली, "आपने पक्ष बदल लिया था परन्तु मैं तो अन्त तक अपना मत उसे देती रही हूं। मैं इसको इस प्रकार समझी हूं कि आप मुझसे शीघ्र समझ रहे थे। मैं विष्णु से शीघ्र समझी हूं। यों तो कल विष्णु भी समझ गया था परन्तु सुमेर की किसी बात ने उसके पक्ष को पुनः मलिन कर दिया है और वह अपने वर्तमान

व्यवहार को ठीक मानने लगा है।"

"इसपर भी मुझे विश्वास है कि वह समझ सकेगा।"

"सेठजी तो कह रहे थे कि वे यत्न कर रहे हैं कि मुकदमा शीघ्र ही समाप्त कर सके। क्या वे कुछ लेने-देने की बात कर रहे है?"

"हो सकता है। पर देखें ऊट किस करवट बैठता है।"

"एक बात निश्चित हो गई," रामस्वरूप ने कहा। "तुम्हारे पिताजी खूब हैं। जब भी आओ, यहा सहिष्णुता और सहानुभूति ही दिखाई देती है।"

"हा, पिताजी तो प्याऊ लगाए हुए हैं। बडी माताजी चाहती थी कि इस प्याऊ को कुए मे बदल दिया जाए परन्तु वह हो नही सका।"

उसी रात गजाधर अपनी पत्नी और बच्चो के साथ मोहिनी के बराबरवाले सेट मे रहने के लिए आ गया। वे भी मोहिनी और उसके पति को वहा टिके देख विस्मय करने लगे।

गजाधर अपना सामान रखवा फिर मोहिनी से मिलने आया और बोला, "बुआ, तुम यहा आ गई हो?"

"हां, गजाधर! हम विष्णु का घर छोड आए हैं।"

"पर वह घर विष्णु का था क्या?"

"मकान तो उसके मालिक का है। हम दोनो किरायेदार थे। विष्णु ने कहा कि वह वहा रहेगा। इस कारण हम अपना सामान उठवा यहा चले आए हैं। भापा ने कहा है कि हम जब तक चाहे यहां रह सकते हैं।"

रामस्वरूप ने बात बदलकर पूछा, "पर तुम तो होटल मे रहने के लिए चले गए थे?"

"हा, मीटिंग के दिनो मे बाहर से आए परिवार के लोगो के लिए जगह चाहिए थी। अतः हम कुछ दिन के लिए होटल मे जाकर रहने लगे थे। अब तो ये कमरे खाली हो गए हैं।"

उस रात इससे अधिक बातचीत नही हुई। सेठ जुगीमल रात के भोजन के समय आया तो सबने एकसाथ बैठकर भोजन किया और फिर सोने के लिए अपने-अपने कमरे मे चले गए।

अगले दिन सेठ जुगीमल की नीद खुली तो उसने किसीको मोहिनी के घर में मधुर कीर्तन करते सुना। स्वर किसी लड़की के गाने का

था। गीत की भाषा बंगला थी।

जुग्गीमल बिस्तर से निकला और कपड़े पहन यह देखने के लिए चल पड़ा कि यह कौन गानेवाली आई है। उसे यह मोहिनी अथवा गजाधर की पत्नी लक्ष्मी की आवाज नहीं लग रही थी।

जब जुग्गीमल मोहिनी की बैठक में पहुंचा तो विष्णु की पत्नी रेणु को तानपूरा लिए बैठे देख चकित रह गया। गजाधर उससे पहले ही वहां आकर खड़ा था। सेठजी को आया देख रेणु ने तानपूरा भूमि पर रख दिया और बैठे-बैठे ही हाथ जोड़, शीश झुका उनको प्रणाम किया।

जुग्गीमल ने सुना तो था कि विष्णु की पत्नी संगीतज्ञ है, परन्तु वह यह आशा नहीं करता था कि इतने मीठे स्वर में और उसके घर में आकर कीर्तन करेगी। उसके लिए यह अप्रत्याशित था। विशेष रूप में आज इतने प्रातःकाल उसका यहां आकर भजन गाने का तो वह स्वप्न में भी विचार नहीं करता था।

इस समय मोहिनी भी अपने कमरे से निकल आई। रेणु ने उसको भी प्रणाम किया और तानपूरा पकड़ उसके मुख की ओर देखने लगी।

मोहिनी उसके सामने बैठ गई और पूछने लगी, "रेणु, तुम कब आई ?"

"मांजी, यहां मकान के नीचे चार बजे पहुंच गई थी। चौकीदार को विश्वास दिलाने में कि आपने मुझे बुलाया है पन्द्रह मिनट लग गए। वह ऊपर ले आया परन्तु मैं जब तक इसको स्वर से गाने नहीं लगी तब तक वह बाहर खड़ा देखता रहा।

"पिछले सात वर्ष से अपने नित्य के काम पर आना भूल नहीं सकी। और फिर आपसे तो मैं वचनबद्ध हूं।"

"अच्छा, तो तुम अपना कार्य करो। भापा, जब मैं विवाह से पूर्व इसको देखने के लिए गई थी तो इसका भजन सुनकर इसको अपने घर लाने में एक शर्त लगा दी थी कि यह नित्य मुझे अपना मधुर संगीत सुनाया करेगी। इसने आज तक अपने वचन का पालन किया है।"

"हां, तो बेटी, तुम अपना वचन पालन करो, कहो तो मैं चला जाऊं।"

"आप तो बाबा हैं। आपको भगवद्भजन अरुचिकर नहीं हो सकता।"

इतना कहकर वह गाने लगी। उसने वही गीत, जो वह गा रही थी, पुन: आरम्भ कर दिया। वह गा रही थी :

"पथ चेये तो काटल निशि लागेछे मने भय
सकाल वेला घूमिये पडि जदि एमन हय
जदि तखन हठात् ऐसे दौडाय आमाय द्वार देशे
वनच्छायापथ घेराय घर आछे तो तार जाना"

आधे घण्टे तक रेणु गाती रही और सेठ, रामस्वरूप, गजाधर और मोहिनी तथा घर के अन्य बच्चे भी, जो जगकर वहा आ गए थे, तथा लक्ष्मी और उसके बच्चे भी, मन्त्रमुग्ध-से उसका भजन सुनते रहे।

जब उसने तानपूरा भूमि पर रखा तो सेठजी बोले, "देखो, प्रातः का अल्पाहार यहीं करके जाना।"

"मेरी घर पर प्रतीक्षा हो रही होगी।"

"तो विष्णु भी सगीत सुनता है?"

"बाबा, मेरी यही निधि है। यही मेरा आश्रय और जीवन-रस है।"

सेठजी ने अपने पाचक को आवाज़ दी। वह आया तो उन्होंने उससे कहा, "थोड़ी मिठाई और जल ले आओ।"

पाचक रसगुल्ले लाया तो रेणु ने एक उठाकर खा लिया। पुनः सेठजी को भूमि पर माथा टेक प्रणाम किया और अपना तानपूरा लेकर चल पड़ी।

रेणु नीचे उतरी तो मोहिनी ने कहा, "मैं यह आशा नहीं कर रही थी कि यह इस कार्य के लिए घर से यहा भी चली आएगी। मैं तो समझती थी कि विष्णु इसको यहा भेजने से मना करेगा।"

"इस लड़की ने मन में एक विचार जगा दिया है।" सेठ बोला।

"क्या?"

कुछ क्षण तक आंखें मूंदे विचार करते रहे। फिर बोले, "यह फिर बताऊंगा। घर मे इस चीज का ज्ञान ही नहीं था।"

"इसने आपके कारोबार में सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया था। जब मैंने कहा कि कुछ सुख-सुविधा हो जाएगी तो बोली, 'वह

। आपकी कृपा से हो ही रही है और फिर इस पांच-सवा पांच फुट ; पुतले को चलाने के लिए कितना कुछ चाहिए। दो छटांक चावल, ़क छटांक दाल पर खर्च ही क्या होता है। इतना तो आपकी जूठन ो भी मिल जाया करेगा।"

"जब से विवाह हुआ है, यह हमारे परिवार के किनारे पर इस प्रकार खड़ी है जैसे तूफानी सागर के किनारे कोई ईश्वर का भक्त शान्तचित्त समाधि में बैठा हो।"

७

मुकदमे की पेशी पर पेशी हो रही थी और कोई न कोई बहाना पड़ जाने से बिना मुकदमे पर बहस हुए अगली तारीख दे दी जाती थी। एक मास से अधिक हो गया था काम ठप्प हुए। आखिर सेशन कोर्ट में मुकदमे का न्यायाधीश बदलने की प्रार्थना करनी पड़ी। न्यायाधीश बदला नहीं गया और उसने आज्ञा कर दी कि जब तक यह फैसला न हो जाए कि इस फर्म का मालिक कौन है, इसपर सरकारी रिसीवर बैठा दिया जाए, जो कारोबार का लेन-देन करता रहे।

सेठ जुग्गीमल ने इस आज्ञा को रद्द करने की अपील की। इस अपील में पुनः प्रश्न उपस्थित हुआ कि अदालत ने पिछले डेढ़ मास में यह निश्चय क्यों नहीं किया कि स्थगन आज्ञा स्थायी रूपेण लागू हो अथवा नहीं। अदालत का इस निर्णय में कठिनाई न बताते हुए फर्म पर एक बाहरी व्यक्ति को पैसा पैदा करने के लिए नियुक्त करना भी अनियमित बताया गया।

इस बार पुनः बहस हुई कि व्यापार की गति को रोकने अथवा न रोकने के विषय में निर्णय क्यों नहीं दिया गया। इस बार सेशन कोर्ट ने पूर्ण मुकदमे की फाइल अपनी अदालत में मंगवा ली और यह निर्णय दे दिया कि कारोबार पर स्थगन की आवश्यकता नहीं। विष्णु-सहाय का अधिकार नहीं कि वह फर्म को समेटने में बाधा खड़ी करे। यदि उसको कोई दावा करना हो तो वह पृथक् करे।

इस सब कार्य में दो मास लग गए। पारिवारिक व्यवहार यथापूर्व चलता रहा। सुमेर और विष्णु का मेल-जोल चल रहा था। विष्

की पत्नी नित्य प्रात. चार बजे अपनी सास को भजन सुनाने आती थी। गजाधर बम्बई के चक्कर काट चुका था। वह सेठजी की एक गुप्त मन्त्रणा के अनुसार बम्बई की बार-बार यात्रा कर रहा था।

बडी मा और सेठ जुग्गीमल की पत्नी गाव में ही थी। बनारस में दर्शन विद्यालय की इमारत का काम बन्द हो गया था। इसे सेठ जुग्गीमल ने मुकदमे के निर्णय तक के लिए रोक दिया था।

जिस दिन सेशन कोर्ट ने विष्णु के विपरीत निर्णय दिया, उसी दिन सायकाल विष्णु सुमेर से राय करने के लिए उसके होटल में पहुंचा तो शकुतला और सुमेर में झगडा हो रहा था। होटल का कमरा भीतर से बन्द था और पति-पत्नी भीतरवाले कमरे मे बैठकर झगड रहे थे।

विष्णु ने द्वार पर थाप दी तो दूर कमरे से क्रोधपूर्ण सुनाई देनेवाले वाक्य रुके। फिर भीतर सोने के कमरे का द्वार खुला और तदनन्तर बाहर का द्वार खुला।

सुमेर ने विष्णु को देखा तो वह घबरा उठा, परन्तु कह कुछ नही सका। वह विष्णु का मुख देखता रहा। विष्णु ने ही बात आरम्भ करते हुए कहा, "मुझे खेद है कि मैंने तुम्हारी पत्नी से प्रेमपूर्ण सगति मे विघ्न डाला है। परन्तु भाई साहब, अभी तो साय के चार बजे हैं।"

सुमेर के हसी निकल गई। बोला, "भगवान करे ऐसी प्रेममय वेला किसी भी दम्पति के जीवन मे न आए। आओ विष्णु, भीतर आ जाओ।"

"क्या हो रहा था?" विष्णु समझ गया था कि पति-पत्नी लड़ रहे थे। इसपर भी उसने बिना मन की बात बताए पूछ लिया, "बच्चा कहां है?"

"दाई के साथ घूमने गया है।"

"शकुंतला कहां है?"

सुमेर ने धीरे से कहा, "भीतर रूठी बैठी है।"

"क्यो?"

"उसे तुमसे चिढ है।"

"तो चलो कहीं बाहर चलकर बातें करे।"

"पर भाई जान, वह तो घर से भाग जाने की बात सोच रही है। ज्यो ही मैंने उसे अकेला छोड़ा कि वह खाट्ट को भागी।"

"तो तुम और विवाह कर लेना।"

"परन्तु···।" वह कुछ और नहीं कह सका। इस समय शकुन्तला सोने के कमरे से बाहर निकल आई थी। वह विष्णु को वहां बैठा देख माथे पर त्योरी चढ़ाकर बोली, "तो आप आ गए हैं? आपकी ही प्रतीक्षा कर रही थी। बैठिए भाई साहब, आपसे आज दो-दो बातें हो जाएं तो ठीक है।"

अभी तक सुमेर और विष्णु सोने के कमरे से दूर बैठकवाले कमरे में धीरे-धीरे बातें कर रहे थे।

विष्णु पति-पत्नी के झगड़े में नहीं पड़ना चाहता था। परन्तु यह सुन कि शकुन्तला को उससे चिढ़ है, वह इसमें कारण जानने की इच्छा से सुमेर की बांह में बांह डाल एक सोफे पर आ बैठा और सुमेर को अपने साथ बैठाकर बोला, "हां, तो भाभी, बताओ, क्या आज्ञा है?"

"आप यहां किसलिए आते हैं?"

"मैं अपने मुकदमे में सुमेर से राय करने के लिए आता था।"

"मुकदमे का तो आज फैसला हो गया है। अब क्या करने के लिए आए हैं आप? अब आप यहां से शीघ्र चल दीजिए।"

"परन्तु भाभी, अभी हाई कोर्ट में अपील भी तो करनी है।"

"ठीक है। परन्तु ये हाई कोर्ट के वकील हैं क्या जो इसमें आपको राय देंगे?"

"आखिर सुमेर खाली जो है। मेरा भाई लगता है। इससे राय करने में हानि क्या है? कभी-कभी तो ये बड़े-बड़े वकीलों के भी कान कुतर लेते हैं।"

"देखिए जी, ये पिछले ढाई-तीन मास से यहां पड़े हैं और धड़ाधड़ रुपया व्यय हो रहा है। मैं यह व्यर्थ का खर्च पसन्द नहीं करती।"

"पर भाभी! यह खर्चा तुमको करना पड़ता है क्या?"

"जब ये बिलकुल अकिंचन हो गए थे, मेरा मतलब है कि इनकी माताजी के सब धन बटोरकर लापता हो जाने के समय, तब इनको मैंने ही पूंजी लाकर दी थी। एक लाख की पूंजी का प्रबन्ध मैंने ही किया था। तीन वर्षों में इन्होंने उस एक लाख का साढ़े तीन लाख कर लिया परन्तु उसमें से आधा इन्होंने अपने पिताजी को व्यर्थ दे दिया और

शेष उस एक लाख से निर्मित पौने दो लाख मेरे बैंक में जमा है। मैं उस पौने दो लाख को अपने ही परिश्रम से एकत्रित पूंजी का फल समझती हूं। आजकल का खर्चा उसमें से ही किया जा रहा है।

"मैंने इनसे कहा है कि या तो बम्बई चलकर कोई कारोबार करें या खाटू में चलकर भगवद्भजन करें। कलकत्ता में रहते हुए धन व्यय करने में कोई युक्ति है क्या?

"ये कहते हैं कि इन्हें आपको मुकदमे में सहायता देनी है। इस कारण यहां ठहरे हैं।

"आज के निर्णय के उपरान्त, मैं समझती हूं कि इनकी राय आपके लिए सफल नहीं हुई। आप मुकदमा हार गए हैं। अब मैं इन्हें राय दे रही हूं कि यहां से चल देना चाहिए।"

"और ये क्या कह रहे हैं?"

"यही कि ये आपका साथ नहीं छोड़ सकते।"

"यह तो सुमेर की अपनेपर बहुत कृपा मानता हूं।"

"हां, पर मैं इसको अपनेपर अन्याय मानती हूं।"

"क्यों सुमेर," विष्णु ने सुमेर की ओर घूमकर पूछ लिया, "तुमने सब धन अपनी पत्नी के नाम कर रखा है?"

"हां, भापा!"

"पर तुम तो कहते थे कि तुमने न्यूयार्क के एक बैंक में रुपया जमा कराया हुआ है?"

"मैं शकुन्तला को न्यूयार्क के बैंक से कम सुरक्षित नहीं समझता।"

"और तुम तो यह कहते थे कि वहां तुम्हारे कई मिलियन डालर हैं?"

सुमेर मुस्कराते हुए चुप रहा। इसका अर्थ विष्णु नहीं समझ सका। सुमेर ने जब विष्णु के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया तो विष्णु ने कहा, "सुमेर, मैंने अपने नाना से मुकदमा इसलिए किया था कि मैं भी तुम्हारे जितना धनी हो कई मिलियन डालर की सम्पत्ति प्राप्त कर तुम्हारे साथ अमेरिका में चलकर व्यापार करूं। परन्तु तुम तो मुझसे भी निर्धन हो।

"अब तो मुकदमा लड़ने में कोई सार नहीं रहा। मैं हाईकोर्ट में अपील करने के विषय में सौ बार विचार करूंगा।

"अच्छा, अब मैं चलता हूं। तुमको आवश्यकता हो तो मुझसे कर मिल लेना।"

जब विष्णु चला गया तो शकुन्तला ने घृणा की दृष्टि से अपने ति की ओर देखकर कहा, "इसीका पक्ष लेकर आप मुझको पीटने-ाले थे!"

सुमेर ने कहा, "वह तो मैं तुमको जरा धमका रहा था। पीट ो सकता ही नहीं था।"

"भला किसलिए धमका रहे थे?"

"मैं कलकत्ता से जाना नहीं चाहता था।"

"पर इस होटल में रहने से कुछ लाभ है क्या?. दो हज़ार रुपये से अधिक प्रतिमास का खर्चा बैठ रहा है।"

"तो कहां चलूं?"

"कहा तो है कि चलिए, आपकी मैं बाबा से सुलह कराए देती हूं।"

"परन्तु तुम तो कहती हो कि उनके चरण स्पर्श करने होंगे?"

"उसका फल तो पृथक् है। सुलह तो बिना चरण स्पर्श किए भी हो सकती है।"

"पर मुझे वहां जाते लज्जा आती है।"

"और अपने इस भाई से मिलने में लज्जा नहीं आती? यह तो आपके कई मिलियन डालर पर दांत लगाए बैठा था।"

"सब कुछ तुमने गड़बड़ कर दिया है। मैं तो उसके कई लाख पर आशा लगाए हुए था।"

"चलो, दोनों का भ्रम निवारण हुआ। अब क्या होगा?"

विष्णु की अवस्था सुमेर से अधिक खराब थी। उसने बीस हज़ार तो मुकदमे और उसके लिए रिश्वत पर खर्च कर दिया था। वह घर से तो यही विचार कर वहां आया था कि सुमेर को कह मुकदमे से छुट्टी पाने का उपाय किया जाए। वह अपने नाना से सुलह कर लेना चाहता था। वहां उसकी पत्नी से सुमेर की आर्थिक स्थिति जान उसको ही सुमेर से पृथक् होने का बहाना बनाकर चला आया।

मुकदमा हार जाने से वह मन में क्षुब्ध तो था परन्तु मुकदमा हारने से अधिक इस काल में नाना से सुलह न हो पाने का दुःख था।

सुमेर ने उसे यह आश्वासन दिलाया था कि वह मुकदमा हार जाने

से पहले ही नाना से सुलह करा देगा। आज वह इसी विषय मे विचार करने सुमेर के होटल में पहुचा था। परन्तु वहा की स्थिति देख अब वह स्वय ही इस दिशा मे यत्न करने का विचार बनाता हुआ लौटा था।

इस समय रात के भोजन मे कुछ समय था। उसके घर मे रेणु का राग-रग चलता था। आज वह ग्रामोफोन के रिकार्ड पर मीरा के कुछ गाने सुन उनकी नकल उतार रही थी।

वह घर पहुचा तो ग्रामोफोन बज रहा था। विष्णु को वह स्वर रेणु के स्वर से कठोर प्रतीत हुआ था। इस कारण उसने बैठक मे दाखिल होते ही कहा, "आज यह क्या हो रहा है?"

"जरा देखने लगी थी कि इनमे क्या रस है।"

"और क्या देखा है?"

"देखिए, यही गाना मैं आपको सुनाती हू।"

विष्णु उसके सम्मुख सोफे पर बैठ गया तो रेणु ने गाना आरम्भ किया,

"मैं तो मोहन हाथ बिकानी…"

विष्णु समझ गया कि उसकी पत्नी इस रिकार्ड मे सगीत भरने-वाली से अच्छा गाती है। जब रेणु गा चुकी तो विष्णु ने ताली बजाकर उसके गाने की दाद दे दी।

"आज तो आप बहुत प्रसन्न मालूम होते हैं," रेणु ने प्रसन्न होते हुए कहा।

"हा," विष्णु ने भी वस्तुस्थिति में पुन. आ बैठते हुए कहा, "एक बहुत बडा काम समाप्त हो गया है।"

"क्या?"

"व्यापार की बात है। तुम तो समझ नही सकोगी।"

"समझ सकूं, तब भी मैं उस कीचड़ मे फसने का विचार नही करती।"

"परन्तु कीचड मे ही तो कमल उत्पन्न होते हैं।"

"वही तो मैं हूं, मैं भी कमल की भाति निर्लेप रहने का यत्न करती रहती हूं।"

"पर देवी, मेरा आज दिवाला पिट गया है"

"तब तो बहुत ठीक हुआ है। अब तो आप किसी देहात में चल-कर रहेंगे?"

"तो तुमको यह मकान छोड़ किसी गांव के गंदे झोंपड़े में चल-कर रहना अधिक अच्छा प्रतीत हो रहा है?"

"गंदा और साफ तो उसे रखने पर निर्भर है। भला आपको मेरे बाबा का मकान गन्दा लगा था क्या?"

"गंदा तो नहीं था परन्तु सुख-सुविधा से रहित तो था ही।"

"सुख-सुविधा तो अभ्यास की बात है। कुछ दिन वहां रहने पर वही सुखकारक लगने लगेगा।"

अगले दिन वह पौने चार बजे अपनी सास को संगीत सुनाने के लिए घर से निकलने लगी तो पुलिस की गाड़ी द्वार के बाहर खड़ी थी। वह स्तब्ध खड़ी रह गई। उसने अपनी गाड़ी के कोचवान से पूछा, "ये लोग यहां किसलिए खड़े हैं?"

"सेठजी को पकड़ने के लिए आए हैं।" उसने धीरे से कान में कहा, "हेड कांस्टेबल ने मुझसे पूछा कि सेठजी घर में हैं तो मैंने कह दिया, मुझे पता नहीं। इसपर ये पूछने लगे थे कि गाड़ी किसके लिए खड़ी है तो मैंने आपके लिए बता दिया था। ये ऊपर की मंज़िल पर जा द्वार खटखटाने ही वाले थे। इस समय आप नीचे आती दिखाई दीं तो ये ठहर गए हैं।"

रेणु एक क्षण तक विचार कर हेड कांस्टेबल से पूछने लगी, "आप क्या चाहते हैं?"

"सेठजी के वारंट हैं।"

"कैसे?"

"बम्बई से आए हैं।"

"आप ऊपर जाना चाहते हैं?"

"हां, यदि वे नीचे नहीं आए तो।"

"तो ऐसा करिए, एक साहब वारंट लेकर ऊपर आ जाइए, मैं उनको जगा देती हूं।"

हेड कास्टेबल दो सहायकों के साथ रेणु के पीछे-पीछे ऊपर चल दिया। विष्णु अभी सो रहा था। रेणु ने उनको बैठक मे बैठाकर भीतर जा विष्णु को जगाया। विष्णु ने जब सुना कि उसके वारंट हैं तो चकित रह गया। वह समझ नही सका कि यह क्या मुसीबत है। वह कपडे पहनकर बाहर निकला। उसने वारट देखे। बम्बई के खटाऊ मिल के पूर्व मालिक ने दावा दायर किया था कि उसके साथ धोखादेही की गई है।

धारा ४२० और ४२१ के अन्तर्गत दावा था और उसके कोर्ट मे हाजिर न हो सकने पर वारट थे। बीस हज़ार की ज़मानत और बीस हज़ार के मुचलके पर वह हाज़िर होने तक छूट सकता था। वह विचार कर रहा था कि इस समय प्रात काल किससे ज़मानत करने के लिए कह सकता है। हेड कास्टेबल सेठजी की परेशानी का कारण समझ रहा था। इस कारण उसने कह दिया, "आप ज़मानत और मुचलका दे सकते हैं?"

"पर आप लोग आए ऐसे समय पर हैं कि ज़मानत और मुचलका दिया नही जा सकता। इस समय कौन मजिस्ट्रेट बैठा है जिसके सम्मुख ज़मानत करूं।"

"यह तो साधारण-सी बात है। इस विषय पर बताइए कि आप किस समय तक का अवकाश चाहते है?"

"मैं ग्यारह बजे कोर्ट में हाज़िर हो अपनी ज़मानत दे सकता हू।"

"तो मैं आपकी खिदमत करने के लिए हाज़िर हू।"

"और उस खिदमत के लिए मुझे क्या नज़र करना पडेगा?"

"एक सौ रुपया मेरे लिए और दस-दस रुपया दस कास्टेबलो के लिए। और दो कांस्टेबल, जब तक आप ज़मानत नही पेश कर देते, आपकी अर्दली मे रहेंगे, दस-दस रुपये उनके लिए।"

विष्णु ने तनिक विचार किया और कहा, "ठीक है, ज़रा ठहरिए। मैं आपके लिए नज़र लाता हूं।"

वह अपने सोने के कमरे मे गया। रेणु वहा द्वार पर खड़ी उनकी बातें सुन रही थी।

"तव तो वहुत ठीक हुआ है। अव तो आप किसी देहात में चलकर रहेंगे?"

"तो तुमको यह मकान छोड़ किसी गांव के गंदे झोंपड़े में चलकर रहना अधिक अच्छा प्रतीत हो रहा है?"

"गंदा और साफ तो उसे रखने पर निर्भर है। भला आपको मेरे वावा का मकान गन्दा लगा था क्या?"

"गंदा तो नहीं था परन्तु सुख-सुविधा से रहित तो था ही।"

"सुख-सुविधा तो अभ्यास की वात है। कुछ दिन वहां रहने पर वही सुखकारक लगने लगेगा।"

अगले दिन वह पौने चार वजे अपनी सास को संगीत सुनाने के लिए घर से निकलने लगी तो पुलिस की गाड़ी द्वार के वाहर खड़ी थी। वह स्तब्ध खड़ी रह गई। उसने अपनी गाड़ी के कोचवान से पूछा, "ये लोग यहां किसलिए खड़े हैं?"

"सेठजी को पकड़ने के लिए आए हैं।" उसने धीरे से कान में कहा, "हेड कांस्टेवल ने मुझसे पूछा कि सेठजी घर में हैं तो मैंने कह दिया, मुझे पता नहीं। इसपर ये पूछने लगे थे कि गाड़ी किसके लिए खड़ी है तो मैंने आपके लिए वता दिया था। ये ऊपर की मंज़िल पर जा द्वार खटखटाने ही वाले थे। इस समय आप नीचे आती दिखाई दीं तो ये ठहर गए हैं।"

रेणु एक क्षण तक विचार कर हेड कांस्टेवल से पूछने लगी, "आप क्या चाहते हैं?"

"सेठजी के वारंट हैं।"

"कैसे?"

"वम्वई से आए हैं।"

"आप ऊपर जाना चाहते हैं?"

"हां, यदि वे नीचे नहीं आए तो।"

"तो ऐसा करिए, एक साहव वारंट लेकर ऊपर आ जाइए, मैं उनको जगा देती हूं।"

८

हेड कास्टेबल दो सहायको के साथ रेणु के पीछे-पीछे ऊपर चल दिया। विष्णु अभी सो रहा था। रेणु ने उनको बैठक मे बैठाकर भीतर जा विष्णु को जगाया। विष्णु ने जब सुना कि उसके वारंट हैं तो चकित रह गया। वह समझ नही सका कि यह क्या मुसीबत है। वह कपडे पहनकर बाहर निकला। उसने वारट देखे। बम्बई के खटाऊ मिल के पूर्व मालिक ने दावा दायर किया था कि उसके साथ धोखादेही की गई है।

धारा ४२० और ४२१ के अन्तर्गत दावा था और उसके कोर्ट मे हाज़िर न हो सकने पर वारट थे। बीस हज़ार की ज़मानत और बीस हज़ार के मुचलके पर वह हाज़िर होने तक छूट सकता था। वह विचार कर रहा था कि इस समय प्रातःकाल किससे ज़मानत करने के लिए कह सकता है। हेड कास्टेबल सेठजी की परेशानी का कारण समझ रहा था। इस कारण उसने कह दिया, "आप ज़मानत और मुचलका दे सकते हैं?"

"पर आप लोग आए ऐसे समय पर हैं कि ज़मानत और मुचलका दिया नही जा सकता। इस समय कौन मजिस्ट्रेट बैठा है जिसके सम्मुख ज़मानत करूं।"

"यह तो साधारण-सी बात है। इस विषय पर बताइए कि आप किस समय तक का अवकाश चाहते हैं?"

"मैं ग्यारह बजे कोर्ट मे हाज़िर हो अपनी ज़मानत दे सकता हू।"

"तो मैं आपकी खिदमत करने के लिए हाज़िर हूं।"

"और उस खिदमत के लिए मुझे क्या नज़र करना पडेगा?"

"एक सौ रुपया मेरे लिए और दस-दस रुपया दस कास्टेबलों के लिए। और दो कांस्टेबल, जब तक आप ज़मानत नही पेश कर देते, आपकी अर्दली मे रहेंगे, दस-दस रुपये उनके लिए।"

विष्णु ने तनिक विचार किया और कहा, "ठीक है, ज़रा ठहरिए। मैं आपके लिए नज़र लाता हूं।"

वह अपने सोने के कमरे में गया। रेणु वहा द्वार पर खड़ी उनकी बातें सुन रही थी।

"रेणु, ज़रा जल्दी करो। आलमारी में से दो सौ रुपया निकाल।"

रेणु ने रुपया निकाला तो हेड कांस्टेबल के हाथ में दस-दस रुपये बीस नोट रख दिए गए। उसने अपने साथ आए दो कांस्टेबलों कह दिया, "सेठजी को लेकर ग्यारह बजे थाने में पहुंच जाना। हीं मजिस्ट्रेट के सामने ज़मानत होगी।"

कांस्टेबल वहीं बैठ गए। उनके लिए चाय आदि का प्रबन्ध कर दिया गया। विष्णु सहसा पुनः सोने के कमरे में गया और रेणु से राय करने लगा, "तुम कब जा रही हो माताजी की ओर?"

"जा तो रही थी, परन्तु अब तो काफी देर हो गई है।"

"इसपर भी जाओ और पिताजी से कहो कि मुझे किसी बीस हज़ार के ज़ामिन की आवश्यकता है। मैंने पुलिस से ग्यारह बजे तक का समय मांगा है।"

रेणु जुग्गीमल के मकान पर जा पहुंची। वहां सब लोग उसके समय पर न आने पर रामस्वरूप की बैठक में बैठे प्रतीक्षा कर रहे थे। बच्चे तो कीर्तन सुनने की उत्सुकता में थे। रामस्वरूप और मोहिनी रेणु के बीमार हो जाने की आशंका कर रहे थे। सेठ जुग्गीमल और गजाधर चुपचाप बैठे थे। वे विचार कर रहे थे कि क्या विष्णु के पकड़े जाने पर भी रेणु कीर्तन करने के लिए आएगी। परन्तु वे अपने मन की बात किसीसे कह नहीं रहे थे।

रेणु ने आधा घण्टा विलम्ब से आने का अपना कारण बता दिया। इसपर रामस्वरूप बोला, "परन्तु बेटी, मेरी तो कोई अचल सम्पत्ति इस नगर में है नहीं। इस कारण मैं तो जामिन हो नहीं सकता।

"और देखो, मैं भापा से कह नहीं सकता। उसने भापाजी पर मुकदमा किया था। उस मुकदमे का निर्णय कल ही हुआ है।"

"कैसा मुकदमा था, पिताजी!"

"बेटी, कुछ व्यापार के विषय में था। तुम तो इन बातों में रुचि रखती नहीं, इस कारण समझ नहीं सकोगी।"

"पर बाबा पर मुकदमा था?" हैरानी से रेणु ने पूछ लिया।

"हां, विष्णु ने दावा किया था। इसीलिए तो हम रुष्ट होकर यहां चले आए हैं। कल वह मुकदमा हार गया है।"

"मुकदमे की तारीख दस है। आज चार तारीख है। कल ही जाना ठीक होगा, वहां दो दिन पहले पहुंचकर मुकदमे की पैरवी का इन्तज़ाम करना होगा।"

"अच्छा, गजाधर तुम्हारे साथ जाएगा और तुमको मुकदमा लड़ने में सहायता कर देगा।"

"पर उसे अब फर्म का प्रबन्ध भी तो करना होगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं भागूंगा नहीं।"

"तुम्हारे अपील करने की अवधि बीत जाने के बाद ही स्थगन आदेश उठा हुआ माना जाएगा।"

"मैं अब क्या अपील करूंगा। बाबा, देखिए मुझे विश्वास हो रहा है कि आपने ही खटाऊ जी से कहकर यह मुकदमा करवाया है। अन्यथा उनका मुझसे वचन था कि वे इस रकम के विषय में मौन ही रहेंगे।

"इस विश्वास की विद्यमानता में मैं आपको मेरी जमानत करते देख जहां आश्चर्यचकित हूं, वहां कृतज्ञता भी अनुभव कर रहा हूं। अब आपसे मुकदमा नहीं लड़ूंगा।"

"अच्छी बात है। इसपर भी गजाधर का तुम्हारे साथ जाना अत्यावश्यक है। वही तुमपर चलनेवाले मुकदमे को समाप्त करा सकता है।"

"तो मेरा अनुमान ठीक ही है न ?"

"तुमने फर्म को तो धोखा दिया ही था। सहज ही दस लाख हजम कर लिया था। जहां फर्म में से अस्सी लाख निकाल लिया था, वहां तुमने अदायगी सत्तर लाख की ही की थी और फर्म की ओर से दस लाख का प्रोनोट लिखकर दे दिया था। यह धोखा तो था ही। यदि फर्म पर मेरा अधिकार हो सकता तो इस दस लाख के विषय में तुमसे बातचीत करता, परन्तु वहां पर तो रसीद-पर्चा सब ठीक था। हमें सन्देह था कि तुमने एक-आध लाख रुपया कमाया है, इसकी जांच के लिए गजाधर बम्बई गया और जब यह पता लाया कि एक लाख का नहीं वरंच घपला दस लाख का है, तो तुमपर कार्रवाई करने के लिए विचार होने लगा। अतः वहां के वकीलों से राय कर उस दस लाख के प्रोनोट का दावा करवा दिया। तुम्हारे समन जारी हुए,

वे तुमको मिल नहीं सके। इसपर तुम्हारे वारंट निकल गए। वे वारंट गजाधर ने ही आज प्रातः तुमको दिलाने का प्रबन्ध किया था। यह विचार था कि तुम्हारे ज़ामिन तो मिल ही जाएंगे, परन्तु कुछ देर हवालात की सैर का अवसर मिल जाएगा।

"अब रेणु के एक शब्द पर कि पराजित को उठाकर गले लगाना ईश्वरीय कार्य है, मैं सब कुछ वापस लेने के लिए तैयार हो गया हूं।"

इसपर भी विष्णु को उस धोखादेही के मुकदमे से बचाने में तीन मास लग गए। इस अवधि मे फर्म को समेटने का कार्य चल पड़ा था। गजाधर कुछ रजिस्टर्ड आडिटरों की सहायता से खर्च के लेन-देन और धन एकत्रित करने मे लगा तो उसको इन तीन मासों में विष्णु मे और भी कई त्रुटियां दीखीं। परिणाम यह हुआ कि विष्णु को विवश किया गया कि वह चुराया हुआ धन वापस कर दे।

विष्णु को दस लाख तो वह देना पड़ा जो उसने जुग्गीमल एण्ड सन्स से निकाल तो लिया था परन्तु खटाऊजी को नहीं दिया था। इसके अतिरिक्त लगभग उतनी ही राशि, जो उसने खटाऊजी की मिल खरीदने मे उड़ा ली थी, वह सब भी उन्हीं दिनों उससे जमा करा ली।

परिणाम यह हुआ कि विष्णु छ: मास मे दिवालिया हो गया।

इस पूर्ण अवधि मे रामस्वरूप और मोहिनी अपने बच्चों के साथ जुग्गीमल के मकान पर ही रहते रहे। मकान के नीचे फर्म को समेटने का कार्यालय चल रहा था और गजाधर, जहां-जहां शाखाएं थीं, वहां-वहां घूम-घूमकर लेन-देन कर रहा था।

रेणु अभी भी नित्य प्रति मोहिनी को भजन सुनाने के लिए आती रहती थी। यद्यपि वह सदा प्रसन्न और स्वस्थ प्रतीत होती थी परन्तु उसके वस्त्र इत्यादि से यह स्पष्ट हो रहा था कि उसको आर्थिक कष्ट आरम्भ हो गया है।

मोहिनी को जुग्गीमल के घर में रहते छ: मास हो गए थे। रामस्वरूप ने अपना स्वतन्त्र कारोबार आरम्भ कर लिया था और कारोबार को चलता देख दक्षिणेश्वर की सड़क पर एक मकान ले लिया था तथा वे लोग वहां जाने की तैयारी करने लगे थे।

एक दिन रेणु आई तो उसके पास भाड़े की गाड़ी थी। जाते समय भी भाड़े की गाड़ी का प्रबन्ध करने लगी तो गजाधर ने पूछ

लिया, "भाभी, अपनी गाड़ी का क्या हुआ ?"

"बिक गई है।" रेणु ने मुस्कराते हुए कह दिया।

"तो बाबा की गाड़ी में आ जाया करो। बताओ, कितने बजे वहां भेज दिया करें ?"

"प्रातः पौने चार बजे।"

तब से जुग्गीमल की गाड़ी रेणु को लाने-ले जाने के लिए आने लगी।

एक अन्य दिन रेणु ने मोहिनी को अलग ले जाकर कहा, "दाई को वेतन देने के लिए उन्होंने रुपये नहीं दिए।"

"कितना वेतन देती हो ?"

"रोटी, कपड़ा और पचास रुपया।"

मोहिनी ने चुपचाप सौ रुपया दिया और कहा, "दाई का वेतन इत्यादि मुझसे ले जाया करो।"

६

परन्तु इससे बात स्पष्ट हो गई कि विष्णु की हालत बहुत पतली हो गई है। मोहिनी उस दिन विष्णु के घर पहुंची।

विष्णु दिन के दस बजे तक स्नानादि से निवृत्त नहीं हुआ था। जब मोहिनी वहां पहुंची तो विष्णु मुख देखता रह गया। मोहिनी ने डांट के भाव से कहा, "विष्णु, क्या बात है जो अभी तक सोकर नहीं उठे ?"

"ओह मां, आप ? कहिए, क्यों आई हैं ?"

"देखो विष्णु, जब मैं तुम्हारे लिए पत्नी देखने दरभंगा गई थी, तो मैंने तुम्हारी पत्नी से एक शर्त ली थी।

"वह शर्त यह थी कि वह नित्य प्रातः मुझे अपना मधुर भजन सुनाया करेगी तो मैं उसे अपनी बहू बना लूंगी।

"इसने अपनी सब शर्तें अभी तक पूरी की हैं, परन्तु अपनी बहू के साथ उचित व्यवहार होता न देख मैं यहां आई हूं कि तुममें क्या खराबी हो गई है। सो देख लिया है। दिन का अनमोल समय तुमने बिस्तर में ही बिता दिया है।"

"मां, ज्योतिषी ने बताया है कि मुझपर शनिश्चर की साढ़ेसाती आई है। अभी तो छः मास ही व्यतीत हुए हैं। सात वर्ष और रहते हैं।"

"क्या अनर्गल बातें कर रहे हो। साढ़ेसाती आई है तो उसका उपाय भी तो है। उपाय करने के स्थान पर तुम विस्तर में पड़े रहते हो। ऐसे साढ़ेसाती का उन्मूलन कैसे होगा।"

"क्या भाग्य टल भी सकते हैं?"

"यह सदा ही बिगाड़ा और बनाया जाता है। परन्तु तुम तो बनाने की बजाय बिगाड़ने पर तुले हुए हो।

"बताओ, क्या हुआ है तुम्हारे सब धन का?"

इस समय तक मोहिनी बैठक घर में सोफे पर बैठी थी। घर में सजावट का बहुत-सा सामान विलुप्त हो चुका था। इसपर भी स्थान साफ-सुथरा था। दाई मोहिनी तथा रेणु के लिए अल्पाहार ले आई और विष्णु के लिए बेड टी।

मोहिनी ने अल्पाहार करते हुए विष्णु की आर्थिक स्थिति के विषय में पूछा। विष्णु चाय पीता हुआ विचार कर रहा था कि मां को क्या-क्या और कितना बताए। आखिर उसने चाय का प्याला सासर में रखते हुए कहा, "मां, कल बैंक और जेब का अन्तिम रुपया व्यय हो गया है।"

"यह तो मैं रेणु से सुन चुकी हूं। तुम दाई का वेतन भी नहीं दे सके। मैं तो यह जानने आई थी कि किधर गया वह सब धन?"

"मां, कुछ स्पेकुलेशन करने लगा था।"

"सत्य! तब तो महामूर्ख हो तुम। जब तुम जानते हो कि तुमपर शनि की दशा है तो फिर ऐसा कार्य क्यों करने लगे, जो सोलहों आने भाग्य पर निर्भर करता है?"

"तो क्या करता?"

"यही तो कह रही हूं कि किसी बुद्धिमान की संगत में आते तो वह तुमको बता देता कि भाग्य का प्रतिरोध पुरुषार्थ है। तुम जानते थे कि भाग्य विरोधी है फिर भी भाग्य के भरोसे हो रहे थे।"

"पर मां, पुरुषार्थ प्रबल है, या भाग्य?"

"तुम महामूर्ख हो विष्णु! यदि तुमने अपनी ईश्वर-परायणा पत्नी से भी राय ली होती तो वह भी तुमको इस भाग्य के चक्र से

निकालने का मार्ग बता देती। कम से कम वह तुम भाग्यहीन को इसके आश्रय न रहने देती।"

विष्णु विचार कर रहा था कि उसने तो बताया था कि गांव में चलकर रहने पर तो परिश्रम से भी पेट भरा जा सकता है, परन्तु वह समझ नहीं सका था कि वहां परिश्रम कैसे किया जाएगा।

अब वह यह तो समझ गया था कि इस समय भाग्य उसके विपरीत है और स्पेकुलेशन विशुद्ध भाग्य का खेल है। एक बात वह नहीं समझा था, कि पुरुषार्थ भाग्य का विरोध कैसे कर सकेगा। अतः उसने अपना प्रश्न दोहराया,

"पर मां, पुरुषार्थ बेचारा भाग्य का विरोध कर सकेगा क्या ?"

"निस्सन्देह। ईमानदारी और विचार से किया गया पुरुषार्थ फल लाता है। भाग्य को सर्वथा न मिटा सके तब भी कुछ सीमा तक तो उसे निस्तेज कर ही सकेगा।

"देखो, तुम यह मकान छोड़ दो। यहां का फर्नीचर बेच दो और हमारे मकान में चले आओ। वहां भाग्य को पुरुषार्थ से परास्त करने में लग जाओ। इस संघर्ष में एक व्यक्ति सहायक हो जाएगा।"

"कौन सहायक हो सकेगा ?" विष्णु विचार कर रहा था कि मां परमात्मा का नाम लेंगी और वह परमात्मा को दो-तीन गाली सुनानेवाला था।

मां ने कहा, "यह रेणु।"

"ओह ! पर यह तो कहती है कि मैं इसके पिता के गांव चलूं। यह श्रीमती बनर्जी से कहकर मकान बनाने के लिए भूमि ले देगी। वहां मकान बनवाकर हम रहें। मकान के पिछवाड़े साग-भाजी और फलों का बगीचा लगा लेंगे। बनर्जी बाबू के तालाब से मछली पकड़ लाया करेंगे और फिर कुछ थोड़ा-सा काम कर दस-बीस रुपये महीना भी कमा लेंगे तो निर्वाह मज़े में हो जाएगा।"

"बहुत सुन्दर है यह योजना। यही तो पुरुषार्थ से भाग्य को परास्त करने का ढंग है। इसके पिता को गांव में निर्वाह करते देख आई हूं। वे बहुत प्रसन्न और सुखी थे। तुम भी हो सकते हो।"

"तो फिर आपके घर कैसे रहूंगा ? और यह आपको कीर्तन कैसे सुना सकेगी ?" विष्णु ने मां को निरुत्तर करने के विचार से कहा।

मां ने उत्तर में कहा, "मैं तुम्हारे साथ चलकर रहूंगी।"

"और पिताजी ?"

"वे तुम्हारे जैसे उत्साहहीन और बुद्धिविहीन नहीं हैं। वे अपने लिए स्वयं विचार कर लेंगे।

"देखो विष्णु, तुम्हारे बाबा कह रहे थे कि जब तुम प्यासे थे तो उन्होंने अपनी प्याऊ से जल पिला दिया था। मेरे पास भी आज रेणु ने एक अभाव बताया तो मैंने उसकी पूर्ति का यत्न किया है। परन्तु यह प्यास लगने पर प्याऊ पर जा हाथ पसारना तो कुछ भी शोभा नहीं देता। घर में कुआ खोद लो, *उससे ही ताजा और शीतल जल लेना ठीक होगा।*"

"तो देहात में जाकर कुआ खोदूं ?"

"सामर्थ्य है तो यहीं कलकत्ता में खोद लो। परन्तु सट्टे के बाजार में तो भाग्य रूपी वर्षा का मुख देखना होगा। तुम्हारे बाबा, सेठजी, ने इस भाग्य का मुख देखना पसन्द नहीं किया।"

मोहिनी के चले जाने के उपरान्त विष्णु ने रेणु से पूछा, "तुमने माताजी को क्या कहा जो वे भागी-भागी चली आई ?"

"आज एक सप्ताह से गंगा के वेतन के लिए रुपये मांग रही थी। आप 'कल'-'कल' कर रहे थे। रात गंगा ने कहा था कि उसको रुपयों की सख्त जरूरत है। मैंने माजी से उसे देने के लिए रुपये मांगे थे।"

"ऋण मांगा था ?"

"जी नहीं। मां से ऋण नहीं मांगा जाता। मैंने कहा था, दाई के वेतन के लिए आपने रुपये नहीं दिए, तो उन्होंने वेतन पूछा और सौ रुपये दे दिया। बस इसके अतिरिक्त कोई बात नहीं हुई।"

"क्या लाभ हुआ इससे ?"

"लाभ तो हुआ है। गंगा को वेतन मिला तो वह प्रसन्न हो गई। माजी आई है तो कितने ही मार्ग बता गई हैं। मेरी बात मानिए, कल ही मकान छोड़ दीजिए। माजी के मकान में चले चलेंगे। वहां जाकर किसी *पुरुषार्थ की बात पर विचार कर लेंगे।*"

"देखो, सुमेर का बम्बई से पत्र आया है कि मुझे वहां चला आना चाहिए।"

"—

"सोने के वाज़ार में स्पेकुलेशन कर रहा है। पिछले पत्र में उसने ा था कि उसने एक दिन में एक लाख रुपया कमाया है।"

"उसके भाग्य का सितारा आजकल उच्च होगा। आपके लिए ई काम ठीक नहीं।"

"मेरे लिए क्या ठीक है?"

"मांजी ने बताया तो है कि पुरुषार्थ ठीक रहेगा।"

विष्णु विचारशून्य हो रहा था। ऐसे व्यक्ति के लिए तो कोई उसपर राज्य करनेवाला चाहिए। रेणु बेचारी इस कार्य के योग्य नहीं थी। एक दिन वह जुग्गीमल के मकान पर गई तो खाटू से किशोरी आई हुई थी। सेठ जुग्गीमल खाटू गया था और अपनी पत्नी को साथ ले आया था। जुग्गीमल वहां गया था रामेश्वरी से बात करने कि उसकी योजना को अब चालू कर दिया जाए। जब रामेश्वरी देवी ने हरी झण्डी दिखाई तो जुग्गीमल अपनी पत्नी को साथ लेकर बनारस होता हुआ कलकत्ता पहुंच गया।

जब रेणु कीर्तन करने के लिए आई तो वह अपनी नानी सास को भी देख प्रणाम कर आशीर्वाद ले अपने आसन पर जा बैठी। आज मोहिनी उसे अपनी मां के पास ले गई और उसको सामने बैठा पूछने लगी, "क्या निश्चय किया है विष्णु ने?"

"मांजी, जब उनमें निश्चय करने की बुद्धि थी तब भी वे गलत ही निश्चय करते रहे हैं। और अब तो भाग्य के चक्कर से वे निश्चय करने का सामर्थ्य ही खो बैठे हैं।"

"तुम उसे कान पकड़कर ठीक मार्ग पर क्यों नहीं ले आतीं? उस दिन उसने जो कुछ तुम्हारे विषय में बताया था, वह तो बुद्धियुक्त ही प्रतीत होता था।

"मनुष्य का पुरुषार्थ तो बहुत ही छोटा होता है। परमात्म के कार्यों के अनुपात में तो मनुष्य का प्रयास एक हाथी की तुलना चिऊंटी के प्रयास के समान भी नहीं माना जा सकता। परन्तु मनु में बुद्धि है और उस प्रयास के साथ बुद्धि का संयोग हो जाए तो परमात्मा से स्पर्द्धा कर सकता है।

"देखो, उसको मकान से निकाल लाओ। यहां ले आओ अ हमारे दक्षिणेश्वरवाले मकान में ले चलो। तदनन्तर तुम अ

बलबूते पर अपने बाबा के गांव में भूमि ले उसे वहां ले जाओ। वहां अपनी योजनानुसार अपना घर बनाओ। मैंने बहुत विचार किया है और यही समझी हूं कि यदि यत्न करोगी तो भूतल पर एक स्वर्ग निर्माण कर पाओगी। मैं भी वहां चलकर रहूंगी।"

रेणु इससे उत्साहित हो घर पहुंची और उसने अपनी सास की योजना पर कार्य करने का निश्चय कर लिया। वह लगभग सात बजे अपने घर लौटा करती थी। आज कुछ विलम्ब हो गया था। उसने गंगा को बुलाकर बेड टी बनाने के लिए कहा और स्वयं विष्णु के कमरे में जाकर उसको जगाने लगी। वह अभी गहरी नींद सो रहा था।

उसने पलंग पर पति के समीप बैठ कान के समीप मुख कर गुन-गुनाना आरम्भ कर दिया, "उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहां जो सोवत है···"

धीरे-धीरे विष्णु को चेतना हुई कि उसके साथ उसकी पत्नी आलिंगन कर उसे जगाने के लिए कह रही है। विष्णु ने कहा, "यदि कोई अन्य मुझे इस मजेदार नींद से जगा रहा होता तो उसकी पिटाई हो जाती। रेणु, क्या बात है आज, जो इतने सवेरे यह अनुग्रह कर रही हो?"

"उठिए। आपकी नानीजी खाटू से आई हैं और शीघ्र ही यहां पहुंचनेवाली हैं। शीघ्र स्नान कर तैयार हो जाइए।"

"पर इतनी सुबह वे यहां आकर क्या करेंगी?"

"यह सवेरा नहीं है जी। दिन का सर्वोत्तम भाग तो निकलता जा रहा है।"

रेणु उसके समीप से उठ कमरे का द्वार खोल दाई को आवाज़ देने लगी। जब वह चाय लाई तो विष्णु चाय पीकर शरीर की सुस्ती निकालने लगा।

जब तक विष्णु शौचादि से निवृत्त हुआ, रेणु ने अपने बच्चों को तैयार कर दिया था और उनको सफेद धुले कपड़े पहनाकर कहा, "नानीजी आ रही हैं, उनको प्रणाम करना।" इसके साथ ही उसने अपने कपड़ों को एक ट्रंक में बन्द किया। कुछ अन्य कीमती सामान एक-दूसरे सन्दूक में बन्द कर रही थी कि विष्णु वहां आ गया। उसने पूछा, "यह क्या हो रहा है?"

...नीजी की आज्ञा है कि कुछ दिन के लिए वे अपनी बहू ...
...हना चाहती हैं। इसलिए उनके साथ रहने के लिए जाने की
हो रही है।"
पर मैं तो ऐसा नहीं चाहता।"
"तो यह उनसे कहिएगा। मैं न तो आपकी बात का उल्लंघन
...कती हूं और न ही उनकी आज्ञा का।"

"पर तुम मुझसे राय किए बिना तैयारी तो कर रही हो?"

"लेकिन आप उनकी बात का विरोध करेंगे यह तो मैं सोच भी
... सकती।"

"क्यों, इसमें कौन-सी बात है सोचने की?"

"देखिए जी, बड़ों का कहना मानना चाहिए। यह संसार का
...यम है।"

"चाहे वे कितनी ही मूर्खता की बातें करें?"

"तो उनको समझा देंगे। उस दिन माताजी ने गांव में जाकर
घर बनाने की योजना पसन्द की थी। इसी प्रकार कोई अक्ल की
बात कहेंगे तो वे भी पसन्द कर लेंगी।"

"पर तुम गांव में जाकर रहने की बात को अक्ल की बात
कहती हो?"

"देखिए जी, वह मेरी योजना है। अपनी बात को तो सब ठीक
ही मानते हैं। परन्तु उसे तो आपकी माताजी ने ठीक माना है।
आज आपके नाना और नानी ने भी ठीक माना है। नाना तो कहते थे
कि उनके लिए एक कमरा ज़रूर बनवाना। वे भी वहां आकर
रहेंगे।"

"उनको भी बताया है कि तुम मछली पकड़कर निर्वाह करने की
योजना बना रही हो?"

"यह तो मैंने नहीं कहा। इतना मुझे पता है कि वे आपके मांस-
मछली खाने को जानते हैं।"

विष्णु इस नई परिस्थिति से एक क्षण तो घबराया। पर वर्तमान
आर्थिक संकट से बनी बुद्धिशून्यता से वह विचार नहीं कर सका कि
इस सबका क्या उत्तर है और किस प्रकार अपनी बात रेणु को समझाए।
वह अभी विचार ही कर रहा था कि किशोरी आ गई। उसने

पूछा, "रेणु, तैयार हो ?"

"माजी, मैं तो तैयार हूं। अपने लड़के को आप तैयार कर लीजिए।"

"उठो विष्णु, सूटकेस तैयार करो। मैं घोड़ागाड़ी लाई हूं और तुमको लेकर जा रही हूं।"

अब विष्णु कुछ उत्तर नहीं दे सका। किशोरी स्वयं विष्णु का सूटकेस तैयार करने लगी। रेणु उसमें सहायता कर रही थी।

१०

जब जुग्गीमल एण्ड सन्स की सब आदेय सम्पत्ति प्राप्त कर ली गई तब जुग्गीमल ने सम्पत्ति में से पूंजी को पृथक् कर लिया। यह आज से साठ वर्ष पूर्व ढाई सौ रुपये से आरम्भ हुई थी और अब चार करोड़ रुपये के लगभग थी। शेष धन तीन करोड़ रुपया था जिसमें से एक करोड़ के लगभग सम्पत्ति का मूल्य बढ़ जाने के कारण तथा अन्तिम वर्ष के लाभ का रुपया था। इस राशि का बटवारा उसने तीस साझेदारों में कर दिया। प्रति पत्तीदार पौने सात-सात लाख रुपया मिला।

पूंजी के बटवारे के विषय में जुग्गीमल रामेश्वरी देवी से राय कर आया था। रामेश्वरी देवी का कहना था कि इसका चतुर्थांश धर्म खाते में जमा करा दिया जाए और शेष तीन भाग परिवार के सब घटकों को बराबर-बराबर बांट दिया जाए।

जुग्गीमल का विचार था कि इस धनराशि का बटवारा केवल उन व्यक्तियों में किया जाए जो परिवार के लोग हैं और कर्मचारी के रूप में कार्य करते रहे हैं। रामेश्वरी देवी का विचार इसके विपरीत था। वह कहती थी कि यह परिवार की सम्पत्ति है और परिवार के प्रत्येक घटक-बाल, वृद्ध, पुरुष, स्त्री सबको मिलनी चाहिए।

जुग्गीमल के लिए मां का वचन ब्रह्मवाक्य के समान माननीय होता था और कलकत्ता आकर उसने मां के आदेश का पालन कर दिया।

घर पर मां के उत्तराखण्ड की तीर्थयात्रा से लौटने के समय घर के बहत्तर प्राणी थे। अब कुछ बच्चे और पैदा हो गए थे और प्राणियों की संख्या अस्सी हो गई थी। पूर्ण सम्पत्ति, जो धर्मादा

निकालकर बची थी, उसको अस्सी भागों में बांटा गया। प्रत्येक व्यक्ति को पौने चार लाख रुपये के लगभग मिला।

यह गणना कर उसने परिवार के प्रत्येक अंग को लिखकर और फिर प्रत्येक के भाग के चेक हिसाब के साथ लिखकर भेज दिए।

जिस दिन यह चेक लिखे जा रहे थे और हिसाब के पर्चे छपवाकर चेकों के साथ पत्रों में बन्द किए जा रहे थे, सुमेर एक घोड़ागाड़ी में सवार जुग्गीमल के घर रहने के लिए आ पहुंचा।

अब तक रामस्वरूप और उसका परिवार और विष्णु का परिवार भी अपने दक्षिणेश्वरवाले नये मकान में रहने के लिए जा चुके थे। गजाधर अपने बच्चों के साथ अभी भी वहीं रहता था। जुग्गीमल के मकान में अभी तीन सेट कमरों के खाली पड़े थे। मकान के नीचे कार्यालय में डाक बनाई जा रही थी कि सुमेर अपनी पत्नी तथा दोनों बच्चों के साथ वहां पहुंच गया। शकुन्तला और बच्चे तो बहुत ही दुर्बल और मैले-कुचैले कपड़ों में थे। सुमेर की अपनी सूरत और स्वास्थ्य इतना खराब नहीं था जितना कि शकुन्तला और बच्चों का था। इस-पर भी उसके मुख पर वह ओज नहीं था जो पहले हुआ करता था। जुग्गीमल ने इनको गाड़ी से उतरते देखा तो वह पहचान ही नहीं सका। सुमेर सबसे पहले पहचाना गया। उसे पहचानते ही शकुन्तला और उसके बच्चे भी पहचान में आ गए।

शकुन्तला तो ऊपर मकान पर चढ़ गई और सुमेर नीचे कार्यालय में चला आया। सेठजी ने पूछा, "सुमेर, यह क्या सूरत बनाई है?"

"भापा," सुमेर ने कहा, "बम्बई से थर्ड क्लास में यात्रा पर जो सूरत हो सकती है, वही है।"

इस वाक्य ने एक बात यह भी स्पष्ट कर दी कि थर्ड क्लास में यात्रा की गई है। दूसरी बात यह स्पष्ट थी कि वह अब होटल में ठहरने के लिए नहीं गया। शेप दुःखी जीवन के लक्षण मुख पर आयु की रेखाएं गहरी हो जाने के कारण दिखाई दे गई थीं। जुग्गीमल ने कहा, "पर तुम तो विष्णुसहाय को लिख रहे थे कि तुम लाखों पैदा कर रहे हो?"

"भापा, सट्टे के बाजार में सब कुछ सम्भव है। लखपती बनना भी, और खाकशाह होना भी।"

"तो सट्टे में फंस गए थे ?"

"जी ।"

"तभी होटल का रास्ता भूल गए हो ।"

"जी, मैं तो आपके घर का रास्ता भी भूल गया था। किन्तु शकुन्तला को वह नहीं भूला और वह गाड़ीवान को रास्ता बताती यहा ले आई है ।"

"ईश्वर का धन्यवाद है कि उनकी बुद्धि अभी निर्मल है। तुमको भी ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए कि तुम उसकी निर्मल बुद्धि के पीछे यहा चले आए हो ।"

"अब तो आपके पथ-प्रदर्शन पर चलने का विचार कर रहा हू ।"

"बहुत कठिन है सुमेर, वह मार्ग । इसपर भी यत्न कर सकते हो। अच्छा, अब तुम ऊपर चले जाओ। स्नानादि कर जरा आराम करो, फिर बातें करेंगे ।"

सुमेर यह आज्ञा पा मकान के ऊपर जा पहुंचा । उनके लिए कमरे खोल दिए गए थे । किशोरी शकुन्तला के पास बैठी उसकी कहानी सुन रही थी। शकुन्तला की आखें और गाल भीगे हुए थे। बच्चे थके हुए होने के कारण जमीन पर ही सोने की बात कर रहे थे।

सुमेर ऊपर आया, तो किशोरी ने कहा, "स्नानादि से निवृत्त हो जाओ, भोजन तैयार हो रहा है ।"

शकुन्तला की कहानी सुन किशोरी ने कहा, "मेरी बात मानो। सास के पास अमेरिका जाने में तुम्हारा कल्याण नहीं हो सकता। रही बात यह कि यहां क्या करो, यह कुछ दिन यहा रहो, फिर इस-पर विचार कर लेंगे ।"

"मैं विवाहित जीवन से ऊब गई हू ।"

"वह बात भी विचार कर लेंगे ।"

किशोरी उठी तो शकुन्तला भी स्नानादि के लिए चली गई। किशोरी के कमरे में लक्ष्मी बैठी थी।

"सुनाओ क्या बात है ?"

"माजी, ललिता के पिताजी बता रहे थे कि रुपयों का बंटवारा हो रहा है ।"

"हा, फर्म का लगभग सब रुपया एकत्रित कर लिया गय

कुछ लाख की वसूली रह गई है। यह निश्चय हुआ है कि लाभ के खाते का रुपया तो सब भागीदारों में बांट दिया जाए और पूंजी के रुपये में से धर्मादा निकालकर परिवार के सब बाल-युवा और वृद्ध जनों में बराबर-बराबर बांट दिया जाए।"

"यह निश्चय किसने किया है?"

"बड़ी मांजी ने। उनका कहना था कि पूंजी परिवार की थी और परिवार में बंटनी चाहिए। लाभ उनका था जो हानि उठाने के लिए तैयार थे।"

"कर्मचारियों को क्या मिला है?"

"वे कर्मचारी जो परिवार से बाहर के थे, उनको बोनस दिया जा चुका है। अन्तिम बोनस प्रत्येक के उतने महीने के वेतन के समान है जितने वर्ष उसने फर्म में काम किया है। जो कर्मचारी परिवार के सदस्य हैं, उनको तो सब कुछ मिल ही रहा है। उनके परिश्रम का फल ही तो उनके परिवारवालों को दिया जा रहा है।"

"पर मांजी, मेरी तो सब आशाओं पर तुषारापात हो रहा है।"

"क्यों?"

"मैं लगभग एक वर्ष से उनको खाटू चलकर शेष जीवन बिताने के लिए तैयार कर रही थी। जिस दिन से उनको यह पता चला है कि हम सबको मिल-मिलाकर बीस लाख के लगभग मिल रहा है उसी दिन से उनके मस्तिष्क में विदेश जाकर कोई काम-धन्धा चलाने की योजना बन रही है।"

"परन्तु लक्ष्मी, खाटू में क्या है?"

"कुछ ऐसा है जो अति आनन्दप्रद, सुखकर और आकर्षक है। वह बड़ी मांजी के कारण ही प्रतीत हुआ है।"

"तो लक्ष्मी और लक्ष्मी की विभूति में संघर्ष चल रहा है।"

लक्ष्मी इस कथन का अर्थ समझ नहीं सकी। अतः अपनी दादी सास का मुख निहारने लगी।

किशोरी ने उसे परेशान देखा तो वह अपने कहने का अर्थ समझाने लगी, "एक तो तुम लक्ष्मी हो। तुम जीवित, जाग्रत् और बुद्धिशील हो। दूसरी ओर जड़ लक्ष्मी है। मैं कह रही हूं कि जीवित लक्ष्मी और जड़ लक्ष्मी में संघर्ष चल पड़ा है। यदि तुम भी जड़ न हुई तो

विजय तुम्हारी ही होनी चाहिए।"

"पर मैं तो कहने के लिए आई थी कि कुछ ऐसी योजना बनाई जाए जिससे यह धन-दौलत परिवार के सदस्यों को मिले ही नहीं। यह मस्तिष्क मे विकार उत्पन्न कर परिवार-भर के सदस्यों को पथ-भ्रष्ट करने लगेगी।"

"तुम समझती हो कि मनुष्य गलत काम तब करने लगता है जब वह धनी हो जाता है। लक्ष्मी बेटी, हम ऐसा नहीं समझते। धन तो एक निर्जीव पदार्थ है। इसका सदुपयोग और दुरुपयोग उपयोग करने वाले की प्रवृत्ति पर निर्भर है। प्रकृति धन से नहीं बनती। धन का उपयोग प्रकृति के अनुसार होता है।

"इसलिए मैं तो तुमसे यही कहूंगी कि तुम्हारा यह कहना कि तुम्हारे पति को धन-दौलत न मिले, ऐसा ही है जैसा शस्त्रों के दुरुपयोग से भयभीत हो यूरोप के मूर्ख राज्याधिकारी निःशस्त्रीकरण के पीछे लग पड़े हैं। उस दिन गजाधर ही यह सुना रहा था कि यूरोप के युद्ध मे जर्मनी की पराजय होने के उपरान्त जर्मनी के शस्त्रास्त्र छीन लिए गए और फिर भावी युद्धों की सम्भावना से बचने के लिए इंग्लैण्ड, फ्रांस, इटली इत्यादि सब देश अपने घर के सब शस्त्रास्त्रों को विनष्ट करने में लग गए हैं।

"इससे युद्ध रुकेंगे नहीं। युद्धों की प्रवृत्ति जातियों मे तब बनती है जब उनमें रजोगुण की वृद्धि हो जाती है और उस रजोगुण पर सात्त्विक गुण का नियन्त्रण नहीं रहता।

"तुम भी वैसी ही मूर्खता की बात करने चली आई हो जैसी कि यूरोपवाली जातियां कर रही हैं। तुम भी चाहती हो कि तुम्हारे पति के हाथ से धन-दौलत छीन ली जाए।

लक्ष्मी की समझ में बात आने लगी थी। इसपर भी वह अपनी
व प्रेरणात्मक शक्ति का प्रयोग कर चुकी थी और नहीं जानती थी
क वह क्या करे। उसने इस विषय में भी सेठानीजी से पथ-प्रदर्शन
ी अभिलाषा में पूछ लिया, "पर मांजी, मैं तो समझती हूं कि प्रेरणा
ती-देती मैं थक गई हूं और क्या करूं? समझ में नहीं आता।"

"भगवद्भजन किया करो। वही तुम्हारी वाणी में रस, तुम्हारी युक्ति में बल और तुम्हारी प्रेरणा में आकर्षण उत्पन्न कर देगा।"

लक्ष्मी को इन बातों में कुछ भी तत्त्व प्रतीत नहीं हुआ। वह अपने विचार से सब उपाय प्रयोग कर चुकी थी, और अपने ध्येय में असफल हो चुकी थी।

सेठ जुग्गीमल ने सुमेर और सन्तराम को भेजा जानेवाला धन रोक दिया। सन्तराम का तो पता विदित नहीं था और सुमेर बम्बई छोड़ कलकत्ता ही आ गया था।

शेष प्रायः सब अधिकारियों को धन के चेक भेजे जा चुके थे। विष्णु और उसके माता-पिता को भी उसका भाग मिला। ये लोग तो चैकों की राशि देख कुछ भी न समझते हुए एक-दूसरे का मुख देखते रह गए।

इस समय तक रेणु ने अपने पिता को पत्र लिख दिया था कि बनर्जी बाबू से पूछकर बताएं कि वे उसको कोई अच्छी-सी भूमि मकान तथा बाग-बगीचे के लिए दे सकते हैं? यदि दे सकते हैं तो किन शर्तों पर।

यथासमय रेणु को अपने पिता का पत्र मिल गया था। उसमें लिखा था कि वह स्वयं आकर भूमि देख ले। तब भूमि का क्षेत्रफल और स्थिति देखकर बताएंगे कि उसका भाड़ा क्या होगा।

इस उत्तर पर रेणु और विष्णु गांव गए और दो एकड़ भूमि के एक टुकड़े का भाड़ा दो सौ रुपया वार्षिक निश्चय कर आए। रेणु अपनी सास मोहिनी से कुछ रुपये मांगकर ले गई थी और एक वर्ष का भाड़ा अग्रिम देकर पट्टा लिखाने के लिए उचित खर्चा बनर्जी बाबू के मुंशी के पास जमा करा आई थी।

बनर्जी बाबू ने पट्टा रजिस्टर्ड कराकर रेणु को भेज दिया था। अ
उस दो एकड़ भूमि पर मकान बनाने और बाग-बगीचा लगाने क
योजना बन रही थी। रेणु के कहने पर एक तालाब बनाने की योज

भी स्वीकार हो चकी थी। रामस्वरूप इस तालाब के बनवाने का विरोध कर रहा था। मोहिनी ने इस योजना को आशीर्वाद दे दिया था। दोनों के दृष्टिकोण में वही अन्तर था जो लक्ष्मी और किशोरी के विचार में था।

मोहिनी ने कहा था, "मछली खाना तालाब बनाने अथवा न बनाने से सम्बन्ध नहीं रखता। इसका सम्बन्ध मछली खाने से प्रेम और घृणा करने में है, यह तालाब के होने न होने से सम्बन्ध नहीं रखता। विष्णु और रेणु को खानी होगी तो गाव के तालाब से मगवाकर खा लिया करेंगे।"

इस युक्ति ने रामस्वरूप का मुख बन्द कर दिया था। परन्तु गाँव का मकान बनने में वास्तविक बाधा तो जुग्गीमल का रुपया मिलने पर हुई।

माता, पिता, पुत्र तीनों को तीन चेक मिले। रामस्वरूप और मोहिनी को अपने-अपने भाग का लाभ का धन और पूंजी में से भाग मिला था। विष्णु को अपने भाग का लाभ और पूंजी का भाग मिला। मोहिनी और रामस्वरूप को पाच-पाच लाख से ऊपर धन-राशि मिली, विष्णु को तेरह लाख के लगभग मिली।

विष्णु और रेणु बाजार से कुछ सामान खरीदकर लाए थे तो मकान के बैठक घर में बैठे मोहिनी और रामस्वरूप अपनी-अपनी धनराशि का चेक हाथ में पकड़े हुए अपने भापा की उदारता पर विस्मय कर रहे थे। विष्णु और रेणु बैठक घर में पहुंचे तो रामस्वरूप ने विष्णु के हाथ में उसका लिफाफा देते हुए कहा, "जरा देखो तुमको क्या मिला?"

"क्या है बाबा?" विष्णु ने लिफाफा खोलते हुए पूछ लिया।

लिफाफे में उसने तेरह लाख का एक चेक देखा तो वह देखता रह गया।

अब वह एक कुर्सी पर बैठ गया और संलग्न पत्र को पढ़ने लगा। पत्र पढ़कर तो आश्चर्यचकित हो माता-पिता का मुख देखता रह गया। मोहिनी ने कहा, "विष्णु, भले लड़के की भांति अभी जाओ और बाबा के पांव पकड़कर क्षमा मांगो। उनपर मुकदमा करके तुम ने पाप किया था तुमने।"

अब तो रामस्वरूप भी बोल उठा, "तनिक विचार करो। यदि तुम्हारी योजना सफल हो जाती और तुम मुख्याधिकारी बन जाते तो क्या होता? क्या तब भी तुम सब सदस्यों को इतना कुछ दे देते?"

विष्णु हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "मेरी और सुमेर की तो यह योजना थी कि सब धन लेकर न्यूयार्क चले जाएं और वहां कोई काम-धन्धा करें।"

"और परिवार के सदस्यों को?" रामस्वरूप ने पूछ लिया।

"वह कहता था कि उनको अंगूठा दिखा दिया जाए।"

"तो नरक में गिरते-गिरते बचे हो। तुम्हारी मां ठीक कह रही है कि जाकर अपने बाबा के पांव पकड़कर क्षमा मांग आओ।"

"पर पिताजी, मैं तो अब यह विचार कर रहा हूं कि अब गांव में जाने की क्या आवश्यकता है? हम आपके नाम से एक प्राइवेट लिमिटेड कम्पनी खोलकर एक बहुत बड़ी कपड़ा मिल खोल सकते हैं।"

इसपर मोहिनी बोल उठी, "देहात में रहने और कोई कारोबार करने में परस्पर विरोध है क्या?"

"व्यापार और उद्योग तो नगरों में ही हो सकते हैं।"

"मुझे तो इसमें किसी प्रकार का विरोध प्रतीत नहीं होता। अन्तर दोनों स्थानों पर यह है कि वहां स्वच्छ निर्मल वायु है और यहां नगर की धूल-धक्कड़, भीड़-भाड़ है। कारोबार तो वहां भी किया जा सकता है।"

"जैसा रेणु के पिता कर रहे हैं?"

"तो उसमें कुछ हानि हो रही है क्या?"

"हानि तो है ही। लाखों में खेलनेवाले दो-दो पैसे का नमक-मिर्च बेचने लगेंगे।"

इसपर रेणु बोल उठी, "दो-दो पैसे का किसलिए, आप तो बिना दाम के ही बांट दीजिएगा। परमात्मा ने दिया है तो वह परमात्मा के नाम पर दिया भी जा सकता है।"

"और तुम्हारे पिता का दिवाला निकलवा दूं?"

मोहिनी ने कहा, "देखो विष्णु, किसीका दिवाला निकालना तुम्हारे बस में नहीं। जब तक इसके पिता में बुद्धि है और उसके अनुसार पुरुषार्थ कर सकते हैं तब तक तुम्हारा कोई भी काम उनकी हानि

नहीं पहुंचा सकेगा।"

"इसपर भी अब बात विचारणीय हो गई है।"

११

विष्णु अपने बाबा जुग्गीमल का सम्पत्ति के बटवारे पर धन्यवाद करने के लिए आया। यह चेक मिलने के दिन सायंकाल का ही समय था। विष्णु के साथ रेणु, मोहिनी और रामस्वरूप भी थे।

विष्णु जब बाबा की बैठक मे पहुचा तो वहा सुमेर को बैठा देख हंस पड़ा। सुमेर बाबा से विचार-विनिमय कर रहा था। उसको भी पता चल गया था कि वह पुन. धनवान बन गया है। उसके मस्तिष्क मे अब फिर हवा मे उड़ने की उमगें उठने लगी थी। जुग्गीमल ने जब पिछली रात शकुन्तला की नित्य होनेवाली दुर्दशा का वृत्तान्त सुना तो उसने पति-पत्नी को मिलनेवाली राशि का चेक पृथक्-पृथक् कर दिया। सुमेर के बच्चो को मिलनेवाली धनराशि भी शकुन्तला के चेक मे सम्मिलित कर दी।

सुमेर इसका कारण पूछने के लिए ही बाबा के पास गया था। दोनों मे बहुत ही उत्तेजना मे बातचीत हो रही थी। सुमेर ने कहा, "बाबा, यह तो आपने बहुत ही कृपा की है कि पूजी का बहुत-सा धन हम बच्चो मे बाट दिया है। परन्तु दो बातें मेरी समझ मे नही आई।"

"क्या ?"

"एक तो यह कि आपने शकुन्तला के तथा बच्चों के भाग का धन मुझको न देकर शकुन्तला को दिया है।"

"देखो सुमेर, यह योजना बड़ी माजी की है। जब तक वे जीवित हैं, परिवार उनका है। जो स्वयं को उनके परिवार मे नहीं समझते, उनको उनका दिया धन स्वीकार नही करना चाहिए। और जो स्वयं को उनके परिवार का अग मानते हैं, उनको उनके विधि-विधान स्वीकार करने चाहिए।"

"तो यह भी उनकी आज्ञा है कि पत्नी और बच्चों को मिलनेवाली राशि उसके पति को न दी जाए ?"

"नहीं, यह कोई नियम नहीं है। यह तो लेनेवालों की रुचि

पर निर्भर है।"

"तो यह शकुन्तला के कहने पर हुआ है ?"

"शकुन्तला ने अपने मुख से तो कुछ नहीं कहा। हां, उसकी अवस्था देख तुम्हारी दादी ने यही विधान नियत कर दिया है।"

"क्या अवस्था देखी है दादी ने उसकी !"

"अवस्था तो शकुन्तला ने स्वयं बताई है। उसका कहना है कि तुम कोकीन खाने लगे हो और अपनी विकृत वासना में उस दो बच्चों की मां की हत्या कर रहे हो। वह तुम्हारे साथ रहना नहीं चाहती।"

"और आपने उसको यह धन पृथक् देकर उसको मुझसे पृथक् रहने में सहायता कर दी है !"

"हां, पृथक् तो वह स्वेच्छा से होना चाहती है और हमने उसकी इच्छापूर्ति का साधन उसके हाथ में दे दिया है।"

"आप बहुत ही कुटिल व्यक्ति प्रतीत होते हैं। एक पत्नी को अपने पति की स्वाभाविक इच्छाओं की पूर्ति के विरुद्ध विद्रोह करने में प्रोत्साहन दे रहे हैं।"

"ठीक है सुमेर, तुम मुझे कुटिल कह रहे हो और वह मुझको देवता मान रही है।"

इस समय विष्णु और रामस्वरूप वहां आकर बैठ गए। रेणु और मोहिनी तो किशोरी के पास चली गई थीं।

विष्णु और रामस्वरूप सेठजी और सुमेर में हो रहे वार्तालाप सुन रहे थे। जब जग्गीमल ने यह कहा कि सुमेर की पत्नी उसको देवता मान रही है तो विष्णु ने वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हुए कहा "सुमेर, तुम बाबाजी को कुटिल कहते हो तो मैं इनको सरलचित्त मानता हूं। यह इस कारण कि तुम जैसे धूर्तों को भी वे परिवार का अंग मानकर लाखों दे रहे हैं।"

"पर तुम बीच में बोलनेवाले कौन हो ?"

"तो तुम नहीं जानते ? मैं वही हूं जो तुम्हारी धूर्तता का शिकार हो बाबा से मुकदमा लड़ने के लिए तैयार हो गया था। मैं आज बाबा के पांव पकड़कर उनसे क्षमा मांगने के लिए आया हूं।"

"आप नहीं जानते विष्णुजी ! यह जो कुछ मिल रहा है तो बड़ी मांजी के कहने से मिल रहा है। ये तो व्यर्थ बीच में

लड़ा रहे है। इन्होंने यह किया है कि मुझे मेरी पत्नी से पृथक् मान उसे और मेरे बच्चों का धन उसको दे दिया है।"

"तो फिर क्या हुआ ? तुम अपनी पत्नी की मिन्नत-समाजत कर उससे वह धन वैसे ही ठग सकते हो जैसे पिछला सारा धन ठगा था।"

इसपर जुग्गीमल ने कहा, "यह तो मुझे पता नहीं था। उस बेचारी ने यह नहीं बताया। यदि यह पता होता तो इसके पौने तीन लाख में से उसका ठगा धन मैं उसको दिलवा देता।"

विष्णु ने पहले धन के विषय में बताया, "बाबा, जब मद्रास में ये और इसके पिता अकिंचन हो गए थे तो शकुन्तला भाभी ने कहकर अपने पिता से इसे पचास हज़ार रुपया दिलवाया था। शकुन्तला के पिता ने आपसे राय की और पचास हज़ार रुपया आपसे दिलवा दिया। उस एक लाख रुपये से इन पिता-पुत्र ने सिंगापुर में कारोबार किया। उस कारोबार से इन्होंने बहुत लाभ उठाया। जब इसके पिता दक्षिण अमेरिका जाने लगे तो कारोबार बेचकर आधा धन उन्होंने ले लिया, शेष आधा धन इसने शकुन्तला के पास जमा कर दिया था। उसीको लेकर इसने सट्टा खेलना आरम्भ किया और सब कुछ गंवा दिया है।

"मैं समझता हूं एक दिन और शकुन्तला ने मेरे सामने ही इससे कहा था कि वह धन उसका ही था। परन्तु अब तो वह रहा नहीं। मैं यह समझता था कि यह पति का हक है कि प्रेम-मोहब्बत दिखाकर अपनी पत्नी को लूट ले, परन्तु बलपूर्वक छीनना तो उचित नहीं।"

जुग्गीमल हंस पड़ा। रामस्वरूप मुस्कराता हुआ अपने पुत्र की बात सुनता रहा।

सुमेर ने उससे पूछा, "तो यह शुभ कार्य तुम अपनी पत्नी के साथ कर रहे हो ?"

"मेरी स्थिति उससे भिन्न है। उससे इसकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। मेरी पत्नी का बैंक में कोई खाता नहीं है और वह अपना सब रुपया मेरे ही खाते में जमा करानेवाली है।"

"परन्तु प्रश्न तो यह है कि यदि वह न दे तो क्या करोगे ?"

"उसके देने न देने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। मैं चाहता

दूं और वह कह रही है कि रुपया उसके नाम जमा कराकर व्यर्थ में उसे कष्ट दिया जा रहा है।

"उसे तो रोटी, कपड़ा, एक लकड़ी की खाट सोने के लिए और उसका तानपूरा चाहिए। इससे अधिक का प्रबन्ध माताजी उसके लिए एक गांव में कर रही हैं।"

जुग्गीमल ने बात समाप्त करते हुए कहा, "देखो सुमेर, इतना कुछ तुमको मिल गया है। यदि इसमें आपत्ति है तो बड़ी मांजी से अपील करो। मैंने जो ठीक समझा है कर दिया है।"

"बड़ी मांजी तो यहां पर हैं नहीं। और रुपया तो कल शकुन्तला निकलवा लेगी।"

"देखो, यदि तुमको अपील करनी है तो मैं शकुन्तला का रुपया एक मास के लिए रुकवा सकता हूं। तुम इस अवधि में वहां से हुक्म ले आओ।"

सुमेर क्रोध में उठा और बैठक से बाहर निकल गया।

रामस्वरूप ने पूछा, "यह लड़का तो महामूर्ख है। देखो भापा, हमने तो निश्चय किया है कि अब कारोबार नहीं करेंगे। इस धन को किसी बैंक में जमा कर देंगे। जब यह रुपया किसी कारोबार में लग जाएगा तो हमें व्याज मिलेगा। उससे हम एक गांव में जाकर रहना चाहते हैं। मोहिनी वहां भगवद्भजन की योजना बना रही है और मैं वहां अपने पढ़ने-लिखने का व्यसन चलाऊंगा। विष्णु वहां बच्चों को पढ़ाएगा और रेणु मछली पकड़-पकड़कर भूनकर खाया करेगी और कीर्तन करेगी।"

जुग्गीमल हंस पड़ा। फिर बोला, "सिद्धान्त रूप में तो हमने भी यही योजना बनाई है। हम यहां से काशीजी में जाकर रहेंगे। किशोरी तो अपना पूजा-पाठ चलाना चाहती है और मैं मांजी की योजना को चलाने में लग जाऊंगा। व्यापार बहुत कर लिया है। अब यह क्षेत्र दूसरों के लिए छोड़ रहा हूं।"

"बाबा," विष्णुसहाय ने कहा, "धन हाथ में आ जाने से एक बार तो मन में आया था कि सोने के बाजार में एक दांव लगा आऊं। परन्तु रेणु ने एक बहुत मजेदार बात कही है। इससे यह विचार छोड़ दिया है। वह बोली, 'जाइए मेरा धन भी उसीमें लगा दीजिए।

परन्तु एक बात बताइए कि इस धन के दुगुना हो जाने पर आप दुगुना खाने लगेंगे और दुगुने बड़े कपड़े पहनने लगेंगे अथवा दुगुनी लम्बी-चौड़ी खाट पर सोने लगेंगे ? यदि ऐसा नहीं हुआ तो यह जुआ खेलने से क्या लाभ ?'

"भापा, उसकी इस बात को सुनकर चुप हो गया हूं और अब गांव में जाकर रहने के लिए तैयार हो गया हूं। रेणु ने बताया है कि गांव में एक स्कूल खोलकर पढ़ा दिया करू तो चित्त लग जाएगा।"

"सत्य है," जुग्गीमल ने कहा, "रेणु ने बात बहुत ही बुद्धिमत्ता की की है। एक सीमा तक तो हमको धनोपार्जन की आवश्यकता निर्वाह के लिए करनी होती है। उस सीमा के ऊपर जाकर धन क्यों कमाया जाए, यह एक महान प्रश्न है। धन पैदा करने के लिए आवश्यकताएं बढ़ाई जाए, यह एक अयुक्त व्यवहार है। हमारी फर्म में धन पैदा किया जाता है यज्ञ रूप व्यय करने के लिए।

"यह बात रेणु ने अपने कथन में कही है। इसीलिए आपको नि शुल्क स्कूल खोलने की बात कही है।"

इस समय किशोरी, मोहिनी, रेणु और शकुन्तला वहा आ गए। किशोरी ने आते ही कहा, "सुमेर अपना बिस्तर और सूटकेस बाध कहीं जाने की तैयारी कर रहा है। उसने शकुन्तला को चलने के लिए कहा है और इसने उसके साथ जाने से इन्कार कर दिया है।"

"क्यो नही जा रही शकुन्तला ?"

"पिताजी, आपने रुपया देने के साथ यह शर्त तो लगाई नही कि मुझे परमेश्वरी के पिता के साथ ही रहना चाहिए ?"

"रुपया देने में शर्त यह है कि तुम बड़ी माजी के परिवार में वृद्धि करने मे सहायक हुई हो अथवा नही।"

"मैंने उनसे पूछा था कि वे कहा जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि अभी तो बम्बई ही जा रहे हैं। बाद में फिर विचार कर लेंगे। इस पर मैंने उनके साथ जाने से इन्कार कर दिया है।. यह इस बात से डरकर कि वे मेरे अथवा बच्चों के साथ किसी प्रकार का [illegible] व्यवहार न कर बैठें, मैं बच्चो को लेकर माजी के [illegible] गई हू।"

"और बच्चों की रक्षा कौन कर रहा है ?

"विष्णु के बच्चे वहां हैं और मैं चौकीदार को भी सचेत कर आई हूं।" किशोरी ने कह दिया।

इसपर मोहिनी ने कहा, "भापा, आपके कुआं लगवाते-लगवाते सारे परिवार को ही प्याऊ लगी हुई मिल गई है।"

"हां, इसपर भी कुआं लगवाने के लिए पर्याप्त धन रख लिया है। विष्णु आदि लोग कुएं में विश्वास नहीं रखते। इसलिए इनके लिए प्याऊ ही लगाई है। वैसे व्यापार भी एक कुआं ही था और यह धन उगल रहा था। कुएं पर प्याऊ लगवाई हुई थी जो केवल परिवार के सदस्यों के लिए ही थी। उस कुएं पर पम्प लगा निरन्तर जल देनेवाले कई स्रोत लगाने का विचार था। वह योजना विष्णु और कुछ अन्य परिवार के सदस्यों को पसन्द नहीं आई। अतः व्यापार के इस कुंए को बन्द कर इसका पूर्ण जल निकाल परिवार के सदस्यों में बांट दिया है। इसमें से बचाए जल से एक क्षेत्र की सिंचाई करने का विचार है। उसमें से एक अनन्त फल देनेवाला वृक्ष रोपने का विचार है। जब वह फल देगा तो फिर उसके बीज दूर-दूर जाकर उगने लगेंगे।"

१२

ये लोग अभी बातें कर ही रहे थे कि बगल के कमरे में बच्चे के चीखने की आवाज सुनाई दी। सब बैठे हुए उधर को भागे। सुमेर अपने छोटे बच्चे को गोद में उठाए और बड़े बच्चे को हाथ से घसीटते हुए भागा तो चौकीदार ने उसके सिर पर लाठी से प्रहार किया था। वह चक्कर खाकर भूमि पर अचेत हो गिर पड़ा। वे बच्चे, जिनको वह उठाकर लिए जा रहा था, चीखने लगे। बच्चों की चीख-पुकार सुनकर बराबर के कमरे से लक्ष्मी और गजाधर वहां चले आए थे। उनके बच्चे भी किशोरी के कमरे में ही आए हुए थे।

गजाधर ने सुमेर को अचेत पड़े और उसके पास रोते हुए उसी-के बच्चों को देखा तो समझ नहीं सका कि क्या हो गया है। जुग्गीमल तो समझ गया था कि सीताराम चौकीदार ने उसपर वार किया है। उसके सिर से रक्त बह रहा था।

सीताराम ने सेठजी से कह दिया, "यह मरेगा नही । बहुत हल्का वार किया है । इसके सिर पर पानी की पट्टी कर दी जाए।"

शकुन्तला ने अपने रोते बच्चों को उठाया और अपने कमरे में आकर उनको चुप कराने लगी । किशोरी ने सीताराम से कहा कि जल और कपडा लेकर इसका रक्त बन्द करो ।

गजाधर ने अपना रूमाल दिया और सीताराम एक बाल्टी में पानी भर लाया । रक्त बन्द करने का यत्न किया जाने लगा ।

रक्त बन्द होने से पहले ही सुमेर को चेतना आ गई थी । अब उसे उठाकर एक पलंग पर डाल दिया गया और सिर पर पानी की पट्टी बांध दी । सेठजी के पास शिलाजीत रखी थी । वह दूध के साथ उसे पिला दी गई ।

उस दिन तो वह वहा जुग्गीमल के बैठक घर मे ही पड़ा रहा । चौकीदार सीताराम और रसोइया उसकी सेवा-सुश्रूषा करते रहे। शकुन्तला उसके पास नही आई । न ही वह अपने बच्चों को उसके समीप ले गई । रात को सुमेरचन्द पीडा के कारण सो नही सका । अगले दिन सुबह सुमेर के बोरो-आयडोफार्म लगाकर ऊपर से पट्टी कर दी । इससे पीडा कम होने लगी और वह दिन-भर सोता रहा । सायंकाल जब वह जागा और उसे दूध इत्यादि पिला दिया गया तो जुग्गीमल ने पूछा, "सुमेर, अब क्या प्रोग्राम है ?"

"मैं पुलिस में रिपोर्ट लिखाने के लिए जा रहा हूं।"

"तो पुलिस को यही बुला दू ?"

"नही, मैं स्वय यह सब कुछ कर लूंगा । डाक्टर का सर्टिफिकेट भी तो लेना है ।"

"तो जाओ, जो मन में आए करो ।"

"मेरा सामान मंगवा दीजिए । मैं शकुन्तला के सामने नही जाना चाहता ।"

"वह भी पुलिस भेजकर मंगवा लेना ।"

"अच्छी बात है ।" इतना कहकर उसने जूता पहना और बैठक घर से बाहर निकलकर नीचे उतर गया । परन्तु पाच मिनट में ही वह लौट आया ।

जुग्गीमल और गजाधर विचार कर रहे थे कि पुलिस क्या कर

सकती है। गजाधर सेठजी को बता रहा था, "डाक्टर की रिपोर्ट पर ही यह निर्भर है कि पुलिस इसपर स्वयं कार्यवाही करेगी अथवा नहीं। इस कारण पुलिस की कार्यवाही की प्रतीक्षा करनी चाहिए।"

जब सुमेर लौटा तो जुग्गीमल ने उससे पूछ लिया, "तो पुलिस ले आए हो?"

"मेरा पर्स यहीं रह गया है।"

"कहां? देख लो।"

सुमेर उस बिस्तर को देख रहा था जिसमें वह लेटा हुआ था। परन्तु पर्स वहां पर नहीं था। उसने बिस्तर झाड़ा और लपेटकर एक ओर रख दिया। पलंग पर भी कुछ नहीं था। उसने पलंग को घसीटकर एक ओर किया तो पर्स दूर दीवार के साथ पड़ा मिला। वह पलंग के नीचे घुस गया और पर्स को उठाकर बाहर ले आया।

वह विस्मय कर रहा था कि वहां कैसे चला गया। उसने कमरे में खड़े-खड़े ही पर्स खोला और उसे देखता रह गया। उसमें दस-दस रुपये के कुछ नोट थे, तीन रुपये के सिक्के थे और कुछ रेज़गारी थी।

उसने नोट निकालकर गिने तो वे चार थे। इससे उद्विग्न हो उसने बाबा की ओर देखकर कहा, "मेरी चोरी हो गई है।"

"क्या चोरी गया है?"

"पर्स में बहुत रुपये थे। अब तो चालीस ही रह गए हैं।"

"कितने थे?"

"तीन-चार सौ से अधिक थे।"

"इतने तुम्हारे पास कहां से आए? जब तुम यहां पहुंचे थे तो तुम्हारे पर्स में तैंतालीस रुपये बारह आने ही तो थे।"

"तो आप मेरी तलाशी लेते रहे हैं?"

जुग्गीमल हंस पड़ा। हंसते हुए बोला, "यदि ऐसा न करता तो तुम्हारे झूठे दावे का खण्डन कैसे कर सकता।"

"पर भापा, जाने के समय तो मेरे पर्स में चार सौ के लगभग रुपया था। और फिर वह आपका दिया पौने चार लाख का चेक भी तो था।"

"सुमेर, बैठकर बात करो। ज़रा समझ लो। तुम जब यहां आए थे तो तुम्हारे पर्स में उतना ही कुछ था जितना अब है। शेष तुम यहां से चुराकर अथवा किसीकी भद्रता के परिणामस्वरूप लिए

जा रहे थे। जिसकी तुमने चोरी की थी उसने अपना रुपया वापस ले लिया है और जिसने अपनी भलमनसाहत के विचार से तुमको पौने चार लाख का चेक दिया था, उसने वह वापस ले लिया है। वह तुम्हें अब सहायता का पात्र नहीं समझता।"

"तो मैं क्या करूं ?"

"बताओ, तुम क्या करना चाहते हो ?"

"पहले तो आपके चौकीदार सीताराम को कैद करवाना चाहता हूं।"

"वह तो पहले ही कैद है। यहां इस घर में पिछले दस वर्ष से है। एक बार उसे छुट्टी दे दी थी। परन्तु वह यहां से गया ही नहीं। विवश उसको फिर नौकर रखना पड़ा था। हां, जेलखाने में वह नहीं जाएगा। चाहो तो यत्न कर सकते हो।"

"मुझे दक्षिण अमरिका अपने माता-पिता के पास तक पहुंचने का खर्चा दीजिए, मैं वहां जाना चाहता हूं।"

"तुमको वहां भेजने का प्रबन्ध कर दूंगा। नकद कुछ नहीं मिलेगा।"

"और खाने-पीने का क्या होगा ?"

"सब प्रबन्ध हो जाएगा। तुम वहां सही-सलामत पहुंच जाओगे और तुम्हारे ये तैंतालीस रुपये बारह आने तुम्हारे पास रहेंगे।"

"मुझे मेरी पत्नी से मिलने की स्वीकृति मिलनी चाहिए।"

"पर तुम तो उसके सामने जाना नहीं चाहते थे ?"

सुमेर मुस्कराया और बोला, "वह तब था जब उसका धन चुराकर भाग रहा था।"

जुग्गीमल और गजाधर हंस पड़े। जुग्गीमल ने हंसते हुए कहा, "परन्तु इसके लिए तो तुम्हारी पत्नी से पूछना पड़ेगा।"

"तो पूछ लीजिए। मैं आज के उपरान्त उससे नहीं मिलूंगा।"

जुग्गीमल ने गजाधर से कहा, "जरा अपनी भाभी से पूछ लो, वह इस महापुरुष के दर्शन करना चाहती है, अथवा नहीं और करना चाहती है तो कहां करना चाहती है ?"

गजाधर गया और बहुत देर बाद शकुन्तला को साथ लेकर वहां आ गया। आते ही उसने कहा, "भाभी तो भैया से मिलने के लिए

आना नहीं चाहती थीं। बहुत कहने पर यहां बावा के सामने ही मिलने के लिए तैयार की जा सकी हैं। वह भी तब जब माताजी साथ आई हैं।"

"क्यों, क्या बात है शकुन्तला ?"

"मैंने मन में इनसे सम्बन्ध विच्छेद कर रखा है। यह तो बम्बई में कर लिया था। इसपर भी पिछले सम्बन्धों के कारण इनको किसी प्रकार से आपसे सहायता दिलाने के विचार से साथ ले आई थी। मैं समझती थी कि आप इनके अमेरिका भेजने का प्रबन्ध कर देंगे। यहां आकर जब इनको पौने चार लाख रुपये का चेक मिला तो मैंने आपसे इस विषय में कुछ नहीं कहा। और जब ये यहां से जाने लगे तो मैंने इनके जाने में भी कोई बाधा खड़ी नहीं की। परन्तु ये तो मेरे धन की चोरी और बच्चों पर डाका डालकर जा रहे थे। भला हो सीताराम का कि उसने बच्चों को बचा लिया। मैं समझ नहीं सकी थी कि ये मुझसे क्या कहना चाहते हैं। दादा गजाधर के बहुत कहने पर मैं आई हूं और जानना चाहती हूं कि ये अब मुझसे क्या चाहते हैं ?"

सुमेरचन्द का कहना था, "मैं चाहता हूं कि हम पुनः अपना घर बसाएं। जहां तुम कहोगी, वहीं रहूंगा। जैसे तुम रखोगी वैसे ही रहूंगा। मेरे भाग का रुपया भी बावा तुम्हें ही दे दें, मुझे आपत्ति नहीं होगी।"

"पर आपकी बात पर विश्वास ही कैसे किया जा सकता है ? आपका पूर्ण जीवन ही झूठ बोलने, धोखा देने, ठगी करने और दुराचार तथा अनाचार में बीता है।"

"नहीं, अब ऐसा नहीं होगा। सीताराम की लाठी ने मेरे मस्तिष्क की कुण्डलिनी खोल दी है।"

जुग्गीमल और गजाधर मुस्करा रहे थे। इसपर भी वे पति-पत्नी के बीच में बोलना नहीं चाहते थे। शकुन्तला कुछ क्षण तक आंखें मूंदे रहकर बोली, "मुझे आपके एक शब्द पर भी विश्वास नहीं। यह स्थिति है इस समय की। भविष्य में आप अपनी तपस्या और आचरण से विश्वास दिला सकेंगे तो बात दूसरी है।"

"तुमको कैसे विश्वास होगा ?"

"देखिए जी ! एक दिन बड़ी मांजी ने बताया था कि आपके

बाबा केवल ढाई सौ रुपया लेकर इस कलकत्ता शहर में आये थे। भाग-दौड़ कर उन्होंने इतना कुछ निर्माण किया है। [illegible] तो आपको भी बड़ी माजी से इतना कुछ मिल सकता है। [illegible] पाँच-दस वर्ष में कुछ बनकर दिखाइए तो मैं अपने [illegible] पुनरावलोकन कर सकती हूं। अभी तो आपसे मैं [illegible] कर चुकी हूं।"

"तो लाओ ढाई सौ रुपया। मैं भी अपनी किस्मत आजमाईश करूंगा।"

"तो बड़ी माजी को लिखना पड़ेगा। इस प्रकार [illegible] ही दे सकती हैं। मां का दिया धन ही फल सकेगा।"

इसपर जुगलमल ने कहा, "माजी के पास [illegible] नहीं है। मैं उस पूंजी के बंटवारे की बातें करने के लिए [illegible] वे कह रही थीं कि उनका सब कुछ [illegible] है। [illegible] स्वीकृति से ही मिल सकता है।"

"तो काका, मुझे अमेरिका भेजने का प्रबन्ध कर दो।"

जुगलमल ने गजाधर को सम्बोधित कर कहा, "[illegible], इन्हें किसी होटल में रहने का प्रबन्ध कर दो। होटलवालों से कह दो कि इनके खाने और पीने का बिल हमको दिया जाए। [illegible] यह सारा [illegible] में स्वयं करूंगा। हां, इनको [illegible] अमरीका जाने के बाद में ठहरने का प्रबन्ध भी कर दो जिससे यह वहां [illegible] रहे।

१३

जाधर और लक्ष्मी में अपने भावी जीवन के विषय में गम्भीरता
ार हो रहा था। दो परस्पर विरोधी दिशाओं में विचार किया
हा था। गजाधर के पास इस समय अपना, लक्ष्मी का और बच्चों
म का, सब मिल-मिलाकर तेईस लाख रुपया था। गजाधर
हना था कि इसे किसी उद्योग के हिस्से में लगा दिया जाए और
उसकी आय का भोग किया जाए।

इस शताब्दी का प्रथम यूरोपीय युद्ध समाप्त हो चुका था। इसके
णामस्वरूप भारत में नये-नये उद्योग खुलते जा रहे थे। कई उद्योग-
ों के विषय में योजनाएं बनकर सर्व साधारण के सामने आ गई
।

टाटा के इस्पात के कारखाने का श्रीगणेश तो पहले ही हो चुका
ा और भारत सरकार से सहायता के लिए सालाना सबसिडी मिलने
ी बात हो रही थी। इसके हिस्से बाजार में बिकने के लिए आए
ुए थे। गजाधर का विचार था कि इस्पात का कारखाना घाटे का
काम नहीं। वह इसके हिस्से खरीदने का विचार कर रहा था।

इसके विपरीत लक्ष्मी का कहना था कि धन बैंक में जमा करा
या जाए। पांच-दस बैंकों में जमा कराया जाए और उसके ब्याज से
दान-दक्षिणा और निर्वाह किया जाए। बच्चों को अच्छी से अच्छी
शिक्षा दी जाए और स्वयं कम से कम धन का व्यय किया जाए।

मतभेद दो बातों में था। एक तो धन को उद्योग में लगाया जाए
अथवा ब्याज पर बैंकों में रखा जाए; दूसरा मतभेद था निर्वाह के
प्रश्न पर। गजाधर का विचार था कि पक्का निवास स्थान स्विटज़र-
लैंड में रखा जाए और बच्चों की शिक्षा फ्रांस अथवा इंगलैंड में दी
जाए।

कई दिन के विचार विमर्श के उपरान्त यह समस्या भी जुग्गी-
मल के सम्मुख आई। इस समय तक जुग्गीमल अपना सब काम कलकत्ता
से समेट चुका था। उसने काशीजी में एक मकान अपने रहने के लिए
ले लिया था और अब वह केवल दो कामों के लिए कलकत्ता में टिका
था। एक तो शकुन्तला के विषय में प्रबन्ध करने और दूसरे सुमेर

को विदेश भेजने के विषय में।

लक्ष्मी और गजाधर सेठजी के बैठक घर में आए तो सेठजी ने पूछा, "कुबेर के विषय में क्या हुआ है?"

"पासपोर्ट तो बन गया है। कोई सीधा जहाज यहां से आयोवासा मिल नहीं रहा है। तीन स्थानों पर जहाज बदलना पड़ेगा। कम से कम काल के लिए उन स्थानों पर प्रतीक्षा किए बिना जाने के लिए एक टूरिस्ट एजेंसी से प्रबन्ध कर रहा हूं। एक सप्ताह के भीतर प्रबन्ध हो जाएगा।"

"बाबा, मैं यह विचार कर रहा हूं कि मैं भी जरा बाहर घूम आऊं। परन्तु लक्ष्मी का विचार कुछ दूसरा है।"

"क्या विचार है?"

"यह कह रही है कि बच्चों को यहां किसी होस्टल में भरती कर दें। ललिता और सिद्धेश्वर तो भरती हो सकते हैं। छोटी को अभी किसी स्कूल में भरती नहीं कराया जा सकता। अतः उसके इस योग्य होने तक हम घाटू में घर पर रहें। यहां बड़ी माजी की सेवा करें। वे अब अस्सी वर्ष की हो चुकी हैं। यहां तीन-चार वर्ष तक रहें। तब तक लट्टूनी भी किसी स्कूल में भरती होने लायक हो जाएगी। तब हम विश्व-भ्रमण के लिए निकल जाएंगे।"

"बात तो ठीक है। परन्तु मेरा विचार है कि दूर की बात पर मस्तिष्क को कष्ट देने की अपेक्षा तुम वर्तमान पर अधिक विचार करो। अपने रुपये को कहां लगा रहे हो और अपनी रजोगुणी प्रवृत्ति का क्या कर रहे हो? मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि काम क्या करोगे?"

"मेरा विचार यह है," गजाधर ने कहा, "बच्चों को स्विट्ज़रलैंड में भरती करा दें और हम विश्व-भ्रमण के लिए अभी ही चल पड़ें। आधा रुपया हिन्दुस्तान में कुछ एक विश्वस्त उद्योगों में लगा दें। एक चौथाई इंगलैंड में और एक चौथाई अमेरिका में। इसकी आय पर मजे में विश्व-भ्रमण कर सकेंगे।"

"योजना तो यह भी ठीक है। परन्तु मेरा तो यह प्रश्न है कि वर्तमान पर ध्यान पहले दो। दृष्टि भविष्य पर रखनी ठीक [illegible] वर्तमान को छोड़कर भविष्य में विचरना ठीक नहीं।"

"पर बाबा," गजाधर ने कहा, "भविष्य को लक्ष्य में रखकर ही तो वर्तमान की कल्पना करनी चाहिए न!"

जुग्गीमल को समझ आया कि वह एक भूल कर रहा है। वह समझ रहा है कि दोनों के मन में भविष्य की कल्पना स्थिर हो चुकी है और वह उनकी इस कल्पना को जानता है।

वह गजाधर से हुई तब की बात स्मरण कर रहा था, जब वह मद्रास की ब्रांच का काम छोड़ दार्जिलिंग में रहकर लौटा था। उस समय गजाधर और लक्ष्मी सहमत थे कि उन्हें अपना जीवन आत्मोन्नति में व्यय करना है।

जुग्गीमल को फर्म की पूंजी के वितरण के उपरान्त की उनकी स्थिति का ज्ञान नहीं था। वास्तव में इतने धन के मिल जाने से दोनों के दृष्टिकोण में अन्तर आ गया था। दोनों का ही दृष्टिकोण वह नहीं रहा था जैसा धन के मिलने से पहले था।

अतः सेठजी ने कहा, "मैं समझता था कि तुम दोनों की दूरकालीन योजना एक ही है। इसी कारण मैं तुमसे बार-बार कह रहा था कि उसका ध्यान छोड़ वर्तमान पर ध्यान दो। अच्छा, पहले भविष्य, दूर भविष्य की बात ही विचार कर लें।

"देखो, मैं बताता हूं कि जब मैं कलकत्ता आने के लिए तैयार हुआ था तो मेरे मन में दो विचार जाग्रत् हुए थे। एक यह कि राजस्थान के कठोर जीवन से निकलकर नगर के सुख-सुविधापूर्ण जीवन को प्राप्त कर सकूं।

"परन्तु मां ने इन दोनों विचारों से ऊपर एक विचार रख दिया। वह था धर्म-कर्म के लिए धन पैदा करना। वे तो मुझको ढाई सौ रुपया देने के लिए केवल इस कारण तैयार हुई थीं कि मैं धन पैदा कर धर्म-कार्य करने के योग्य हो सकूंगा। अतः पांच वर्ष के अनथक प्रयत्न के उपरान्त जब मैंने मां को लिखा कि मैं धनवान हो गया हूं तो मैंने यह भी लिखा कि खाटू में एक अच्छा, सब प्रकार से आराम दे सकनेवाला मकान लिया जाए। मैंने रुपया भेजा तो मां ने वह हवेली बनवा ली जिसमें आजकल वे वहां रहती हैं। दूसरी बात मैंने अपने विवाह के विषय में लिखी थी।

"मां ने इसका भी प्रबन्ध कर दिया परन्तु साथ ही अपने ढाई

सौ रुपये का मूल और व्याज मांग लिया। साथ ही कह दिया कि लाभ का तेरह प्रतिशत धर्मादा निकालकर अलग कर दू।

"मा के ऐसा लिखने पर मैं समझा था और अब अनुभव से बताता हूं कि धन पैदा करने मे सासारिक कामनाएं अन्तिम ध्येय नहीं हो सकती। एक तो ये कामनाए कभी तृप्त नही होती और फिर दूसरे इनके लिए धन पैदा करता-करता मनुष्य ऊब जाता है।

"मैं देख रहा हू कि यही अवस्था सुमेर और तुम्हारे मन की हो रही है। कामनाए तृप्त नही होती परन्तु वर्तमान उपलब्ध कामनाओं से मन ऊब रहा है। परिणामस्वरूप नई-नई कामनाओ की खोज में योजना बनाना चाहते हो। तुम्हारा भविष्य स्थिर नही। कामनाओं की प्राप्ति में स्थिर रह सकता ही नही। अब कोई स्थिर भविष्य बनाओ और फिर उसपर दृष्टि रखते हुए वर्तमान मे जीवन चलाओ।

"ज़रा अपने जीवन के इस पक्ष का भी वर्णन कर दू तो तुमको विचार करने में सहायता मिल जाएगी। लाखो और करोड़ो का व्यापार करते हुए, लाखो रुपयों का लाभ अपने पुत्र-पौत्रों को देते हुए भी मैंने कभी भी धर्म-कर्मवाला उद्देश्य अपनी दृष्टि से ओझल नही होने दिया। परिणाम यह हुआ कि मेरी बुद्धि निर्मल रही। मेरा उत्साह बढता रहता था और मुझे जीवन में रस आता रहता था।

"नरेश की हवेली की सीढियो के नीचे कोठरी मे रहते हुए भी और फिर वर्तमान हवेली के सब प्रकार की सुख-सुविधायुक्त जीवन में विचरते हुए भी दृष्टि यही रही है कि मुझे व्यापार के लाभ की संपत्ति धर्मकार्य मे व्यय करनी है। साधु-सन्त, महात्मा, मन्दिर, धर्मशाला तथा विद्यालय, जो भी मागने आया यहा की प्याऊ से कुछ न कुछ प्राप्त करके ही गया।

"परन्तु मां ने अपनी अन्तिम तीर्थयात्रा से लौटकर एक और विचार उत्पन्न कर दिया है कि ये प्याऊ ठीक हैं परन्तु इनसे भी ठीक हो यदि एक कुआं लगा दू।

"तव से मैं इसी धुन में लगा हूं। माजी ने कहा था कि जहा कुआं नही खोदा जा सकता, वहा पर नल लगाकर उससे जल ऐसे स्रवित कर दो कि वह निरन्तर उपलब्ध होता रहे।

"अब मैं इसी दिशा मे कार्य कर रहा हूं। मेरा काम करने मे

साह कम नहीं हुआ। मेरी वुद्धि में विभ्रम उत्पन्न नहीं हुआ और जीवन से थका नहीं हूं।

"मेरे कहने का अर्थ यह है कि भविष्य का निश्चय करो, कुछ सा भविष्य जो पल-पल में वदलता न रहे। वह स्थायी, उपकारी, चत्त को सन्तोप देनेवाला और इस संसार को वर्तमान से अधिक उन्नत करनेवाला हो।

"तभी तुम वर्तमान का निश्चय कर सकोगे।"

लक्ष्मी और गजाधर दोनों वावा का मुंख देखते रह गए। जुग्गीमल प्रश्न-भरी दृष्टि से उनकी ओर देख रहा था। गजाधर तो मन में विचार करने लगा था कि उस दिन का विचार स्थगित कर अपने घर में वैठ लक्ष्मी के साथ पृथक् विचार करेगा। परन्तु उसके कहने के पूर्व ही लक्ष्मी वोल उठी, "वावा, मैं तो इसी दिशा में विचार कर रही थी। मेरा कहना यह है कि वड़ी मांजी कुआं लगाने में लीन हैं। हम उनके पास जा उनकी सेवा-सुश्रूपा कर उनके जीवन को इतना दीर्घ कर सकें कि वे अपने कुंए से स्रवित जल से स्थान-स्थान के लोगों को तृप्त होता देख सकें। इससे हमारा जीवन उनके जीवन से संयुक्त होकर उनका ही जीवन वन जाएगा और उनके जीवन-कार्य के अन्तिम क्ष्यस्थान की ओर ले जाने का हमको भी श्रेय प्राप्त होगा।"

"अर्थात् तुम भी अपने जीवन को उसी कुएं के निर्माण में लगा देना चाहती हो। परन्तु ऐसा भी तो हो सकता है कि निकट भविष्य में ही तुम मांजी को विष्णु की भांति वूढ़ी, कुण्ठित वुद्धि और रूढ़िवादी मानने लगो।"

"हो सकता है। पर वावा, हम विष्णुजी की भांति छल अथवा वलपूर्वक उद्देश्य वदलने का यत्न नहीं करेंगे। हम समझ-समझाकर कार्य करना चाहेंगे।"

इसपर गजाधर ने कहा, "आज से चार वर्प पूर्व मैं कुछ इसी दिशा में विचार करता था परन्तु अव प्रचुर मात्रा में साधन सामने देख मेरी कामनाएं उद्दीप्त हो उठी हैं।"

"तव तो वात भयंकर रूप धारण कर रही है।"

"पर वावा, मैं कहती हूं," लक्ष्मी ने अपनी वात वताते हुए कहा "मैंने इनसे कहा है कि कामनाएं तो अस्थायी हैं। उद्देश्य स्थायी होन

चाहिए। स्थायी और अस्थायी कार्यों का समन्वय हो जाना चाहिए।"

लक्ष्मी की बातों से उत्साहित हो जुग्गीमल ने कहा, "देखो गजाधर, कामनाओं का भोग त्याज्य नहीं है। परन्तु इनका उद्देश्य से समन्वय नहीं हो सकता क्या?"

"उद्देश्य के विषय में मेरी बुद्धि काम नहीं कर रही। पहले भी जब मैं लक्ष्मी की बात मानता था तो केवल इस कारण कि पति-पत्नी में समन्वय रहना चाहिए।"

"और अब तुम धन की प्रचुरता देख इस समन्वय को असम्भव मानने लगे हो?"

"नहीं, इसको तो मैं अपने साथ ही रखना चाहता हूं। परन्तु यह तो खाटू में चलकर रहने के लिए कह रही है।"

"वह तो मैं केवल लटूनी के बड़े होने तक के लिए कह रही हूं।"

"देखो लक्ष्मी, तुम लटूनी की चिन्ता न करो। उसे किशोरी अपने पास रख लेगी।"

"पर बाबा, ये कह रहे थे कि ललिता और नित्येन्द्र को स्विट्ज़रलैंड, इंगलैंड अथवा फ्रांस में पढ़ाएंगे।"

"हां, यह एक विचारणीय बात है। इसका भी तो भविष्य के साथ सम्बन्ध है।"

"मैं उनको विजेता जातियों के तौर-तरीके सिखाना चाहता हूं।"

"तुम्हारा मतलब यह है कि तुम्हारे पूर्वजों को मुसलमान विजेताओं का रहन-सहन सीखना चाहिए था? यही कह रहे हो न? तो देखो, पहले तो अपने पूर्वजों पर विजय प्राप्त करनेवाले के तौर-तरीके सीखने के लिए मुसलमान हो जाओ। फिर मुसलमानों को जीतने वाले अंग्रेज़ों, फ्रांसीसियों के तरीके सीख लेना। पग-पग करके चलो। लम्बी छलांग लगाओगे तो खाई में ही गिर पडोगे।"

लक्ष्मी को यह युक्ति बहुत मज़ेदार प्रतीत हुई। उसने कहा, "ठीक है, पहले मुसलमान बन चार विवाह करो और उनके तौर-तरीके का मज़ा लो। दिन में पांच बार नमाज़ पढ़ो, एक बार मक्के जाकर हज भी करो। फिर हम ईसाई हो जाएंगे और फिर पुर्तगाली विजेताओं के तौर-तरीके का आनन्द भी ले लेंगे।"

जुग्गीमल मुस्कराता हुआ गजाधर की ओर देख रहा था।

जाए तो मैं इस नरक-कुण्ड से निकल सकता हूं।"

रामेश्वरी ने दो सौ रुपया भिजवा दिया और कहा कि तुरन्त घाटू चले आओ। किन्तु सुधीर नहीं आया। एक वर्ष उपरान्त उसका कलकत्ता से पत्र आया, "बड़ी भाभी की कृपा से मैं कराची से तो बाहर चला आया था परन्तु घाटू में आते मुझे लज्जा लग रही थी। मेरे साथ एक लड़की थी जिसे मैं अपनी पत्नी मानता था। कलकत्ता में पिताजी के प्रयत्न से नौकरी मिल गई और मैं यहां सुखपूर्वक निर्वाह कर रहा हूं। परन्तु मेरी मानी हुई पत्नी मेरा सब कुछ, यहां तक कि मेरे रात को घर में पहनने के स्लीपर भी, लेकर भाग गई है। पिताजी की सहायता से नौकरी पर हूं और आशा करता हूं कि पुनः घर बना लूंगा। मेरी पत्नी, जिसका नाम फातिमा था, और उसकी माता, जिसका नाम रहीमन था, दोनों ने मिलकर पिछले चार वर्ष में न केवल मेरे हिस्से का पौने चार लाख रुपया हड़प लिया है वरन् मेरी कराची की कमाई और कलकत्ता का प्राप्त वेतन से बचा सब कुछ भी लूट लिया है। उनके भागने के उपरान्त कुछ दिन तो पुनः पिताजी के घर खाने को मांगने जाना पड़ा था। बड़ी भाभी को इस कारण लिख रहा हूं कि अब मैं उस कलंक से रहित हो चुका हूं जिसके कारण घाटू नहीं आ सका था। यदि आप वे स्वीकृति दें तो एक मास का अवकाश लेकर उनकी सेवा के लिए आना चाहता हूं। बड़ी भाभी ने तब सहायता दी थी जब माता-पिता ने मुझे मकान से निकाल कर दिया था। बड़ी भाभी की सहायता और उनका सहानुभूतिपूर्ण पत्र देखकर ही पिताजी ने नौकरी ढूंढने में सहायता दी थी।"

रामेश्वरी ने इस पत्र का उत्तर नहीं दिया। शकुन्तला ने पूछा भी, "भाभी, सुधीर को कुछ लिखना है?"

"अब घाटू में [illegible] [illegible] उसको [illegible] के लिए बुला लूंगी। अभी तो मन [illegible] नहीं हुआ है।"

रामेश्वरी की [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] एक बार [illegible] किशोरी और [illegible] के बच्चों [illegible] घाटू आया था। [illegible] [illegible] और [illegible] के उपरान्त रामेश्वरी का [illegible] था, "[illegible]"

"भाभी, [illegible] है। [illegible]

अच्छी ही थी।"

"किसको चिट्ठी लिखा रही हो ?"

"जुग्गी को। जिनेवा से गजाधर का पत्र आया है कि वह हिन्दुस्तान लौट रहा है। मैं लिखा रही थी कि उसको एकदम यहां भेज दो।"

"मैं समझता हूं कि उसको तार दे दो। लिखो कि उसका बाबा चाहता है कि वह यहां आ जाए।"

"कुछ विशेष बात है जी!"

"विशेष तो नहीं। मैं अब जा रहा अनुभव करता हूं। वह क्या कहेगा कि उसको बिना सूचना दिए ही चल दिया हूं।

"यदि तुम कहो तो नहीं बुलाता। आखिर वह जीते जी तो आ नहीं सकेगा। और फिर आ भी सका तो मैं तो देख नहीं सकूंगा। मुझे तो अब तुम दोनों भी दिखाई नहीं देते।"

"और कुछ कष्ट भी है?" रामेश्वरी ने पूछा।

"केवल यह कि टांगों में शिथिलता है। यह सब प्रातः से ही आरम्भ हुआ है।"

"अच्छा, ठहरिए," रामेश्वरी ने सेठजी से कहा और फिर शकुन्तला से बोली, "तार का फार्म निकालो और जुग्गी को लिखो, 'बाबा बीमार हैं, चाहते हैं कि तुम लोग आ जाओ।'"

शकुन्तला ने सामने रखी संदूकची में से फार्म निकाला। तार लिख और नन्दू को पांच का नोट देकर एक्सप्रेस टेलीग्राम देने के लि भेज दिया।

बनवारीलाल की अवस्था बिगड़ती ही चली गई। पहले उस टांगों में से और फिर बांहों में से चेतना विलुप्त हुई। उसे खाट लिटा दिया गया। घर में रखी कस्तूरी-केसर दिया जाने लगा। इ उसने तीन दिन बिताए। जब जुग्गीमल बच्चों के साथ पहुंचा बड़े सेठ का केवल मस्तिष्क ही काम कर रहा था, अन्य सब अंग शि पड़ चुके थे।

जुग्गीमल ने पिताजी को आवाज़ दी तो उसके होंठ फड़ इससे अधिक संकेत नहीं मिला कि उसने अपने लड़के की आ सुनकर पहचाना है। काशीजी से आनेवालों के कुछ ही घं

उपरान्त बनवारीलाल ने प्राण त्याग दिए।

अगले दिन उनका संस्कार कर लोग घर लौटे तो गजाधर और लक्ष्मी भी वहां आ पहुंचे। वे बम्बई से सीधे काशीजी पहुंचे थे और वहां से खाटू के तार की बात सुन यहां चले आए थे।

अभी सेठजी का तेरहवां नहीं हुआ था कि रामेश्वरी ने घर-भर को प्रात:काल तीन बजे जगा दिया। घर के सब प्राणी भागे-भागे उसके कमरे में आए तो सेठानीजी को अपना बिस्तर भूमि पर लगाए लेटे देख विस्मय में रह गए। शकुन्तला समीप बैठी थी। उसने ही सबको बड़ी मां के कहने पर बुलाया था। जब ये लोग आए तो मां ने उनसे कहा, "बैठ जाओ और घड़ी में समय बताओ।"

जुग्गीमल ने जेब से घड़ी निकालकर बताया, "मांजी, साढ़े तीन बजे हैं।"

"अच्छा गीता का पाठ करो और सब चुपचाप सुनते रहो।"

चार बजते-बजते रामे[illegible] और फिर उसका सिर एक ओर को लुढ़क गय